रोगो व आपातकालीन स्थितियों में निवारण एवं प्रबंधन
Prevention and Management of Diseases & Emergency

सही फर्स्ट ऐड ही सही उपचार का आधार है
में प्रमाण पत्र – पाठ्यक्रम

भारतीय प्राथमिक चिकित्सा परिषद
FIRST AID COUNCIL OF INDIA

प्राथमिक चिकित्सा विशेषज्ञ डिप्लोमा कोर्स
(First Aid Specialist Diploma Course)

(प्राथमिक स्वास्थय विशेषज्ञो के लिये प्रशिक्षण कार्यक्रम)

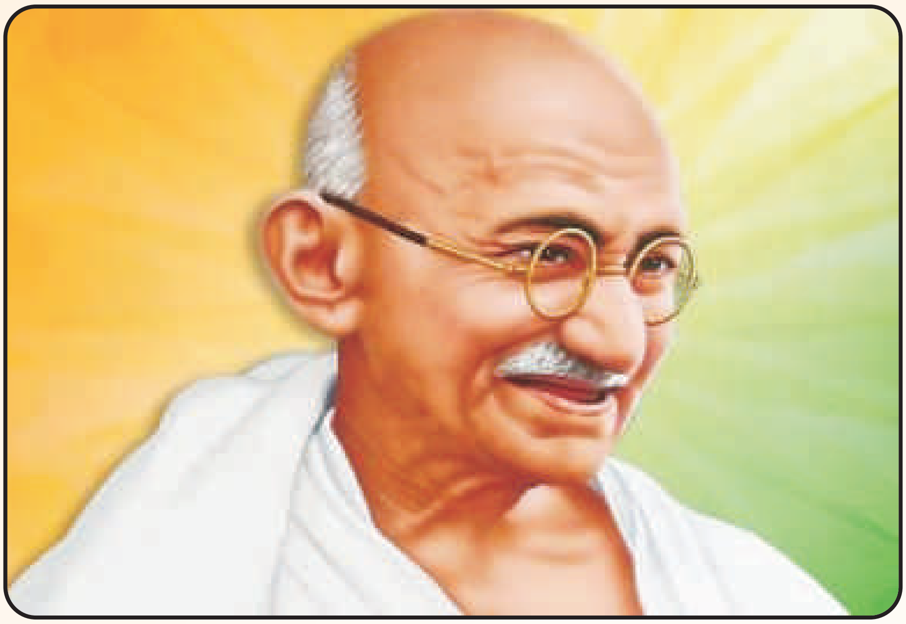

खुद में वो बदलाव
कीजिये
जो आप दुनिया में
देखना चाहते है

—— महात्मा गाँधी

इंसान बनो,
केवल नाम से नही,
रुप से नहीं,
शक्ल से नहीं,
हृदय से, बुद्धि से,
सरकार से, ज्ञान से।

—— भारतरत्न अटल बिहारी वाजपेयी

भारतीय प्राथमिक चिकित्सा परिषद
FIRST AID COUNCIL OF INDIA

प्राथमिक चिकित्सा विशेषज्ञ पत्रोपाधि पाठ्यक्रम

प्राथमिक चिकित्सा विशेषज्ञ के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम

रोगो व आपातकालीन स्थितियों में निवारण एवं प्रबंधन

सही फॅर्स्ट ऐड ही सही उपचार का आधार है

भारतीय प्राथमिक चिकित्सा परिषद

FIRST AID COUNCIL OF INDIA

एक स्वायत्त निकाय, कारपोरेट कार्य मंत्रालय, भारत सरकार की धारा 8 संस्था अधिनियम के अन्तर्गत पंजिकृत
ए.बी.वी.एच.वी (मध्य प्रदेश सरकार अधिनियम 2011 द्वारा स्थापित) के तहत कार्यकारी अध्यादेश में पारित
शासकीय आदेश राजपत्र संख्या क्रमांक 30 भाग–1 भोपाल शुक्रवार दिनांक 24 जुलाई 2020–श्रावण 2 शक् 1942 पृष्ठ आख्या 2831–32 मद् 2 द्विभाषिक प्रकाशित

प्रस्तावना

भारतीय प्राथमिक चिकित्सा परिषद उन सभी संस्थाओं जिन्हे राज्यों व केन्द्र सरकार द्वारा स्थापित किया गया हो तथा जिनके सहयोग व प्राथमिक उपचार हेतु राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पाठ्यक्रम को तैयार किया गया। भारत सरकार के गत 70 वर्षो में स्वास्थ्य व स्वास्थ्य सुरक्षा हेतु निरंतर समाज कल्याण हित में उठाए गए कदम व प्रयासों की सराहना करते हुए आभार व्यक्त करता है।

साथ ही कोरोना के संकटकाल में जिस प्रकार स्वास्थ्य संस्थाओं / चिकित्सको / संचालको / विभागों / कर्मचारियों द्वारा जनहित में अविसमरणीय तथा सहासी कार्यो को कुशलतापूर्वक देश के शहरी से लेकर ग्रामीण असहाय स्वास्थ्य से वंचित जातिय - जनजातिय समाज को जीवन संरक्षण हेतु बिना किसी भेदभाव के लाभान्वित करते हुए स्वास्थ्य क्षेत्र में एक पूनर्जागरण का निर्माण किया है तथा कोरोना प्राकृतिक संकट आपदा के कारण देश की गिरती हुई आर्थिक व्यवस्था के सशक्तिकरण हेतु आत्मनिर्भर भारत की संरचना / परिकल्पना को चरितार्थ करने हेतु निरंतर कार्यरत है।

रा0 मु0 वि0 शि0 स0 सलाहकार समिति पाठ्यक्रम लेखन / पाठ्यक्रम समन्वयन / पाठ्यक्रम संपादन / पाठ्यक्रम समिति द्वारा तैयार किए गए पाठ्यक्रम तथा रेड क्रॉस सोसाएटी व उन विदेशी संस्थाओं का भारतीय प्राथमिक चिकित्सा परिषद आभार व अनुग्रह व्यक्त करते हुए अतिहर्ष की अनुभुति का पात्र है क्योकि भारतीय प्राथमिक चिकित्सा परिषद (FACI) द्वारा संग्रहित पाठ्यक्रम में उपरोक्त संस्थाओं द्वारा तैयार पाठ्यक्रम के अति महत्वपूर्ण अंशो / ईकाईयों / खंडो को संग्रहित कर रोजगार / स्वरोजगार हेतु प्राथमिक चिकित्सा विशेषज्ञ डिप्लोमा पाठ्यक्रम प्रमाण पत्रोपाधि को संग्रहित कर तैयार किया गया है जिसको A.B.V.H.V. (राज्य अधिनियम 2011 द्वारा स्थापित) की कार्य परिषद दिनांक 28/02/2020 को अनुमोदित कर उपरोक्त पाठ्यक्रम के संचालन हेतु मान्यता प्रदान करते हुए अधिसूचना संख्या क्रमांक / अकादमी / अ.बि.व.हि.वि / 2020 / 1886 दिनांक 30/06/2020 को जनहित में जारी कर दिया गया है।

भारतीय प्राथमिक चिकित्सा परिषद उक्त पाठ्यक्रम का संचालन देश के प्रत्येक राज्य स्वास्थ्य सुरक्षा को ध्यान में रखते हुए राज्यानुसार अद्यतन / नवीनीकरण हेतु प्रस्तावित है तथा अपने उद्देश्य की पूर्ति हेतु तत्पर है जिसको विशेषज्ञो / अनुभवशील / कुशल व्यक्ति / संस्थाओं / सरकार (राज्य / केन्द्र / केन्द्रशासित प्रदेशों) के सहयोग द्वारा दिन-प्रतिदिन नवीनीकरण / समायोजन हेतु प्रस्तावित है। भारतीय प्राथमिक चिकित्सा परिषद (FACI) द्वारा स्वास्थ्य व जनहित में संग्रहित पाठ्यक्रम प्राथमिक चिकित्सा विशेषज्ञ पत्रोपाधि को बहुत सुझ-बूझ व समाज की आवश्यकता तथा वर्तमान स्थिति को ध्यान में रखते हुए सरकार व सरकारी संस्थाओं के सहयोग से जनहित में स्वास्थ्य कौशल व माननीय प्रधानमंत्री जी द्वारा कौशल योजना के सरलता - सुगमता पुर्वक संचालन हेतु आत्मनिर्भर भारत की परिकल्पना को चरितार्थ करते हुए प्राथमिक चिकित्सा व प्राथमिक उपचार के रोजगारोन्मुखी अवसरों को रोजगार व स्वरोजगार से जोड़ना तथा समाज के उस अछूते अंग को मुख्य धारा से जोड़ते हुए देश में उपलब्ध संसाधनो का बहुउद्देश्य उपयोग कर राष्ट्र अर्थव्यवस्था व स्वास्थ्य सुरक्षा को प्रोत्साहित करना तथा एक कुशल भारत का निर्माण करने हेतु जनहित में आयुर्वेद / युनानी / होम्योपैथी / सिद्ध वैकल्पिक एलोपैथिक आदिपेथियों द्वारा प्राथमिक उपचार हेतु संग्रहित है।

गांव–देहात की अहमियत

भारत एक ग्रामीण प्रधान देश है, जहां आज भी कुल आबादी की लगभग 70 से 75 प्रतिशत जनता गांव–देहातों में रहती है। इतनी बड़ी आबादी के लिए वहां महज 25–26 फीसदी डॉक्टर्स ही उपलब्ध हैं। दूसरी ओर हमारे देश के शहरों में कुल आबादी के लगभग 25–30 फीसदी लोग रहते हैं, जिनके लिए लगभग 74 फीसदी चिकित्सक उपलब्ध हैं। प्राथमिक चिकित्सा का महत्व इस बात से उजागर होता है कि शहरों में 20 हजार की आबादी पर औसतन 12 डॉक्टर हैं, तो वहीं गांवों में इनकी संख्या 3 डॉक्टरों तक सिमट जाती है।

साल 2019 में संसद में पारित राष्ट्रीय चिकित्सा आयोग विधेयक, में भारत में प्राथमिक स्वास्थ्य क्षेत्र की अत्यंत दयनीय स्थिति की तरफ इशारा किया गया है, जिसके अनुसार देश में जहां चिकित्सक–जनसंख्या अनुपात 0.76/1000 है और यह दुनिया में सर्वाधिक कम चिकित्सक–जनसंख्या अनुपात में से एक है।

इसी बात को ध्यान में रखते हुए भारतीय प्राथमिक चिकित्सा परिषद् (FACI), का मुख्य उद्देश्य केन्द्र सरकार की कौशल योजना के अंतर्गत सभी ग्रामीण, पिछड़े, असहाय, शिक्षा से वंचित समुदायों, आदिवासी जाति/जनजाति को प्राथमिक चिकित्सा प्रणाली से अवगत कराना है ताकि स्थानीय लोग स्वास्थ्य संबंधी महत्वपूर्ण बातों के प्रति जागरूक हो सकें। इसके साथ–साथ एफएसीआई, राष्ट्र स्वास्थ्य सुरक्षा में भी अपना योगदान देकर समाज के अछूते और पिछड़े वर्ग को मुख्य धारा से जोड़ने का ध्येय रखता है।

प्राथमिक उपचार (First Aid) का इतिहास

किसी भी घायल व्यक्ति या रोगी को आपातकालीन स्थिति में सबसे पहले दिये जाने वाले उपचार को दुनियाभर में फर्स्ट एड (First Aid) यानी प्राथमिक चिकित्सा के नाम से जाना जाता है। वैसे इससे कुछ मिलते–जुलते मूल उद्देश्यों के साथ प्राथमिक चिकित्सा का इतिहास सदियों पुराना है। इसकी शुरूआत युद्ध में घायल सैनिकों की सहायता और पानी में डूबकर मरने वालों को बचाने की मुहिम के रूप में सामने आती है।

प्राथमिक चिकित्सा के जनक फ्रेड्रिक वॉन एस्मार्च

प्राचीन रोमन सेना के संदर्भों में युद्ध के दौरान फर्स्ट एड (First Aid) के जिक्र और अमल में लाए जाने के विवरण मिलते हैं, जिनमें शल्य चिकित्सक (Surgeon), रोगी ले जाने वाले वाहन और अस्पतालों द्वारा समर्थित इस प्रणाली को अपनाने पर रौशनी डाली गयी है। लेकिन प्रमाणिक तौर पर इस पद्धति का ज़िक्र हमें 18वीं सदी के अंत में मिलता है, जब बड़े पैमाने पर लोगों की मौत पानी में डूब जाने से हो जाती थी। प्राचीन रोमन सेना के संदर्भों में युद्ध के दौरान फर्स्ट एड (First Aid) के ज़िक्र और अमल में लाए जाने के विवरण मिलते हैं, जिनमें शल्य चिकित्सक (Surgeon), रोगी ले जाने वाले वाहन और अस्पतालों द्वारा समर्थित इस प्रणाली को अपनाने पर रौशनी डाली गयी है। लेकिन प्रमाणिक तौर पर इस पद्धति

का जिक्र हमें 18वीं सदी के अंत में मिलता है, जब बड़े पैमाने पर लोगों की मौत पानी में डूब जाने से हो जाती थी।

इसी के मद्देनजर जीवन संरक्षण हेतु सन 1767, एम्स्टर्डम में एक सामाजिक मुहिम छेड़ी गयी और फिर 1773 में चिकित्सक विलियम हॉज ने डूबने से बचाव के लिए कृत्रिम श्वसन प्रणाली पर खासा जोर दिया, जिसे आगे जाकर रॉयल ह्यूमन सोसाइटी द्वारा जीवन संरक्षण हेतु पुरजोर समर्थन मिला। इसी कड़ी में नेपोलियन बोनापार्ट के खास माने जाने वाले फांसिसि सर्जन, डॉमिनिक जीन लैरी का भी जिक्र आता है, जिन्हें सन 1811 में युद्ध क्षेत्र में एम्बुलेंस कोर (घोड़े की बघ्घी वाली) और प्राथमिक चिकित्सा का जिम्मा सौंपा गया था। उसी दौर में सन 1859 में एक स्विस व्यापारी और सामाजिक कार्यकर्ता जीन हेनरी ड्यूनेन्ट को इटली में सॉलफेरिन की लड़ाई के अनुभव रेडक्रास की स्थापना की वजह बने।

लेकिन सही मायने में प्राथमिक चिकित्सा की अवधारणा की नींव रखने का श्रेय प्रशा (जर्मन साम्राज्य) के सैन्य सर्जन, फ्रेड्रिक वॉन एस्मार्च को जाता है, जिन्होंने सन 1870 में औपचारिक रूप से फ्रांसिसि–जर्मन युद्ध के लिए सैनिकों को प्राथमिक चिकित्सा (erste hilfe, एर्स्ट हिल्फ के नाम से जिसका अर्थ First Aid होता है) प्रशिक्षण देने की शुरूआत की, ताकि युद्ध के दौरान घायल सैनिकों की तुरंत चिकित्सीय मदद मुहैया कराई जा सके।

डॉ. एस्मार्च की गिनती 19वीं सदी के बेहद महत्वपूर्ण शल्य चिकित्सकों में की जाती है। ये भी कहा जाता है कि एस्मार्च के फर्स्ट एड के विचार और उनके भाषणों की परिकल्पना के आधार पर सन 1877 में इंग्लैंड में सेंट जोंस एम्बुलेंस संगठन की स्थापना की गयी थी और इस तरह प्राथमिक चिकित्सा/सहायता की अवधारणा को दुनिया के सामने लाया जा सका।

प्राथमिक सहायता

परिभाषा

प्राथमिक का शाब्दिक अर्थ होता है 'सर्वप्रथम' यानी सबसे पहले और चिकित्सीय भाषा में इसे तत्काल (आवश्यक तौर पर) के साथ भी जोड़कर देखा जाता है। इसलिए किसी बीमार या घायल व्यक्ति को अस्पताल ले जाने से पहले डॉक्टरी मदद मिलने तक दी जाने वाली सर्वप्रथम और तत्काल चिकित्सा को प्राथमिक चिकित्सा/उपचार या सहायता कहते हैं। यह सहायता कोई ऐसा व्यक्ति दे सकता है, जो प्राथमिक चिकित्सा के बारे में जानकारी रखता हो। कई अनुभवी चिकित्सक भी ऐसा मानते हैं कि कई अलग–अलग तरह की आपातकालीन स्थितियों में सही तरीके से दी गयी प्राथमिक सहायता घायल/पीड़ित/मरीज की जान बचा सकती है।

उद्देश्य

प्राथमिक चिकित्सा की मूल भावना बिना देरी किए पीड़ित को तत्काल राहत पहुंचाने से लेकर उसकी हालत बिगड़ने से रोकने और जीवन संरक्षण के लिए यथासंभव कोशिश करने से है, जो इसके उद्देश्यों को निम्न बिंदुओं द्वारा स्पष्ट करती है।

★ प्राथमिक सहायता का सबसे पहला उद्देश्य पीड़ित/घायल/बीमार व्यक्ति का जीवन बचाना है।

★ पीड़ित/रोगी की हालत को और ज़्यादा बिगड़ने से रोकने का प्रयास करना।

★ उसकी तकलीफ और दर्द को संभव तरीकों से कम करने का प्रयास करना।

★ पीड़ित की हालत सुधारने में सहायता करना।

★ यदि प्राथमिक चिकित्सा (First Aid) के बाद भी अस्पताल ले जाना जरूरी हो, तो उसे बिना देरी किए सुरक्षित ढंग से किसी नजदीकी अस्पताल ले जाने की व्यवस्था करना।

★ पीड़ित की घबराहट को दूर कर उसे हौंसला देना और उसकी स्थिति को और अधिक बिगड़ने से रोकना।

प्राथमिक सहायता, याद रखें हमेशा ये सुनहरे नियम

प्राथमिक सहायता के ये सुनहरे नियम किसी भी स्थिति में नहीं भूलने चाहिए। याद रखें कि आपातकालीन स्थिति में पीड़ित को प्रथम सहायता और उपचार प्रदान करने के साथ–साथ धैर्य, सूझबूझ, कौशल और हिम्मत की भी दरकार होती है।

1. प्राथमिक सहायता देने वाले व्यक्ति को घटना स्थल पर जल्दी से जल्दी पहुंचना चाहिए।
2. पीड़ित की मदद/सहायता/राहत पहुंचाने के लिए सभी आवश्यक कार्यों को शांतिपूर्ण ढंग से बिना हड़बड़ाहट के पूरी सूझबूझ और ज़िम्मेदारी से पूरा करें।
3. यह बेहद जरूरी है कि प्राथमिक सहायता देने वाला व्यक्ति किसी भी स्थिति में अपना सयंम बनाए रखे और बिना जल्दबाज़ी और घबराहट के अपने सभी कार्य धैर्यपूर्वक करे।
4. यदि पीड़ित की सांस रुक गयी है, तो कृत्रिम सांस देकर उसकी सांसे फिर चलाने का प्रयास करना चाहिए।
5. खून बहने की स्थिति में घायल को टेढ़ा लिटा दें, ताकि शरीर से बहता खून बाहर की ओर निकल जाए न कि शरीर के अंदर वापस जा पाए।
6. पीड़ित की मदद/सहायता के लिए उसे जरूरत से ज्यादा हिलाने–डुलाने या किसी प्रकार के अनावश्यक प्रयास से बचें।
7. एक प्राथमिक सहायक को उपचार के लिए घटना स्थल पर मौजूद संसाधनों के इस्तेमाल पर ही जोर देना चाहिए। उदाहरण के लिए यदि मौके पर पट्टी–रूई आदि उपलब्ध ना हो, तो साफ कपड़े आदि का प्रयोग करना चाहिए।

8. घायल/पीड़ित के रक्त प्रवाह का भी ध्यान रखें। खून ज्यादा न बहे और अगर पीड़ित होश में है तो उसे धीरे–धीरे थोड़ी–थोड़ी मात्रा में तरल पदार्थ पिलाते रहें।

9. पीड़ित को हमेशा किसी समतल, सुरक्षित, हवादार और आरामदायक स्थान पर लिटाएं।

10. कमरे में घुटन हो तो खिड़कियां दरवाजे खोल दें या उसे खुली जगह पर ले जाएं।

11. पीड़ित व्यक्ति के परिजनों/संबंधियों को दुर्घटना/बीमारी और दुर्घटना स्थल के बारे में ठीक से सूचित करें।

12. प्रभावित व्यक्ति को नज़दीकी अस्पताल ले जाने की व्यवस्था करें।

13. पीड़ित/प्रभावित व्यक्ति के आस–पास अनावश्यक लोगों की भीड़ इकट्ठी ना होने दें और केवल उन्हीं लोगों को पास आने दें जो प्राथमिक सहायता की जानकारी रखते हों या मदद कर सकते हों।

14. उपचार के साथ–साथ पीड़ित की हिम्मत बंधाते हुए उसे भावनात्मक सुरक्षा प्रदान करें।

प्राथमिक सहायता के सिद्धांत

मूल रूप से प्राथमिकता सहायता के पांच सिद्धांत हैं – जीवन बचाना, पीड़ित को और अधिक नुकसान होने बचाना, पीड़ित को दर्द से राहत दिलाना, पीड़ित की चोट या बीमारी को बुरी हालत में पहुंचने से बचाना और उसे आश्वासन देना। लेकिन मौजूदा दौर में आपातकालीन/आपदा ग्रस्त परिस्थितियां एवं आवश्यकताएं इन सिद्धांतों की नई परिभाषा के व्यापक विस्तार की तरफ इशारा करती हैं, जिन्हें हम निम्न बिन्दुओं द्वारा जान सकते हैं।

जीवन बचाना

- घबराए बिना तेज़ी से काम करना।
- रोगी के आस–पास भीड़ न लगने देना।
- रोगी के बारे में या उसकी किसी पूर्व बीमारी के बारे में यथासंभव जानकारी जुटा कर उसे कुशलतापूर्वक संभालना।
- पीड़ित का उपचार करते समय उसका विश्वास हासिल करना बेहद जरूरी है।

अधिक नुकसान से बचाना

- चोट लगने या बीमारी के प्रारंभिक कारण जानने की कोशिश करना।

- दुर्घटनास्थल का निरीक्षण करना।
- चोट/रोग की सटीक जानकारी इकट्ठा करके तनावपूर्ण स्थिति को संभालना और व्यक्ति की हालत और खराब होने से बचाना।

दर्द में राहत पहुंचाना

- पीड़ित को पूरा इलाज मिलने से पहले फौरी तौर पर दर्दनिवारक दवाओं की मदद से दर्द से राहत पहुंचाना।
- अनावश्यक उपचार न करना।
- यदि पीड़ित पहले से कोई दवा इत्यादि ले रहा हो तो उससे इसकी पुष्टि कर लेना।
- उपलब्ध दवा से बेहतर प्राथमिक उपचार और स्वंय के कौशल से पीड़ित को संभालना।

चोट/बीमारी को बुरी हालत से बचाना

- पीड़ित की सांस, नब्ज और रक्त प्रवाह की जांच करना।
- मदद पहुंचने से पहले उपलब्ध साधनों और अपनी सूझबूझ का इस्तेमाल करना।
- यदि दुर्घटना के कारण वहीं मौजूद हों तो उन्हें हटाने की कोशिश करना।
- पीड़ित को सहायता देते समय खुद को भी किसी दुर्घटना से बचाना।

आश्वासन देना

- जल्दबाजी और तनाव में पीड़ित व्यक्ति से दुर्व्यवहार ना करना।
- स्थिति नियंत्रण में आने तक हर समय पीड़ित/रोगी के साथ रहना।
- उसकी चोट या बीमारी को लेकर असंवेदनशील बात न करना।
- पीड़ित के परिजनों को हौंसला देना और ढांढस बंधाना।

कौन होता है प्रथम सहायक

फर्स्ट ऐडर (First Aider) यानी प्रथम सहायक उस व्यक्ति को कहते हैं, जो किसी घायल या रोगी को सबसे पहले चिकित्सीय सहायता/मदद पहुंचाता है और पीड़ित के जीवन संरक्षण हेतु हर संभव प्रयास कर सुरक्षा प्रदान करने के साथ–साथ अधिक नुकसान होने से बचाता है।

दरअसल, एक प्रथम सहायक संकट की स्थिति में पीड़ित व्यक्ति के लिए किसी हीरो से कम नहीं होता, जिसे प्राथमिक सहायता की सभी तकनीकों और उनके सही इस्तेमाल की पूरी जानकारी होती है। इसके लिए प्राथमिक सहायक को रोगियों तक बिना समय गंवाए पहुंचने, स्थिति को समझने और हालात के हिसाब से आपात सहायता देने का प्रशिक्षण दिया जाता है। एक प्राथमिक सहायक बिना देरी किये रोगी को सुरक्षित ढंग से अस्पताल ले जा सकता है और उसका जीवन बचा सकता है।

प्रथम सहायक की जिम्मेदारियां

मोटे तौर पर एक प्रथम सहायक की ज़िम्मेदारियां तीन महत्वपूर्ण बिंदुओं, जैसे– सुरक्षा, संकट के कारण और परिस्थितियों का जायज़ा लेने के आस–पास केन्द्रित रहती है। घटना स्थल या पीड़ित के पास पहुंचने के बाद सबसे पहले उसे इन्हीं तीन बातों पर ध्यान देना होता है और बिना देरी किए मौके पर ही तुरंत निर्णय लेते हुए हरकत में आना होता है। एक प्रथम सहायक की ज़िम्मेदारियां निम्न बातों द्वारा विस्तारपूर्वक परिभाषित की गई हैं।

1. घटनास्थल का निरीक्षण कर दुर्घटना के संभावित कारणों और स्थिति का अनुमान लगाना।
2. पीड़ित की चोट या रोग के विषय में जानकारी हासिल करके संभावित हालातों के बारे में पता लगाना।
3. पीड़ित को बिना अतिरिक्त कष्ट पहुंचाए सरल और सुरक्षित तरीके से उसे प्राथमिक उपचार प्रदान करना।
4. प्राथमिक सहायता देने से पहले यह जांचना कि रोगी होश में है या बेहोश है।
5. जरूरत पड़ने पर दुर्घटना–स्थल के आस–पास खड़े लोगों से मदद लेना। उदाहरण के लिए उनसे यातायात नियंत्रित करने के लिए कहा जा सकता है, एम्बुलेंस बुलाने के लिए अस्पताल फोन करने को कहा जा सकता है, पास कि किसी दुकान से पानी–दवा या पट्टी लाने को कहा जा सकता है तथा पीड़ित के परिजनों को सूचित करने के लिए कहा जा सकता है।
6. पीड़ित की स्थिति की गंभीरता के हिसाब से जल्द से जल्द उसे चरणबद्ध तरीके से प्राथमिक उपचार प्रदान करना। जैसे कि सबसे पहले सांस और खून के प्रवाह को सामान्य करना और यदि खून बह रहा हो तो उसे फौरन रोकने की कोशिश करना।
7. यदि दुर्घटना स्थल पर एक से अधिक पीड़ित हैं, तो उनकी स्थिति की गंभीरता के आधार पर प्राथमिक उपचार उपलब्ध कराना। मसलन ज्यादा गंभीर स्थिति वाले मरीजों को पहले उपचार देना।

8. बिना समय गंवाए पीड़ित को निकटतम अस्पताल या डॉक्टर के पास लेकर जाने की या स्थिति के हिसाब से पीड़ित को उसके घर पहुंचाने की व्यवस्था करना।

9. जब तक किसी जिम्मेदार और समझदार व्यक्ति को रोगी की जिम्मेदारी ना सौंप दी जाये, तब तक रोगी के साथ ही रहना।

10. रोगी तथा उसके साथ घटित घटना का पूरा ब्यौरा रखना और साथ ही घटना स्थल पर मौजूद प्रत्यक्षदर्शियों के बारे में जानकारी रखना। क्योंकि कई बार यह जानकारी बहुत महत्वपूर्ण साबित होती है। खासतौर पर पुलिस और जांच एजेंसी घटना का विवरण मांग सकती हैं।

11. रोगी को अस्पताल पहुंचा कर उसके परिजनों को सूचित करना।

प्रथम सहायक के लिए आवश्यक दिशा–निर्देश

जीवन संरक्षण एवं जीवन रक्षक प्रणाली से जुड़े कुछ अन्य क्षेत्रों की ही तरह संपूर्ण चिकित्सा क्षेत्र तथा उससे संबंधित प्रथम उपचार प्रणाली भी आवश्यक दिशा–निर्देशों, नियमों और महत्वपूर्ण बातों के पालन करने हेतु प्रतिबद्ध होती है। प्राथमिक चिकित्सा नियमावली के अनुसार एक प्रथम सहायक (First Aider) को भी निर्देशित आवश्यक दिशा–निर्देशों का पालन करना चाहिये, जो इस प्रकार हैं।

- ★ प्रथम सहायक को यह कभी नहीं भूलना चाहिए कि वह प्रमाणिक तौर पर डॉक्टर नहीं है। इसलिए उसे कभी कोई ऐसा उपचार प्रयोग में नहीं लाना चाहिए, जिससे मरीज को और अधिक नुकसान पहुंचे।
- ★ अगर प्रथम सहायक के घटना स्थल पर पहुंचने से पहले किसी अन्य व्यक्ति ने पीड़ित या हताहत व्यक्ति की चोट पर पट्टी बांधी हुई है या आघात की स्थिति में उसे कोई उपचार पहले से दिया गया है तो उसे वह पट्टी खोलकर नहीं देखना चाहिए, साथ ही आघात के लिए दिए गये उपचार पर प्रश्न उठाने के बजाए उसके महत्व/जरूरत को समझना चाहिये।
- ★ यदि पीड़ित की चोट गंभीर हैं तो शरीर से बाहर निकले किसी अंग को उसकी वास्तविक स्थिति में लाने का प्रयत्न नहीं करना चाहिए।
- ★ चाहे स्थिति कितनी ही गंभीर क्यों न हो, प्राथमिक सहायक के पास किसी व्यक्ति को मृत घोषित करने का अधिकार नहीं होता।

प्रथम सहायक के गुण

यह समझना बेहद जरूरी है कि एक समान उद्देश्यों, लक्ष्यों और नियमों के अंतर्गत अपनी जिम्मेदारियों को निभाने के बावजूद हर प्रथम सहायक अपनी काबिलियत और खूबियों के चलते प्रत्येक से अलग होता है। प्राथमिक सहायता और उपचार उपलब्ध कराने के साथ–साथ प्रत्येक प्रथम सहायक को हर घटना के साथ खुद को पहले से बेहतर, जिम्मेदार, दयालु, कर्मठ और साहसी बनाने का प्रयास करना चाहिये।

★ निपुण (**Tactful**) : एक प्रथम सहायक को बड़ी ही निपुणता के साथ पीड़ित/रोगी को प्रथम चिकित्सा प्रदान करने में सक्षम होना चाहिये।

★ निरीक्षक (**Observant**) : एक प्रथम सहायक में विपरीत परिस्थितियों में भी सटीकता के साथ पीड़ित की चोटों का निरीक्षण करने तथा उसके रोग के कारणों का पता लगाने हेतु निरीक्षण क्षमता होनी चाहिये।

★ सूझ – बूझ वाला (**Resourceful**) : एक प्रथम सहायक में मौके की स्थिति को अच्छी तरह से समझकर वहां उपलब्ध साधनों के आधार पर रोगियों/प्रभावितों को तुंरत मदद या उपचार मुहैया कराने की सूझबूझ अवश्य होनी चाहिए।

★ स्पष्ट (**Explicit**) : प्रत्येक प्रथम सहायक में यह गुण अवश्य होना चाहिये कि वह आपातकालीन परिस्थिति में पीड़ित के साथ–साथ अपने सहयोगियों को भी स्पष्टता के साथ सही दिशा–निर्देश दे सके और स्थिति को संभाले।

★ आत्मविश्वासी (**Confident**) : एक प्रथम सहायक में इतना आत्म–विश्वास जरूर होना चाहिए कि हालात जो भी हों, वह संयमित होकर काम कर सके, साथ ही यह योग्यता भी कि वह स्थिति के अनुसार पीड़ित की मदद कर सके।

मूल सिद्धांत और 6 नियम

1. यदि घायल व्यक्ति अपने आप सांस न ले पा रहा हो तो उसे मुंह से हवा देना।
2. उसकी छाती पर अपनी हथेलियों से दबाव देकर हृदय में धड़कन पैदा करना, ताकि खून का संचार फिर से शुरू हो सके।
3. शरीर को ऑक्सीजन की आपूर्ति रक्त द्वारा ही होती है। इसलिए दूसरा चरण काफी महत्वपूर्ण होता है।
4. सीपीआर (CPR) द्वारा किसी का जीवन बचाने की सफलता दर हालांकि 3 फीसदी ही होती है, लेकिन यह 10 फीसदी से तो काफी अच्छी है।
5. यदि पीड़ित को चोट लगते ही प्राथमिक रूप से दवा और उपचार मिल जाता है तो उसके जीवित रहने के अवसर बढ़ जाते हैं।
6. हालांकि ज्यादा दबाव डालने से पीड़ित की छाती की पसलियां टूट सकतीं हैं, लेकिन यदि सीपीआर विधि ना अपनाई जाए तो उसकी जान भी जा सकती है।

अध्यक्ष संदेश

भारतीय प्राथमिक चिकित्सा परिषद् (FACI) एक ऐसी स्वतंत्र निकाय संस्था है, जिसकी स्थापना कॉरपोरेट कार्य मंत्रालय, भारत सरकार की धारा 8, संस्था अधिनियम के अंतर्गत पंजीकृत, भारत सरकार के अधिनियम के तहत की गयी है। भारतीय प्राथमिक चिकित्सा परिषद् (FACI) एक ऐसी युवा पीढ़ी की रचना करने के प्रति कार्यरत है जो मजबूत व्यक्तित्व के साथ रोजगार–कौशल और चरित्रिक दृष्टि से भी विश्वस्तरीय हो।

किसी भी घायल व्यक्ति या रोगी को आपातकालीन स्थिति में सबसे पहले दिये जाने वाले उपचार को दुनियाभर में फर्स्ट एड (First Aid) यानी प्राथमिक चिकित्सा के नाम से जाना जाता है। वैसे इससे कुछ मिलते–जुलते मूल उद्देश्यों के साथ प्राथमिक चिकित्सा का इतिहास सदियों पुराना है। इसकी शुरूआत युद्ध में घायल सैनिकों की सहायता और पानी में डूबकर मरने वालों को बचाने की मुहिम के रूप में सामने आती है।

प्राथमिक का शाब्दिक अर्थ होता है 'सर्वप्रथम' यानी सबसे पहले और चिकित्सीय भाषा में इसे तत्काल (आवश्यक तौर पर) के साथ भी जोड़कर देखा जाता है। इसलिए किसी बीमार या घायल व्यक्ति को अस्पताल ले जाने से पहले डॉक्टरी मदद मिलने तक दी जाने वाली सर्वप्रथम और तत्काल चिकित्सा को प्राथमिक चिकित्सा/उपचार या सहायता कहते हैं। यह सहायता कोई ऐसा व्यक्ति दे सकता है, जो प्राथमिक चिकित्सा के बारे में जानकारी रखता हो। कई अनुभवी चिकित्सक भी ऐसा मानते हैं कि कई अलग–अलग तरह की आपातकालीन स्थितियों में सही तरीके से दी गयी प्राथमिक सहायता घायल/पीड़ित/मरीज की जान बचा सकती है।

भारतीय प्राथमिक चिकित्सा परिषद् (FACI) आशा करता है कि इसकी सफलता देश की सभी राज्य सरकारों को प्रेरित करेगी और विज्ञान की सभी शाखाओं में विभिन्न भारतीय भाषाओं के माध्यम से प्राथमिक चिकित्सा ज्ञान की उच्चतम शिक्षा छात्रों को मुहैया कराने की दिशा में पहल करेंगीं।

दरअसल, भारतीय प्राथमिक चिकित्सा परिषद् (FACI) की परिकल्पना ऐसे विश्वस्तरीय मानकों के निर्माण एवं विकास की है, जिनके आधार पर देश की चिकित्सा प्रणाली में नये अध्ययन, अध्यापन के साथ–साथ शोध क्षमता को भी विस्तार मिले और छात्रों के लिए सीखने के नये अवसर सुलभ हो सकें।

स्वास्थ्य कार्यकर्ता क्या करें !

1. रोगों को ठीक से समझें और चिकित्सा क्षेत्र या अस्पताल में चिकित्सक के निरन्तर सम्पर्क में रहते हुए ज्ञान की अभिवृद्धि करते रहें।

2. रोगों की रोकथाम के उपायों का स्वयं पालन करें तथा लोगों को उसके बारे में बताएं।

3. चिकित्सा–विज्ञान से भिन्न झाड़–फूँक आदि अंधविश्वास की परम्पराओं की वास्तविकता उजागर करें।

4. स्वास्थ्य–रक्षा के बुनियादी नियमों के बारे में लोगों को बताएं। नशा आदि से स्वयं को दूर रखें तथा लोगों को उससे होने वाले नुकासन के बारे में बताएं।

5. आप चिकित्सा कार्य में सहायक हैं, अतः आपको अपने चिकित्सीय संस्थान या समाज में सामुदायिक स्वास्थ्य कार्यकर्ता के रूप में चिकित्सा सहायक की भूमिका निभाएं।

6. प्रशिक्षित स्वास्थ्य कार्यकर्ता, रोगी की बहुत सहायता कर सकते हैं किन्तु गम्भीर व जटिल बीमारियों में चिकित्सक की सलाह पर ही कार्य करें।

7. आप स्वास्थ्य सेवा के क्षेत्र में हैं – निःस्वार्थ भाव से लोगों की सेवा करें। इससे आपको अपेक्षित पैसा और प्रतिष्ठा दोनों मिलेंगे।

8. प्रसव और सर्जरी जटिल विद्याएं हैं उसमें गहन अनुभव और अध्ययन की आवश्यकता पड़ती है– अतः सर्जरी करने वाले चिकित्सकों की सहायता करें।

9. पहले किसी व्यक्ति के खान–पान, रहन–सहन व जीवन शैली का सम्यक अध्ययन करें उसके पश्चात् ही उसे स्वास्थ्य सम्बंधित सलाह दें।

10. स्वास्थ्य कार्यकर्ता आपातकालीन परिस्थितियों में प्राप्त प्रशिक्षण के अनुरूप रोगी को तुरंत प्राथमिक चिकित्सा प्रदान करें, यदि आवश्यक हो तो तुरन्त सम्बंधित चिकित्सक के पास रोगी को रेफर करें।

स्वास्थ्य कार्यकर्ता क्या नहीं करें !

1. रोगों को आधा–अधूरा समझकर, जल्दबाजी में चिकित्सा कार्य आरम्भ न करें। चिकित्सक से निरन्तर परामर्श लेते रहें।

2. रोकथाम के नियमों का उल्लंघन न करें।

3. चिकित्सा–विज्ञान में सिखाये गये उपायों से अलग अंध–पद्धतियों का उपचार–क्रम में इस्तेमाल न करें।

4. नशा एवं अन्य स्वास्थ्य की हानिकारक चीजों के बारे में लोगों को जागरूक करने में पीछे ना रहें।

5. स्वयं चिकित्सक न बने – क्योंकि उसके लिए अधिक अध्ययन और अनुभव की जरूरत है। इस भ्रम में भी न पड़ें कि हम बहुत कुछ जान गए हैं। आप सामुदायिक स्वास्थ्य कार्यकर्ता के उत्तरदायित्व का निर्वहन करें।

6. रोगी की गंभीर हालत में चिकित्सक की बिना सलाह के दवा या इन्जेक्शन न दें। ये मरीज और आपकी प्रतिष्ठा दोनों के लिए घातक हो सकता है।

7. कोई ऐसा काम न करें जिससे स्वास्थ्य–सेवा कलंकित हो।

8. खुद असाधारण प्रसव या सर्जरी करने का प्रयास न करें– इससे मरीज की जान जोखिम में पड़ सकती है।

9. बिना जानकारी के अनुपयुक्त सलाह न दें। यह ध्यान रहे।

10. स्वास्थ्य कार्यकर्ता प्राप्त प्रशिक्षण की सीमा से हटकर चिकित्सा कार्य ना करें।

विषय सूची

पाठ सं.	पाठ का नाम	पृष्ठ सं.
1	संक्रामक रोग – 1	1–26
2	संक्रामक रोग – 2	27–61
3	रोकथाम के उपाय	62–80
4	प्राथमिक उपचार	81–100
5	जीवन शैली संबंधित रोग	101–120
6	औषधि विज्ञान एवं औषधीय प्रतिक्रियाएँ	121–131
7	आपातकालीन स्थितियों का प्रबंधन	132–148

1

संक्रामक रोग–1

अभी तक आपने पिछले दो माड्यूल में आधारभूत जीव विज्ञान तथा मातृत्व एवम् बाल स्वास्थ्य की देखभाल से सम्बन्धित विषयों के बारे में पढ़ा।

अब इस माड्यूल में हम रोगों एवम् आपात स्थितियों का निवारण व प्रबन्धन के बारे में चर्चा करेंगे।

रोगग्रस्त तो सभी प्राणी होते हैं, पर क्या कभी आपने गौर किया है कि विभिन्न रोग अलग–अलग समय में होते हैं। जैसे कि बरसात तथा गर्मी में हैजा, अतिसार, पोलियो, डेंगू, मलेरिया आदि। हमारे घर–द्वार तथा आसपास की गन्दगी से भी रोग फैलते हैं। इन रोगों का नियंत्रण अति आवश्यक है, नहीं तो यह महामारी का रूप भी ले सकते हैं। इस पाठ में हम इन्हीं बातों का अध्ययन करेंगे कि संक्रामक रोग क्या हैं, व कितने प्रकार के हैं, तथा इन्हें फैलने में कौन–कौन से कारक सहायक हैं। इसके अतिरिक्त इस पाठ में हम इन रोगों की रोकथाम के बारे में भी जानेंगे।

उद्देश्य

इस पाठ के अध्ययन के पश्चात आपः

- संक्रामक रोग एवं उनके संचरण के बारे में समझा सकेंगे;

टिप्पणी

- प्रमुख संक्रामक रोगों को पहचान सकेंगे;
- इनके उपचार तथा रोकथाम के उपायों का वर्णन कर सकेंगे;
- सरकार के द्वारा चल रहे संबंधित कार्यक्रमों का उल्लेख कर सकेंगे तथा उनके लाभ प्राप्त करने के विषय में बता सकेंगे ?

1.1 संक्रामक रोग

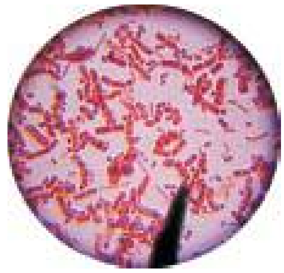

चित्र 1.1: संक्रामक रोग के जीवाणु

आप ने कभी गौर किया कि शहर में या आपके आस–पास के कुछ लोग किसी खास समय/मौसम में एक ही प्रकार के रोग से ग्रस्त हो रहे हैं। ऐसे रोगों को संक्रामक रोग कहते हैं।

संक्रामक रोग उन बीमारियों को कहते हैं जो सूक्ष्म जीवाणुओं के माध्यम से एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति में फैलते हैं। ये जीवाणु नंगी आँखो से दिखाई नहीं देते हैं तथा हवा, पानी, भोजन तथा आपसी संपर्क से फैलते हैं। इसके अलावा अन्य दूसरी बीमारियों को असंक्रामक रोग कहते हैं।

संक्रामक रोग कैसे फैलते हैं?

संक्रामक रोग कई तरीकों से फैलते हैं। इनके तरीके तथा कुछ सामान्य (Common) बीमारियों के नाम नीचे दिये जा रहे हैं –

(1) आपसी संपर्क से होने वाले संक्रामक रोग – ये वे बीमारियाँ हैं जो त्वचा के संपर्क से, वस्त्र के संपर्क से या यौन–संबंधों से फैलते हैं। यौन रोग जैसे– सिफिलिस, गोनोरिया, एड्स, सुजाक आदि। अन्य रोग जैसे – लॅप्रोसी (कुष्ठ रोग), कलकल (स्कर्वी), चिकेन पॉक्स, आदि।

(2) हवा के द्वारा फैलने वाले संक्रामक रोग (Air-borne Diseases) – साँस और मुँह से बहुत से संक्रमण एक व्यक्ति से दूसरे तक फैलते हैं। जैसे टी.बी. (तपेदिक), खसरा, सर्दी–जुकाम, डिप्थीरिया आदि। कभी–कभी ये महामारी का रूप ले लेते हैं– जैसे– इन्फ्लुएंजा आदि। ऐसे वायरस या बैक्टीरिया व्यक्ति के श्वासोच्छवास के साथ बाहर निकलते हैं और दूसरे व्यक्ति के नाक या मुँह के रास्ते उनके शरीर मे संक्रमित हो जाते हैं।

(3) दूषित जल द्वारा फैलनेवाली संक्रामक बीमारियाँ (Water borne Diseases) –

बहुत से ऐसे संक्रामक रोग हैं जो संक्रमित जल द्वारा एक व्यक्ति से दूसरे तक फैलते हैं। ध्यान रहे इनमें वे बीमारियाँ नहीं हैं जो जल में घुलनशील विषैले रसायनों द्वारा उत्पन्न होती हैं। इनमें बहुत सी बीमारियाँ स्थानीय स्तर तक ही सीमित रहती हैं पर कभी–कभी वे महामारी का रूप भी ले लेती हैं। जैसे–कॉलरा (हैजा), टाइफॉइड (मियादी बुखार), डायरिया (अतिसार), पोलियो, हेपिटाइटिस–ए (जौंडिस–पीलिया), आदि।

टिप्पणी

(4) मृदा–जन्य संक्रमण (Soil - borne diseases) – मिट्टी के माध्यम से फैलने वाली बीमारियाँ– व्यक्ति जब पैर या हाथ से मिट्टी के सम्पर्क में आता है तो उसमें मौजूद परजीवी या बैक्टीरिया उसके शरीर में प्रवेश कर जाते हैं। इसके उदाहरण में हम टेटनेस, राउन्ड वर्म, हुक वर्म आदि को रख सकते हैं। ये जीवाणु मिट्टी में सक्रिय रूप में या स्पोर (spore) के रूप में मौजूद रहते हैं।

(5) जन्तुजनित संक्रमण – बहुत सी बीमारियाँ हैं, जिन्हें फैलाने में हमारे आसपास मौजूद जीव–जन्तु (Animals) सहायक होते हैं, उनके भीतर ये जीवाणु फलते–फूलते और संरक्षित होते हैं और बाद में आदमी के भीतर संक्रमित हो जाते हैं। कुछ रोग जानवरों के काटने से भी मनुष्य में फैलते हैं जैसे–

(i) रैबीज– यह संक्रमित कुत्ते, बन्दर, बिल्ली के माध्यम से फैलते हैं।

(ii) प्लेग– यह चूहे के माध्यम से आदमी तक फैलता है।

(6) संक्रमित खाद्य जनित रोग (Food borne diseases) – ऐसे खाद्य पदार्थ जो बैक्टीरिया या परजीवी द्वारा संक्रमित होते हैं, और उसे यदि व्यक्ति खाता है तो यह उसके शरीर में स्थानान्तरित (Tranfer) हो जाते हैं। जैसे– एमीबियेसिस, फूड प्वायजनिंग (भोजन विषाक्तता), टेप वर्म इन्फेक्शन (संक्रमित मवेशियों के माँस खाने से फैलता है)।

(7) मच्छर–मक्खियों से फैलने वाले रोग (Insect borne diseases) – बहुत सी बीमारियाँ मक्खी और मच्छर के कारण फैलती हैं। जैसे–डेंगू, फाइलेरिया, मलेरिया, डायरिया, चिकनगुनिया आदि।

अब, हमें यह जानना जरूरी है कि संक्रामक बीमारियाँ फैलती कैसे हैं ?

इसे समझने के लिए तीन बातों की कल्पना कीजिए –

(i) कौन–कौन से जीवाणु हैं, जो रोग उत्पन्न करते हैं ? – इन जीवाणुओं में वायरस, बैक्टीरिया एवं परजीवी प्रमुख हैं। इन जीवाणुओं में खुद चलकर फैलने की क्षमता नहीं होती– इन्हें किसी माध्यम की जरूरत होती है, जहाँ ये अपने को बढ़ाते और दूसरे तक फैलने का आश्रय पाते हैं। उचित माध्यम न मिलने पर ये जीवाणु या तो नष्ट हो जाते हैं या चुपचाप पड़े रहते हैं, जब तक इन्हें अनुकूल वातावरण नहीं मिलता।

(ii) संवाहक (Vector) – बहुत से संवाहक हैं जो जीवाणुओं को फैलने में मदद करते हैं जैसे–वायु, जल, मच्छर, मक्खी, पशु–पक्षी आदि। इनमें कुछ तो उनके लिए संरक्षक (Reservoir) का काम करते हैं, और कुछ हैं जिनमें ये जीवाणु अपना विकास करते हैं तथा संक्रामक रूप धारण करते हैं– और कुछ ऐसे हैं जो सिर्फ एक से दूसरे व्यक्ति तक फैलाते हैं – लेकिन खुद उसमें शामिल नहीं होते हैं।

(iii) पर्यावरण (Environment) – बहुत से जीवाणु गर्मी–बरसात के मौसम में ज्यादा तेजी से फैलते हैं तो कुछ सर्दियों में। साल का अलग–अलग महीना, अलग–अलग जीवाणुओं के लिए

टिप्पणी

अलग–अलग रूप से अनुकूल या प्रतिकूल होता है। इसका विस्तृत वर्णन हम अलग–अलग बीमारियों के पाठ (Chapter) में करेंगे।

1.2 संक्रामक रोगों का नियंत्रण

अलग–अलग संक्रामक रोगों के नियंत्रण का अलग–अलग तरीका है, पर मूल सिद्धांत यही है कि इनके प्रसार के तरीकों को जानकर उसमें अवरोध पैदा कर देना ताकि इनकी वृद्धि और इनका प्रसार रूक सके। आइए! इनके तरीकों के बारे में जानें तथा इससे संबंधित कुछ मुख्य शब्दों का अर्थ समझें –

वाहक रोगी (Carriers) – ये वह रोगी हैं, जो स्वस्थ प्रतीत होते हैं। इनमें रोग के कोई लक्षण दिखाई नहीं देते– किन्तु इनके भीतर जीवाणु मौजूद रहते हैं– ये दूसरों तक बीमारी विभिन्न माध्यमों से फैलाते रहते हैं– इनकी पहचान जरूरी है, अन्यथा रोग पर नियंत्रण करना मुश्किल होता है।

रोग–प्रतिरोधी क्षमता (Immunity) – प्रत्येक व्यक्ति में रोग–प्रतिरोधी क्षमता अलग–अलग होती है। कुछ लोग जीवाणुओं के प्रति अधिक संवेदी (Sensitive) होते हैं, उनमें संक्रमण का खतरा अधिक रहता है। कुछ लोग कम संवेदी (Less-Sensitive) होते हैं, उनमें जीवाणुओं का संक्रमण कम होता है। यह हमारे खान–पान, रोग प्रतिरोधक शक्ति, आनुवांशिक कारण आदि कई बातों पर निर्भर करता है।

स्रोत– बीमार व्यक्ति संक्रमण के मुख्य स्रोत होते हैं, जिनके माध्यम से रोग, उनके परिजनों, पड़ोसियों, गाँव और गाँव के बाहर तक फैलता है।

पृथक्करण (Isolation) – संक्रमित व्यक्ति को संक्रमण दूर होने तक अन्य लोगों के संपर्क से दूर रखने को आइसोलेशन कहते हैं।

स्रोत की पहचान – सबसे पहले हमें व्यक्ति की उचित जाँच–पड़ताल तथा चिकित्सक के सहयोग से उसकी बीमारी और उसकी अवस्था का सही निदान (Diagnosis) करना है। फिर उसके उपचार और आइसोलेशन का प्रबंध करना है। उस क्षेत्र में इस रोग से पीड़ित अन्य व्यक्तियों की पहचान करके उन्हें भी अस्पताल के पृथक वार्ड में चिकित्सा उपलब्ध करानी है।

इसके अलावा फैलाने वाले स्रोत – जैसे प्रदूषित जल, वायु, मच्छर, मक्खी आदि की पहचान कर उसके नियंत्रण के भी उपाय करने होंगे।

स्वास्थ्य कार्यकर्ता के कार्य

एक स्वास्थ्य कार्यकर्ता का यह कर्तव्य है कि वह अपने ज्ञान, अनुभव के आधार पर अपने आसपास अवस्थित संक्रामक रोगों को पहचान कर चिकित्सक के सलाह के अनुसार उसका उपचार करे तथा गाँव के लोगों को उसके स्रोत, रोकथाम के उपाय तथा निर्दिष्ट उपचार के तरीकों की सूची उपलब्ध कराए तथा उनका विधिवत पालन करने को प्रोत्साहित करें एवं स्वयं भी वहाँ से प्राप्त निर्देशों का पालन करें। आम जन–समुदाय को उससे अवगत कराये तथा उपलब्ध संसाधनों के बारे में जानकारी दे। कोई नई बीमारी पता चले तो उसकी भी तत्काल सूचना अपने निकटस्थ संस्थान तक पहुँचाए।

स्वास्थ्यकर्ता लोगों को बताएं कि हमारे इर्द–गिर्द कौन–कौन से संक्रामक रोग फैले हैं तथा कौन–कौन से रोग फैल सकते हैं। वे कैसे फैलते हैं तथा उनमें क्या–क्या सहायक है? उन्हें कैसे रोका जा सकता

है तथा उनका उपचार क्या है ? इनकी रोकथाम के लिए हमारी जीवन–शैली, खान–पान, रहन–सहन कैसा हो ? टीकाकरण कब और कहाँ कराएं। उपचार के तरीके क्या हैं और कहाँ उपलब्ध हैं? कीटाणुनाशक, मच्छर–मक्खी उन्मूलन आदि के उपाय। उससे संबंधित चल रहे राष्ट्रीय कार्यक्रमों के बारे मे जानकारी आम आदमी तक कैसे पहुँचे। ये सब काम हमारे जन–स्वास्थ्य कार्यकता को करना है।

हमारे जन स्वास्थ्य कार्यकर्ता क्या न करें ?

(1) बिना अनुमति या सूचना के उपचार आरम्भ न कर दें।

(2) रोकथाम और उपचार के वैसे उपाय जो पढ़ाये न गये हो उसके बारे में लोगों को न बताएं जिससे लोग गुमराह और भम्रित हो जाएं।

(3) कार्यकर्ता अपने निकटस्थ पढ़े–लिखे चिकित्सक के हमेशा संपर्क में रहें, उन्हें हर सूचना दें तथा उन्ही की सलाह के अनुसार काम करें। स्वास्थ्य कार्यकर्ता झाड़–फूँक, टोना–टोटका को बढ़ावा न दें, और अगर ऐसा वाक्या सामने आता है तो उसे रोकें।

पाठगत प्रश्न 1.1

1. तपेदिक रोग.. के माध्यम से एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति में फैलता है।
2. डेंगू रोग.. के कारण फैलता है।
3. सिफिलिस एक.. रोग है।
4. पीलिया.. द्वारा फैलने वाला रोग है।
5. प्रत्येक व्यक्ति में.. क्षमता अलग–अलग होती है।

1.3 संक्रामक रोग

1.3.1 चिकन पॉक्स (Chicken Pox)

यह एक वायरस से उत्पन्न होने वाली मौसमी बीमारी है और यह अक्सर अप्रैल से सितंबर के महीने में फैलती है। वैसे तो यह कभी किसी भी उम्र में हो सकती है पर 10 वर्ष की आयु तक के लोग इससे ज्यादा प्रभावित होते हैं। गाँव में अक्सर लोग इसे चेचक कहते हैं, जो सही नहीं है। चेचक (Small-Pox) को कहते हैं, जिसे 1971 में ही पूरी दुनिया से खदेड़कर भगा दिया गया है। यह वैरिसेला जोस्टर नामक वायरस के कारण होता है और खुद ही कुछ दिनों में सिमट जाता (Self-Limiting disease) है।

लक्षण (Symptoms & Signs)

(1) मरीज को सर्दी खाँसी के साथ बुखार, ठंड तथा पूरे शरीर में दर्द का अनुभव होता है।

चित्र 1.1: चिकिन पॉक्स

(2) बुखार के साथ शरीर पर दाने दिखाई देने लगते हैं।

(3) पेट और छाती तथा पीठ पर दानों की संख्या अधिक रहती है, पर ये दाने पैर, हाथ और चेहरे पर भी प्रकट हो सकते हैं।

(4) दाने एक साथ प्रकट होते हैं जो इसकी खासियत है।

(5) त्वचा पर निशान रह जाते हैं, जो धीरे–धीरे मलिन होते हुए लगभग खत्म हो जाते हैं।

औसतन यह बीमारी 17 दिनों की होती हैं, जो 7–21 दिनों के बीच तक हो सकती है।

जाँच (Diagnosis)

(1) पक्की जाँच के लिए दानों के भीतर के स्राव का अतिसूक्ष्मदर्शी (Electron- microscope) से इसके भीतर मौजूद वायरस का अध्ययन किया जाता है।

(2) उपयुक्त माध्यम (medium) में इस वायरस का संवर्धन (Culture) कराके वायरस के प्रकार आदि का अध्ययन करते हैं।

जटिलताएं (Complications)

यद्यपि यह खुद से ठीक होने वाली व्याधि है पर कभी–कभी कई जटिलतायें भी उत्पन्न होती हैं जो बच्चों में मृत्यु का कारण भी बन सकती हैं :

(1) गर्भावस्था में यदि माँ संक्रमित हो जाये तो रक्तस्राव या गर्भपात हो सकता है।

(2) संक्रमित माँ से गर्भस्थ शिशु में जन्मजात विकृतियाँ उत्पन्न हो सकती हैं।

(3) सेकेन्डरी इन्फेक्शन के कारण शिशु में निमोनिया या आंत्र–शोथ (Enterits) हो सकता है जिसका इलाज हो सकता है पर कभी–कभी चिकित्सीय अभाव में मृत्यु हो सकती है।

इलाज (Treatment)

(1) टीकाकरण तथा उपयुक्त इम्यूनोग्लोबनिक देने से यह रोग समय पर ठीक हो जाता है।

(2) सेकेन्डरी इन्फेक्शन से बचाने के लिए प्रौफायलैक्टिक एन्टीबायोटिक देते हैं।

(3) इसकी सूचना समय पर सक्षम चिकित्सकों को देनी चाहिए तथा मरीज के संबंधियों पर भी निगरानी रखनी चाहिए।

(4) लोगों को इसके बारे में बताना चाहिए तथा टीकाकरण एवं उसकी अन्य जटिलताओं की जानकारी भी देनी चाहिए।

(5) अपेक्षित सावधानियों का पालन खुद भी करना चाहिए और लोगों को भी बताना चाहिए।

कुछ अन्य जानने योग्य बातें

(1) यह बीमारी बहुत घातक नहीं है पर यदि सावधानी नहीं रही तो आसपास तेजी से फैल सकती है।

(2) जटिलताओं पर निगरानी रखनी चाहिए और उसका तुरन्त उपचार चिकित्सक की सहायता से करना चाहिए।

(3) यह बीमारी जिन्दगी में प्रायः एक ही बार होती है– पर कभी–कभी दुबारा होते हुए भी देखा गया है।

(4) इसका टीका उपलब्ध है– बच्चों को इसे समय पर अवश्य लगवाने की सलाह दें।

क्या न करें ?

(1) संक्रमित लोगों को असंक्रमित लोगों के साथ रहने या रखने की सलाह न दें।

(2) इलाज के पूर्व चिकित्सक की सलाह जरूर लें।

(3) टीकाकरण की अवहेलना न करें।

(4) अपने चिकित्सक से चिकन–पॉक्स जनित जटिलताओं की ठीक से पहचान करायें और उपचार की अवहेलना न करें।

(5) यदि सेकेन्डरी इन्फेक्शन नहीं है तो उच्चतर एन्टीबायोटिक न दें।

स्वास्थ्य कार्यकर्ता की भूमिका

- चिकन पाक्स के मामलों की पहचान करना
- चिकित्सक के पास जाने के लिए प्रेरित करना
- इस रोग के नियंत्रण के बारे में घर के अन्य व्यक्तियों को बताना
- उच्च प्रधिकारियों को सूचित करना
- झाड़–फूंक को बढ़ावा न देना

1.3.2 खसरा (Measles)

बच्चों को होने वाली यह बहुत ही आम बीमारी है। यह बीमारी विकासशील तथा घनी आबादी वाले क्षेत्रों में ज्यादातर देखी जाती है। यह वायरस के संक्रमण से होती है तथा वायु–मार्ग यानी श्वास–प्रश्वास से फैलती है।

खसरे का वायरस मुँह के लार, श्वास–प्रश्वास आदि के माध्यम से संक्रमित होता है तथा हमारी श्वास–नलिका में अवस्थित रहता है।

खसरे के लक्षण (Symptoms & Signs)

(1) तेज बुखार, सर्दी, खाँसी के साथ आँखे लाल हो जाया करती हैं।

(2) उल्टी तथा पतले दस्त भी हो सकते हैं।

टिप्पणी

(3) इसमें शरीर के पूरे भाग में महीन–महीन लाल दाने हो जाते हैं, जो मिलकर चकत्ते के रूप में दिखाई देते हैं।

(4) ये दाने कान के पीछे, गर्दन तथा चेहरे पर अधिक एवं अन्य भागों में कम होते हैं।

खसरे के बारे में कुछ जानने योग्य बातें

1. यह एक खतरनाक बीमारी है तथा इससे जुड़ी जटिलतायें इसे और खतरनाक बना देती है।
2. एक बार होने के बाद यह दुबारा बहुत ही कम होता है।
3. यह प्रायः छः माह के बाद तथा 5 वर्ष की आयु के पहले होता है। माँ के दूध में पाए जाने वाले एन्टीबॉडी के कारण दूध पीने वाले शिशु इससे सुरक्षित रहते हैं।
4. लड़के या लड़कियों में यह समान रूप से होता है।
5. कुपोषण से ग्रस्त बच्चे इसका अधिक शिकार होते हैं तथा उनमें जटिलतायें भी अधिक होती हैं।
6. इसके कारण बच्चे और अधिक कुपोषण के शिकार हो जाया करते हैं।
7. सर्दी (जाड़े) के मौसम में यह अक्सर फैलता है।
8. घनी आबादी वाले क्षेत्र, झुग्गी–झोपड़ी, गाँव आदि के क्षेत्र में यह अक्सर होता है।
9. ज्यादातर गरीब तथा अशिक्षित लोग इसके शिकार होते हैं।
10. इसका टीकाकरण सरकारी टीकाकरण कार्यक्रम में शामिल है।
11. संक्रमण के 4 दिन के बाद इसके दाने दिखलाई देते हैं तथा 5 दिन बाद तक यह संक्रामक बना रहता है।

खसरा से होने वाली जटिलताएं (Complitications)

(1) निमोनिया – सबसे ज्यादा

(2) कुपोषण (Malnutrition)

(3) डायरिया

(4) श्वसन संबंधी परेशानी (Respiratory Problems)

उपचार

(1) यह एक वायरल रोग है इसमें एन्टीबायोटिक की कोई भूमिका नहीं है। हाँ इसक कम्पलीकेशन से बचने के लिए प्रौफायलैक्टिक ब्रोड–स्पेक्ट्रम एन्टीबायोटिक देते हैं तथा इसकी भावी जटिलताओं पर नजर रखते हैं।

(2) बुखार के लिए पैरासिटामोल दिया जाता है।

(3) डायरिया, निमोनिया के लिए चिकित्सक की सलाह के अनुसार उपचार करते हैं।

स्वास्थ्य कार्यकर्ता की भूमिका

(1) जिस क्षेत्र में यह रोग फैला है उसकी निगरानी करना।

(2) कितने लोगों को हुआ है– उसकी सूची– उम्रवार और उस क्षेत्र के संबंधित संस्थान में उसकी शीघ्र सूचना।

(3) इससे बचाव और होने वाली जटिलताओं के बारे में आम आदमी को शिक्षित करना।

(4) यथासमय रोगी को योग्य चिकित्सक या संस्थान तक भिजवा देना।

स्वास्थ्य कार्यकर्ता क्या न करें?

(1) संक्रमित बच्चों को असंक्रमित बच्चों के साथ रखने की सलाह न दें।

(2) जटिलताओं की चिकित्सा खुद करने की कोशिश न करें।

(3) जटिलताओं को हल्के में न लें एवं शीघ्रातिशीघ्र चिकित्सक तक पहुँचाने की व्यवस्था करें।

रोकथाम के उपाय

(1) बच्चों को कुपोषण से बचाएं और गर्भवती/स्तनपान कराने वाली माँ को उपयुक्त पोषक आहार देने की सलाह दें।

(2) 9 महीना पूरा होते ही बच्चों को खसरे का टीका अवश्य दिलवाएं।

(3) मरीज को अलग रखकर इलाज कराएं।

(4) क्षेत्रीय स्वास्थ्य अधिकारियों को यथाशीघ्र सूचित करें।

(5) लोगों को बीमारी के बारे में बताएं।

खसरे का टीका

(1) यह 9 महीने की उम्र में लगाया जाता है उसके पहले माँ के दूध से बच्चों को प्रतिरक्षण मिलता है।

(2) महामारी फैली हो तो बच्चों को पहले टीका लगवा सकते हैं।

(3) टीका फ्रीज के पहले खाने में रखें और कोल्ड चेन प्रणाली (Cold-Chain) बनाए रखें।

(4) खोलने के बाद तुरन्त बाद हीं उपयोग में लाएं।

(5) टीका निर्माण के 6 महीने के भीतर इसका उपयोग कर लें।

(6) टीके की 0.5 ml मात्रा मांसपेशियों में दी जाती है।

1.3.3 पोलियो (Polio)

आपने अपने आस–पास जरूर कोई बच्चा या ऐसा व्यस्क देखा होगा जो ठीक से चल नहीं पा रहा है और बड़े–बूढ़े लोगों से सुना होगा कि इसे पोलियो हो गया है। यह बचपन में होने वाली बीमारी है। इसमें कभी–कभी पैर निष्क्रिय हो जाता है। यह एक वायरल रोग है तथा आंत के रास्ते संक्रमित होता है। यह

वायरस संक्रमित व्यक्ति के स्नायु और पेशीय तन्तुओं पर असर डालता है। इससे ज्यादातर पाँच वर्ष तक के बच्चे ही प्रभावित होते हैं। अधिक उम्र के बच्चे इस रोग से कम प्रभावित होते हैं।

वायरस का संक्रमण

पोलियो का वायरस बच्चों के शरीर में मुख के रास्ते प्रवेश करता है और छोटी आँत में पहुँचकर रक्त के रास्ते उसके स्नायु–तंत्र (Nervous-System) को प्रभावित करता है। यह वायरस–मल, नाक और मुँह के स्राव में मौजूद रहता है। वायरस से प्रदूषित जल भी इसका स्रोत है। वायरस को रसायनों तथा अन्य भौतिक विधियों से नष्ट किया जा सकता है।

पोलियो के बारे में जानने योग्य कुछ बातें –

(1) यह बरसात के महीने जून–जुलाई–अगस्त–सितंबर में ज्यादातर फैलता है।

(2) गन्दगी तथा घनी आबादी वाले क्षेत्र में यह तेजी से फैलता है।

(3) यह ज्यादातर बच्चों को प्रभावित करता है।

(4) स्त्रियों की अपेक्षा पुरुष ज्यादा प्रभावित होते हैं।

(5) प्रदूषित जल, भोजन, मक्खियाँ इसे फैलाने में सहायक हैं।

(6) पोलियो से प्रभावित बच्चों को मांस पेशी में इन्जेक्शन देने से बचें।

(7) माँ के दूध में बच्चों को पोलियो से बहुत हद तक बचाने की क्षमता 6 माह तक रहती है।

(8) संक्रमित होने के 7 से 14 दिनों तक इसका प्रभाव रहता है।

(9) पोलियो उन्मूलन कार्यक्रम पूरे विश्व में जोर–शोर से चल रहा है। विगत 2–3 वर्षों से भारत में पोलियो का कोई नया केस नहीं मिला है।

लक्षण (Signs & Symptoms)

(1) बुखार के साथ सर्दी–खाँसी, यह इसका शुरूआती लक्षण है।

(2) कुछ लोगों में खुजलाहट तथा गर्दन एवं पीठ में अकड़न दिखाई देती है।

(3) प्रभावित हिस्से की माँसपेशी काम करना बन्द कर देती है– पर उनमें संवेदना बरकरार रहती है तथा लकवा हो जाता है।

(4) अगर केन्द्रीय स्नायु–तंत्र प्रभावित होता है तो व्यक्ति के चेहरे में विकृति तथा खाने पीने की वस्तु को निगलने में दिक्कत होती है।

(5) कभी–कभी श्वसन पेशियों के प्रभावित होने पर प्रभावित बच्चा साँस नहीं ले पाता है और फिर मर जाता है।

(6) बहुत बार पोलियो संक्रमण सर्दी–खाँसी–बुखार के साथ बिना कोई प्रभाव डाले भी ठीक हो जाता है।

निदान (Diagnosis)

(1) रोग के लक्षण के साथ माँस–पेशियों का सूखना और कमजोर पड़ते जाना व अपंगता।

(2) रीढ़–द्रव (CSF) के जाँच में प्रोटीन बढ़ा हुआ मिलता है।

(3) मल तथा रीढ़–द्रव में वायरस का संवर्धन (Culture) कराके वायरस के प्रकार आदि का पक्का पता चलता है।

(4) बुखार से पीड़ित

उपचार (Treatment)

(1) प्रभावित बच्चे को तुरन्त अस्पताल में भर्ती कराके पृथक वार्ड में उपचार कर देना चाहिए।

(2) प्रभावित हिस्से को फिजियोथेरापी द्वारा कुछ हद तक सुधारा जा सकता है।

(3) विकृत हो गये अंगों को पोलियो करेक्शन सर्जरी के द्वारा कुछ हद तक मरीज के अनुकूल बनाया जा सकता है।

रोकथाम

(1) Oral Polio Vaceine (OPV) की मदद से हम इसे दूर भगाने के प्रयास कर रहे हैं। यह एक बहुत कारगर वैक्सीन है जिसे हम मुँह के रास्ते दो बूँद देकर पोलियो से बच सकते हैं। यह टीका 0–5 वर्ष के बच्चों को 1–1 माह के अन्तराल पर देते है। सर्व टीकाकरण कार्यक्रम (Universal Immunisation Programme) में तीन खुराक के बाद फिर 18–24 महीने में इसका बूस्टर खुराक देते हैं।

(2) पल्स पोलियो कार्यक्रम : – यूनिवर्सल कार्यक्रम के अलावा पोलियों की अतिरिक्त

खुराक समय–समय पर अभियान चलाकर घर–घर में बच्चों को देते हैं। इसमें पोलियो ड्रॉप दवा, कंपनी से बच्चों को देने तक कोल्ड–चेन प्रणाली बनाए रखते हैं।

टिप्पणी

कोल्ड–चेन प्रणाली

यह एक तापमान–नियंत्रित आपूर्ति श्रृंखला है इसमें वैक्सीन की दी गयी तापमान सीमा को बनाये रखते हुए भंडारण और वितरण गतिविधियाँ होती हैं।

(3) संदेहास्पद केस की भी पूरी तरह जाँच कराके उसके आसपास में पोलियो का टीकाकरण सघन स्तर पर कराते हैं।

(4) स्वच्छ जलापूर्ति को सुनिश्चित करके तथा भोजन, मक्खियों से बचाव को प्रश्रय देकर हम पोलियो को दूर भगा रहे हैं।

(5) जहाँ–तहाँ मलोत्सर्ग को रोककर तथा शौचालय का इस्तेमाल कर हम पोलियो के साथ–साथ कई अन्य बीमारियों से भी निजात पा सकते हैं। सौभाग्य से पिछले कई वर्षो से पोलियो का कोई नया केस नहीं मिला है। WHO, UNICEF के साथ मिलकर हमारी सरकार इसे विश्व से दूर भगाने के लिए कृत संकल्प है। आइए! हम इस महाभियान को सफल बनाने में मदद करें।

स्वास्थ्य कार्यकर्ता की भूमिका

(1) अपने क्षेत्र में मौजूद 5 वर्ष तक के बच्चों को समय पर पोलियो ड्रॉप पिलाना सुनिश्चित करना।

(2) घरों में पता लगाना कि पोलियो ड्रॉप मिला है या नहीं तथा पोलियो के संदेहास्पद केस को चिन्हित कर उसे सक्षम पदाधिकारियों को सूचित करना।

(3) जन–समुदाय को पोलियों के बारे में तथा उससे बचाव के बारे में बताना।

(4) बच्चों की माताओं को पोलियो अपंगता के बारे में बताकर उन्हें टीकाकरण के लिए प्रेरित करना।

(5) पल्स पोलियो के आयोजन का प्रचार तथा सफल बनाने में सहयोग करना।

(6) स्वास्थ्य कर्ता को घर–घर जाकर स्वच्छता अभियान के बारे में बताना तथा हर घर में शौचघर (Toilets) के निर्माण के लिए प्रेरित करना।

कार्यकर्ता क्या न करें ?

(1) पोलियो से प्रभावित बच्चे को कभी मांसपेशी में इन्जेक्शन न दें।

(2) यदि संदेह है कि बच्चा पोलियो से प्रभावित है तो पोलियो कार्यालय में सूचित करें। न कि अन्य कोई चिकित्सा प्रारम्भ करें।

(3) झाड़–फूंक, टोना–टोटका को प्रोत्साहित न करें बल्कि हतोत्साहित करें।

(4) कार्यकर्ता कोई चिकित्सा प्रारम्भ करने की कोशिश न करे।

पाठगत प्रश्न 1.2

निम्नलिखित का मिलान करें:–

(क)	(ख)
1. चिकन पॉक्स	(i) वायरस के मुँह के लार व श्वास द्वारा फैलना
2. खसरा	(ii) वैक्सिन की तापमान नियंत्रण प्रणाली
3. पोलियो	(iii) बुखार के साथ पेट, छाती, पीठ पर दाने
4. कोल्ड चैन	(iv) स्नायु तंत्र प्रभावित

उत्तर (1, iii) (2, i) (3, iv) (4, ii)

1.3.4 अतिसार (Diarrhoea)

अतिसार (डायरिया)

डायरिया एक बहुत ही आम बीमारी है। छोटे बच्चों में यह सबसे जल्दी होती है, क्योंकि बच्चों की पाचन प्रणाली बहुत ही नाजुक होती है। अगर उपचार नहीं किया तो मृत्यु तक हो जाती है।

पतले व पानी जैसे मल का बार–बार होना डायरिया या दस्त कहलाता है। उसके साथ यदि श्लेष्मा (Mucus) और खून भी आये तो उसे डिसेन्ट्री (Dysentry) या पेचिश/आमातिसार कहते हैं। यह यदि तुरन्त हुआ है तो उसे तीव्र (Acute) तथा धीरे–धीरे बहुत दिनों से है तो उसे जीर्ण (Chronic) डायरिया कहते हैं। इससे शरीर में निर्जलन (Dehydration) हो जाता है, जिसके कम्पलीकेशन के फलस्वरूप व्यक्ति मर भी सकता है–खासकर बच्चे। यदि डायरिया के साथ उल्टी (Vomating) भी हो तो गंभीरता बहुत बढ़ जाती है। निर्जलन का अर्थ है– शरीर में पानी की कमी।

कारण

कई तरह के वायरस, बैक्टीरिया, परजीवी तथा विषैले पदार्थ डायरिया के कारक हैं। यह अक्सर प्रदूषित जल, भोजन, खराब बासी खाना या फिर गंदे हाथों से खाना खाने के कारण होता और फैलता है।

नीचे कुछ वायरस, वैक्टीरिया, परजीवी के नाम दिये जा रहे हैं, जिनके कारण डायरिया होता है –

(1) जीवाणु– सालमोनेला, शिजेला, विब्रियो कॉलरी, ई–कोलाई, क्लोस्ट्रिडिया आदि।

(2) विषाणु – रोटा वायरस, कोना वायरस आदि, ज्यादातर बच्चों को।

(3) परजीवी :– एन्टअमीबा हिस्टोलिटिका, जियार्डिया, लैम्बिया आदि।

(4) अस्वच्छ व असुरक्षित ढ़ंग से बोतल से दूध पिलाने से।

(5) मक्खियाँ इसकी सबसे बड़ी वाहक हैं। वह गंदगी पर बैठकर फिर भोजन और पानी को प्रदूषित करती हैं।

कुछ जानने योग्य बातें

(1) गरमी तथा बरसात में डायरिया खूब फैलता है। क्योंकि जीवाणुओं को बढ़ने के लिए तापमान सही होता है।

(2) पेय–जल की आपूर्ति कम होने से संग्रहित जल प्रदूषित होने का खतरा अधिक रहता है।

(3) व्यक्तिगत स्वच्छता तथा घरेलू स्वच्छता में कमी तथा भोजन का धूल और मक्खियों के संपर्क में आने से यह रोग हो सकता है।

(4) बच्चों में यह बीमारी अक्सर होती है पर वयस्क भी अक्सर प्रभावित होते हैं।

(5) बोतल से दूध पीने वाले बच्चे अक्सर इसके शिकार होते हैं।

(6) निम्न आर्थिक सामाजिक तबके के लोग इसके चपेट में अक्सर आते हैं।

(7) कुपोषण भी डायरिया के लिए जिम्मेदार है और डायरिया के कारण भी कुपोषण होता है।

(8) मरीज को तला–भुना हुआ खाना, घी, मक्खन, कच्चे फल व सब्जियां आदि नहीं लेनी चाहिए।

(9) इलाज हमेशा ओ आर एस (ORS) घोल से आरंभ करें।

(10) डायरिया ज्यादातर गंदगी से फैलता है।

निर्जलीकरण

शरीर में पानी और इलेक्ट्रोलाइट की कमी से व्यक्ति में ये लक्षण प्रकट होते हैं–

(1) मुँह सूखना। प्यास ज्यादा लगना ।

(2) धड़कनों की गति का तीव्र हो जाना।

(3) आँखें धँस जाना तथा उनमें आँसू की कमी हो जाना।

(4) बच्चों में माथे के नरम भाग में दबाव बढ़ जाता है।

(5) त्वचा के लचीलेपन में कमी आ जाती है – उनमें झुर्रियाँ दिखने लगती हैं।

(6) बुखार आ सकता है तथा मूत्र–उत्सर्जन कम हो जाता है। मूत्र उत्सर्जन में कमी, गंभीर स्थिति का लक्षण है – व्यक्ति के गुर्दे खराब हो सकते हैं, तुरन्त डॉक्टर से संपर्क करें।

उपचार

(1) पुनर्जलन हाइड्रेशन करते है तथा साथ में औषधीय चिकित्सा भी करते हैं।

(2) मामूली निर्जलन में दाल का पानी, नारियल का पानी, शिकंजी, तथा शिशुओं को मां का दूध देना चाहिए।

(3) मध्यम निर्जलन में चाय, माड़, नमक चीनी का घोल या ओआरएस (ORS) का घोल देना चाहिए – पर्याप्त मात्रा में – आवश्यकता के अनुसार।

(4) गंभीर निर्जलन में जब कम मूत्र आ रहा हो तो उसे तुरंत चिकित्सक के सलाह के अनुसार अन्तर्धमनीय – द्रव चिकित्सा (Intravenous fluid Therapy) देते है, जिससे जल और इलेक्ट्रोलाइट की कमी को शीघ्रातिशीघ्र पूरी की जा सके।

रोकथाम

(1) खाना बनाने, खाना रखने तथा खाना खाते समय साफ–सफाई और स्वच्छता का पूरा ध्यान रखना चाहिए–खाना ढ़ककर पकाएं, खुला न छोड़ें, हाथ धोकर ही खाएं, ताजा खाना खाएं–आसपास मक्खियाँ न हों– ये सब बातें ध्यान देने की हैं।

(2) शौच– शौचालय में ही जाएं, अगर बाहर जाएं तो उसे मिट्टी से ढ़क दें।

(3) शौच के बाद हाथ को साबुन और पानी से अच्छी तरह धो लें।

(4) पानी तथा बर्फ का शुद्धीकरण उनका क्लोरीनेशन जरूरी है।

(5) चापाकलों (हैंडपंप), नलों व कुओं के समीप जल निकासी की उचित व्यवस्था रखें।

चित्र 1.2: चापाकलों, नलों व कुओं के समीप पानी की उचित निकासी

(6) खुले में रखा खाना, बासी खाना, रेड़ी और खोमचे पर के खाने से दूर ही रहें क्योंकि मक्खियाँ, कीड़े और उड़कर आई हुई धूल इन्हें प्रदूषित कर देता है।

(7) लोगों को प्रशिक्षित करें कि डायरिया क्या है, कैसे फैलता है तथा कैसे बचा जा सकता है।

(8) भोजनालय, रेस्टोरेन्ट तथा सार्वजनिक भोज में साफ–सफाई की समय–समय पर निगरानी हो।

(9) व्यक्तिगत व पर्यावरणीय स्वच्छता का उचित ध्यान दें।

टिप्पणी

स्वास्थ्य कार्यकर्ता की भूमिका

(1) अगर बच्चा माँ का दूध पी रहा हो तो माँ को स्तनपान के लिए प्रोत्साहित करें।

(2) ORS का प्रयोग तथा उसके लाभ के बारे में बताएं । खानपान के घरेलू नुस्खे मरीज और उसके परिवार को बताएं ।

चित्र 1.3: बच्चे को ओआरएस घोल पिलाते हुए।

(3) मक्खियों की उत्पत्ति और प्रसार तथा घर में प्रवेश को नियंत्रित करने के उपाय बताएं ।

(4) खुले में शौच को हतोत्साहित करें तथा सरकारी सहायता से शौचालय निर्माण को प्रोत्साहित करें।

(5) सफाई को प्रोत्साहित करें तथा खराब भोजन को नष्ट करें ।

(6) शुद्ध–पेय जल की उपलब्धता पर जोर दें ।

(7) सरकार के स्वच्छता अभियान को पूरी तरह से गाँव में लागू करें व स्वच्छता के फायदे बताएं।

स्वास्थ्य कार्यकर्ता क्या न करें

(1) डायरिया के गंभीर मरीज जिनमें मूत्र– उत्सर्जन कम हो रहा हो का खुद उपचार न करें और उसे उचित चिकित्सक या अस्पताल में पहुँचाने की व्यवस्था करें !

(2) पेय जल की स्वच्छता वै की जरूरत तथा व्यक्तिगत साफ–सफाई की उपेक्षा न करें !

(3) बाजार के चाट–पकौड़े तथा खुली चीजों का सेवन न करने की सलाह दें !

1.3.5 हैजा (Cholera)

स्वास्थ्य–जागरूकता में वृद्धि और टीकाकरण की बजह से हैजा के मरीजों की संख्या कम हो गई है। यह बहुत ही खतरनाक बीमारी है। यह विब्रियो कॉलरी नामक बैक्टीरिया की वजह से होता है। यह बैक्टीरिया व्यक्ति की छोटी आंत में मौजूद होकर वृद्धि करता है तथा एक्सोटॉक्सिन मुक्त करता है। इसके द्वारा विमुक्त एक्सोटॉक्सिन स्नायुतंत्र को प्रभावित करता है और पानी (मांड के रंग का) की तरह दस्त होते हैं– उल्टी

होती है और मरीज शीघ्र गंभीर निर्जलन (dehydration) का शिकार हो जाता है। यदि समय पर उचित रिहाइड्रेशन और समुचित उपचार नहीं मिला तो मरीज मर भी सकता है।

कारण

(1) इसका मूल–कारण कॉलरा विब्रियो (Cholera vibreo) नाम का बैक्टीरिया है जो प्रदूषित जल या भोजन के रास्ते हमारी आंत तक पहुँच कर अपना विकास करता है।

(2) बरसाती मक्खियाँ, गंदे, सड़े– गले पदार्थों से एवं कटे हुए फलों के सम्पर्क से यह तेजी से फैलता है।

(3) निम्न आर्थिक सामाजिक स्तर वाले अशिक्षित लोग इसके अक्सर शिकार होते हैं।

(4) बारिश के मौसम में यह अधिक फैलता है।

चित्र 1.4: हैजा फैलने के कारण

कॉलरा के बारे में कुछ जानने योग्य बातें

(1) यह बरसात के मौसम में तेजी से फैलता है।

(2) मक्खियाँ इसकी प्रमुख वाहक हैं।

(3) कटे हुए खुले में बिकते फल, गन्ना और फल का पहले से तैयार जूस इसके फैलने में सहायक हैं।

(4) बैक्टीरिया द्वारा मुक्त किये जाने वाला एक्सोटॉक्सिन एक घातक विष है, जो आंतो को प्रभावित करता है और शरीर का द्रव खींच कर माड़ जैसा पतला दस्त करवाता है, जिससे मरीज तुरंत निर्जलन, उल्टी और बेहोशी का शिकार हो जाता है।

(5) खुले में शौच, गंदे कूड़े के ढ़ेर में यह तेजी से पनपता है।

टिप्पणी

लक्षण

(1) अपने आप ही पतला मांड़ जैसा लगातार दस्त होना।

(2) उल्टी तथा अत्यधिक प्यास लगना।

(3) मरोड़ के साथ पेट में दर्द, आँखें धंस जाना (Shunken eye) एवं त्वचा के लचीलेपन में कमी (झुर्रियाँ दिखना)।

(4) जीभ सूखना।

(5) साँस फूलना।

(6) पेशाब में कमी और लम्बे समय तक बीमारी से किडनी फेल्योर और फिर हार्ट फेल्योर होती है और मृत्यु।

निदान (Diagnosis)

(1) मांड की तरह पखाना होना सबसे अच्छा निदान है।

(2) तेज पर कमजोर धड़कन और घटता रक्तचाप।

(3) पखाने की जाँच में कॉलरा–विब्रियों बैक्टीरिया का पाया जाना तथा उसके एक्सोटॉक्सिन का इस्टीमेशन।

पाठगत प्रश्न 1.3

सही (✓) या गलत (✗) का चिह्न लगाइए।

1) हैजा दूषित हवा से फैलता है। ( )

2) भोजन बनाने से पहले हाथ का धोना जरूरी है। ( )

3) हैजा में ORS का प्रयोग करें। ( )

4) डायरिया अक्सर निर्जलीकरण को बढ़ावा देता है। ( )

5) गंभीर रूप से पीड़ित डायरिया के मरीज को डाक्टर के पास ले जाना चाहिए। ( )

उपचारः

- प्राथमिक उपचार के लिए मरीज को डाक्टर के पास ले जाएं।
- मरीज के शौच व उल्टी का उपयुक्त निपटान।
- साफ–सफाई का विशेष ध्यान रखना।
- ORS घोल का सेवन।
- हरे नारियल का पानी, शिकंजी, चावल का पानी आदि का उपयोग।

स्वास्थ्य कार्यकर्ता की भूमिकाः

- कालरा के मामलों की संख्या का पता लगाने के लिए क्षेत्र का सर्वेक्षण करें।
- स्वास्थ्य अधिकारी को गाँव में कालरा पीड़ितों की संख्या से अवगत करायें।
- डीहाइड्रेशन थैरेपी के सम्बन्ध में जन समुदाय को स्वास्थ्य शिक्षा प्रदान करना।
- स्वच्छता के बारे में शिक्षित करना।
- पानी को शुद्ध करने के लिए क्लोरीन की गोलियों का वितरण।
- खुले में शौच को रोकना व उसके हानिकारक परिणाम बताना।
- शौचालयों के निर्माण के लिए प्रोत्साहित करना।

1.3.6 निमोनिया (Pneumonia)

निमोनिया रोग निमोनी निमोकोक्कस नामक बैक्टीरिया के कारण होता है। इसमें बच्चों के फेफड़े प्रभावित होते हैं, जिससे बच्चे साँस लेने में तकलीफ महसूस करते हैं। यदि सही समय पर इसका सही उपचार न किया जाए तो अक्सर बच्चों की मृत्यु तक हो सकती है। इसका उपचार कुशल चिकित्सक की देखरेख में कराना चाहिए।

निमोनिया के बारे में कुछ जानने योग्य बातें

(1) यह निमोकोक्कस निमोनी नामक बैक्टीरिया के कारण होता है।

(2) फेफड़ों के एलवियोलाई में फाइब्रिन जमा हो जाता है, जिससे बच्चे का दम फूलने लगता है।

(3) यह एक वायुजनित संक्रामक रोग है, जो एक बच्चे से दूसरे तक फैलता है अतः इससे प्रभावित बच्चों को अलग रखते हैं।

(4) यह सघन आबादी वाले क्षेत्रों में अधिक तेजी से फैलता है।

(5) कुपोषित बच्चे इसकी चपेट में ज्यादा आसानी से आ जाते हैं।

(6) दो महीने से 5 वर्ष तक के बच्चे इससे सबसे ज्यादा प्रभावित होते हैं।

लक्षण

(1) असामान्य ढ़ंग से साँस फूलना।

(2) खाँसी और बुखार/नाक बहना (सर्दी)।

(3) अत्यधिक सुस्ती एवं नींद आना और जम्हाई लेना।

(4) सायनोसिस– होंठों, नाखून और उँगलियों का पीला पड़ जाना।

(5) बच्चे को निगलने में तकलीफ होने से वह कुछ भी खा–पी नहीं पाता।

उपचार

(1) उचित ब्रोड–स्पेक्ट्रम एन्टीबायोटिक दवाएं चिकित्सक की सलाह के अनुसार देते हैं।

(2) बुखार के लिए ज्वररोधी औषधियाँ जैसे– पैरासिटामोल आदि देते हैं।

(3) बच्चे को समुचित पौष्टिक आहार देते हैं। खाना बन्द नहीं करना चाहिए।

(4) माँ का दूध बन्द नहीं करते हैं।

(5) गंभीर मामलों में अस्पताल में भर्ती कराके योग्य चिकित्सकों की सलाह लेते हैं। ऐसे भी ऑक्सीजन की भी आवश्यकता पड़ सकती है।

याद रखें

उपचार में देरी, सही इलाज नहीं होना या आधा–अधूरा इलाज बच्चे को मौत के मुँह तक पहुँचा सकता है।

रोकथाम के उपाय

(1) माँ का दूध पीने वाले बच्चों को निमोनिया का खतरा कम होता है। माँ के दूध से बच्चे में रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है।

(2) यदि हमारा रहन–सहन भीड़–भाड़ वाला न हो धूल–मिट्टी, धुँआ आदि से रहित हो तो निमोनिया होने की संभावना कम हो जाती है।

(3) संतुलित आहार लेने वाले बच्चे निमोनिया की चपेट में कम आते हैं।

(4) घर की औरतों को निमोनिया के बारे में तथा स्वास्थ्य की अन्य मूल–भूत बातों के बारे में बताएं।

(5) ठंड के मौसम में अपने बच्चों को गरम कपड़े पहनाकर रखें।

1.3.7 टिटेनस (Tetanus)

टिटेनस बैसिलस बैक्टीरिया द्वारा उत्पन्न होने वाली एक घातक बीमारी है। यह कुछ दशक पहले तक बहुतायत में हुआ करती थी। अब तक सघन टीकाकरण के कारण यह बहुत कम हो गया है। भारत में इसे 'धनुष्टंकार' नाम से जाना जाता है। यह **क्लॉस्ट्रेडिया टिटेनी** नामक बैक्टीरिया द्वारा होता है। कुछ दशक पूर्व तक हमारे संक्रामक रोग अस्पतालों में टिटेनस के मरीज भरे पड़े रहते थे। सौभाग्य से अब यह स्थिति नहीं है।

टिटेनस कैसे होता है ?

क्लोस्ट्रिडिया टिटेनी नामक बैक्टीरिया के स्पोर्स गंदे जगहों में पड़े रहते हैं। ये जब कटे–फटे भागों या घाव के रास्ते हमारे शरीर में प्रवेश करते हैं तो उससे मुक्त होने वाले घातक एक्सोटॉक्सिन इस बीमारी के लक्षण

उत्पन्न करते हैं। बैक्टीरिया अपने स्पोर या बीजाणु के रूप में धूल में पड़ा रहता है और अनुकूल समय और वातावरण आने पर पुनर्जीवित हो फलने फूलने लगता है।

लक्षण

बैक्टीरिया द्वारा मुक्त किये गये एक्सोटॉक्सिन प्रभावित व्यक्ति के स्नायुतंत्र को प्रभावित करते हैं। फलस्वरूप तीव्र दर्द होता है और रीढ़ में तनाव के कारण व्यक्ति धनुषाकार हो जाता है। इसकी तीव्रता धीरे–धीरे इतनी तेज हो जाती है प्रभावित व्यक्ति व्यक्ति धनुष की तरह टेढ़ा दिखाई देने लगता है। व्यक्ति का जबड़ा भी टेढ़ा हो जाता है और व्यक्ति कुछ बोल नहीं पाता। पर, आखिरी वक्त तक व्यक्ति की चेतना लुप्त नहीं होती– वह पूरी तरह होश में रहता है। आखिरकार पूरे उपचार के बावजूद अधिकांश व्यक्ति मृत्यु तक पहुँच जाते हैं। नवजात शिशुओं में टिटेनस का खतरा अधिक रहता है। इसे टिटेनस निओनेटोरम कहते हैं। खासकर घर में होनेवाले प्रसव में जहाँ सफाई और एन्टीसेप्सिस का प्रबंध नहीं होता। इसमें गर्भनाल के रास्ते संक्रमण बच्चे तक पहुँच जाता है।

रोकथाम के उपाय

टिटेनस टॉक्सॉयड के इन्जेक्शन के द्वारा हम टिटेनस को बहुत हद तक रोक सकते हैं। यह एक सुरक्षित पर शक्तिशाली सक्रिय (Active) वैक्सिन है। इसके दो इन्जेक्शन स्वस्थ व्यक्ति के मांसपेशियों में एक–एक माह के अंतराल पर लगाते हैं। फिर हर पाँच साल पर इसका बूस्टर डोज देते हैं। गर्भवती महिलाओं को पूरे गर्भकाल में यदि पहला बच्चा है तो दो नहीं तो एक टीका टिटनेस टॉक्सॉयड का लगाते हैं। इससे नवजात शिशुओं में होने वाले टिटेनस (Tetanus Neonatorum) का खतरा कम हो जाता है।

टिटेनस के बारे में जानने योग्य कुछ अन्य बातें

(1) टिटेनस का मरीज अन्त समय तक पूरे होशोहवास में रहता है जबकि उसका स्नायुतंत्र काम करना बन्द कर देता है।

(2) मरीज को पूर्णतः अंधेरे में रखने पर टिटेनस का दौरा कम आता है, जबकि उजाले में या शोरगुल में यह दौरा ज्यादा आता है।

(3) मरीज को उपचार के लिए जितनी जल्दी पहुँचाते हैं, रिकवरी होने की संभावना उतनी ही अधिक है, देर करने से रिकवरी नहीं हो पाती।

(4) सौभाग्य से टिटेनस के मरीज अब नहीं के बराबर मिल रहे हैं और ऐसा सघन टीकाकरण अभियान के कारण संभव हुआ है।

(5) गर्भावस्था में माँ को दिया गया टीका बच्चे के भीतर भी रोग प्रतिरोधक शक्ति (इम्यूनिटी) पैदा कर देता है जिसे हम DPT के खुराक के साथ बूस्ट करते हैं।

(6) गंदे जगहों पर टिटेनस के स्पोर्स (बीजाण्ड) मिल सकते हैं पर गोबर, मिट्टी या जंग से उसका कोई लेना–देना नहीं है– गाँव में फैले ये अफवाह सही नहीं है।

स्वास्थ्य कार्यकर्ता की भूमिका

(1) स्वास्थ्य कार्यकर्ता लोगों को टिटनेस और उसके जानलेवा खतरे के बारे में बताएं।

(2) उन्हें इसके टीकाकरण के बारे में बताएं और टीकाकरण करवाएं।

(3) गर्भावस्था में TT के टीके से होने वाले फायदे के बारे मे बताएं।

(4) घाव या कट जाने पर एन्टीसेप्टीक ड्रेसिंग (पट्टी) कराने की सलाह दें।

क्या न करें ?

(1) टिटेनस का पता चलने के बाद घर में इलाज न करें, न किसी एन्टीबायोटिक से न ही किसी अन्य उपचार से।

(2) टिटेनस का संदेह भी हो तो लोगों को झाड़–फूँक आदि की सलाह न दें।

(3) गर्भावस्था में टिटेनस के टीके के लिए हतोत्साहित न करें।

(4) चूँकि अभी टिटेनस के मरीजों की संख्या बहुत कम हो गई है– तो भी टीकाकरण को हतोत्साहित न करें।

(5) सुरक्षित प्रसव–साफ सुथरे, एन्टीसेप्टीक और स्टरलाइज्ड सामान के साथ उचित सक्षम चिकित्सक/नर्स के हाथों ही प्रसव कराएं।

(6) पहले से प्रयुक्त हो चुके निडिल और सिरिन्ज का प्रयोग दुबारा न करें।

1.3.8 रेबीज (Rabies)

यह एक वायरस से उत्पन्न होने वाली बीमारी है जो अक्सर प्रभावित कुत्ते या अन्य जानवरों के काटने से उसके लार के साथ मानव–शरीर में संक्रमित हो जाती हैं। इसे हाइड्रोफोबिया भी कहते हैं क्योंकि, इसमें मरीज को पानी से डर लगता है। यह एक जन्तुजन्य व्याधि है। यह कुत्तों के अलावा बिल्ली, सियार, बन्दर आदि के काटने से भी हो सकती है। विकासशील देशों में जहाँ आवारा कुत्ते अधिक होते हैं, वहाँ यह बीमारी मुख्य रुप से होती देखी गई है।

संक्रमण के कितने दिनों के बाद इसके लक्षण प्रकट होंगे, यह निम्न बातों पर निर्भर करता है–

(1) कुत्ता कितना संक्रमित है।

(2) उसने काटने के क्रम में कितना बड़ा हिस्सा जख्मी किया है।

(3) कुत्ते ने मस्तिष्क के कितना नजदीक जख्म पैदा किया है। यहाँ कुत्ता का अर्थ– हर वह रेबीज से संक्रमित जानवर है जिसने व्यक्ति को जख्मी किया है। हाँ, यह निश्चित है कि काटने के 2 सप्ताह के अन्दर वह संक्रमित जन्तु स्वयं मर जाता है।

लक्षण

(1) आरंभ में सिरदर्द तथा बदन–दर्द की शिकायत होती है।

(2) फिर बुखार आ सकता है।

(3) पानी न पी पाना, बाद में मांसपेशियों के संकुचन के कारण कोई भी तरल पदार्थ न ले पाना।

(3) मरीज की आवाज बदल जाती है।

(4) मुँह से ज्यादा मात्रा में लार टपकने लगता है।

रोकथाम

(1) आवारा कुत्तों का टीकाकरण करवा दें।

(2) उन्हें सार्वजनिक स्थलों पर प्रवेश न करने दें।

(3) पशु चिकित्सक से पालतू कुत्ते को भी टीकाकरण करके लाइसेंस दिलवा दें।

(4) आम आदमी को इस बारे में शिक्षित करें!

स्वास्थ्य कार्यकर्ता की भूमिका

(1) रोक थाम के सभी उपायों को अमल में लाने का बन्दोबस्त करें।

(2) रेबीज सक्रंमित मरीज या जानवर की सूचना सही केन्द्र तक पहुँचा दें।

(3) टीका बिना दिये कुत्ते को पहचान करके उसे टीका दिलवा कर लाइसेंस दिलवाएं।

(4) काटे हुये व्यक्ति को तुरन्त चिकित्सक के पास ले जाएं और उनके परामर्श के अनुसार उपचार कराएं।

क्या न करें ?

(1) कुत्ते के काटने की खबर मिलते ही उसके उपचार में विलम्ब न करें ।

(2) हर असामान्य मरीज से कुत्ते के काटने के बारे में पूछने की भूल न करें ।

(3) मरीज को उपचार के लिए प्रेरित करें उसे मरने का खौफ दिखाकर हतोत्साहित न करें ।

(4) पूरा उपचार चिकित्सक के परामर्श के अनुसार ही करें ।

1.3.9 संक्रामक रोगों में बुखार

1. सर्दी जुकाम (एन्फ्लूएन्जा) : वायरल संक्रमण, बच्चों तथा वृद्ध व्यक्तियों को होने वाली बीमारी।
2. निमोनिया– निमोकोकी के कारण जीवाणु संक्रमण।
3. डिप्थीरिया– गले में दर्द, निगलने में कठिनाई, विशेषकर बच्चों को।

टिप्पणी

4. टाइफाइड– सायं और सुबह के समय तेज बुखार, धड़कन कम होना, पेट में दर्द, विडाल टेस्ट पॉजिटिव, जीवाणु संक्रमण।
5. मेनिन्जाइटिस– सिर दर्द तथा उल्टी होना और गर्दन का सख्त होना।
6. तपेदिक (ट्यूबर कुलोसिस)– जीवाणु संक्रमण, सायं के समय कम बुखार होना, बलगम के साथ ज्यादा कफ निकलना तथा इसके साथ रक्त का निकलना।
7. खसरा– त्वचा पर दाने निकलना, किसी भी प्रकार की दवाई का असर न होना।
8. चेचक– विषाणु संक्रमण
9. गलसुआ (मम्प्स)– विषाणु संक्रमण
10. प्लेग– जीवाणु संक्रमण
11. गंभीर फोली कुलर टांसिलाइटिस– (जीवाणु संक्रमण)
12. सर्दी जुकाम (एनफ्लूएन्जा) – विषाणु
13. सेल्यूलाइटिस – जीवाणु संक्रमण
14. फोड़ा–फुन्सी – जीवाणु संक्रमण

पाठगत प्रश्न 1.4

रिक्त स्थान भरें :–

1) .... रोग में फेफड़ों में फाइब्रिन जमा हो जाता है।
2) टिटनेस रोग............................. नाम से भी जाना जाता है।
3) पानी न पी पाना .... रोग का एक लक्षण है।
4) टाइफाइड रोग की पहचान के लिए....................टैस्ट किया जाता है।

आपने क्या सीखा

इस पाठ में आपने संक्रामक रोगों, उनके विभिन्न प्रकार के विषय में पढ़ा। आपने संक्रामक रोगों के फैलने में सहायक कारकों के बारे में जाना। इसके साथ ही रोगों की रोकथाम व नियंत्रण के बारे में भी आपने समझा। विभिन्न रोगों जैसे चिकनपॉक्स, निमोनिया आदि रोगों की रोकथाम में स्वास्थ्य कार्यकर्ता की बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका है इस विषय में भी आपने विस्तृत जानकारी प्राप्त की।

टिप्पणी

पाठान्त प्रश्न

1. संक्रामक रोग को परिभाषित करें तथा रोगों के फैलने के विभिन्न कारकों के बारे में भी लिखिए।
2. खसरे के कारण, लक्षण व उपचार लिखिए।
3. टिटेनस रोग में स्वास्थ्य कार्यकर्ता की भूमिका पर चर्चा कीजिए।
4. निर्जलीकरण के विभिन्न लक्षण व उपचार लिखिए।
5. निमोनिया के विभिन्न लक्षण व रोकथाम के उपाय लिखिए।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

1.1

1. हवा
2. मच्छर
3. यौन संक्रामक
4. दूषित जल
5. रोग–प्रतिरोधी

1.2

1. (iii)
2. (i)
3. (iv)
4. (ii)

टिप्पणी

1.3

1) गलत
2) सही
3) सही
4) सही
5) सही

1.4

1) निमोनिया
2) धनुष्टंकार
3) रेबीज़
4) विडाल

2

संक्रामक रोग–2

पिछले अध्याय में हमने कुछ संक्रामक रोगों के बारे में पढ़ा है। इस अध्याय में हम कुछ अन्य संक्रामक रोगों के बारे में पढ़ेंगे। ये बीमारियाँ परजीवीजन्य संक्रमण (Parasitic Infections) हैं। इसके अलावा इस अध्याय में हम कुछ ऐसे अन्य संक्रमण के बारे में भी जानेंगे जो यौन–संबंधों से फैलते हैं। कुछ आम परजीवी संक्रमण हैं– मलेरिया, डेंगू, हुक वर्म, टेप वर्म, राउन्ड वर्म, फाइलेरिया आदि। ये बीमारियाँ, मच्छरों, मक्खियों, घाव या संक्रमित भोजन से फैलती हैं।

इसके अलावा असुरक्षित यौन–संबंधों से भी बहुत सी बीमारियाँ फैलती हैं जैसे– सिफलिस, गोनोरिया, एड्स, हिपेटाइटिस–बी।

उद्देश्य

इस पाठ के अध्ययन के पश्चात आप:

- विभिन्न तरह के परजीवी एवं बैक्टीरिया उनसे उत्पन्न होने वाली बीमारियाँ, उनके फैलने का ढंग, उपचार और रोकथाम के तरीकों के बारे में समझा सकेंगे;
- असुरक्षित यौन संबंधों के कारण फैलने वाले रोगों के लक्षण, उपचार और रोकथाम के उपायों पर प्रकाश डाल सकेंगे।

टिप्पणी

2.1 परजीवी जन्य बीमारियाँ (Parasitic Diseases)

आइए सबसे पहले एक खतरनाक रोग डेंगू के बारे में जानें–

2.1.1 डेंगू (Dengue)

यह विषाणुओं से फैलने वाली बीमारी है तथा इसे एडिस नामक मच्छर एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक फैलाता है। इस रोग के कारण बहुत से लोग मृत्यु के शिकार हो जाते हैं। प्रतिवर्ष दिल्ली शहर में 10,000 के करीब लोग इससे बीमार होते हैं और लाख प्रयास के बावजूद भी 300 से अधिक लोगों की मृत्यु हो जाती है।

डेंगू परजीवी का वाहक – एडिस मच्छर

यह स्वच्छ पानी में पनपने वाला मच्छर है। यह कन्टेनरों में रखे पानी, टायर, बोतल या कूलर में जमा पानी में भी आसानी से पनपता है और डेंगू का संवहन करता है। इसके फैलने का अनुकूलतम महीना है– जुलाई से अक्टूबर, जब जल के जमाव की संभावना अधिक रहती है। यह किसी भी लिंग एवं किसी भी आयु में हो सकता है।

चित्र 2.1: तीन सामान्य रोग फैलाने वाले मच्छर और उनके बैठने का सचित्र तरीका

डेंगू के लक्षण

लक्षण के आधार पर इसे तीन भागों में बाँटते हैं–

(1) डेंगू ज्वर

– यह बुखार के लक्षण के साथ संक्रमित व्यक्ति में प्रकट होता है और 7 से 10 दिनों में स्वतः ठीक हो जाता है।

(2) डेंगू हिमरेजिक सिन्ड्रोम (डेंगू रक्ताक्रमित व्याधि) DHS

– इस अवस्था में संक्रमित व्यक्ति के विभिन्न हिस्सों जैसे–नाक, कान, मसूढ़ों आदि से रक्त बहने लगता है।

– इसमें रक्त में प्लेटलेट्स की संख्या बहुत कम हो जाती है।

– लिवर का आकार बढ़ जाता है।

– रक्त–प्रवाह शिथिल होने लगता है।

इसके साथ बुखार आदि के लक्षण भी मौजूद रहते हैं।

(3) डेंगू–शॉक सिन्ड्रोम (DSS)

– यह सबसे खतरनाक स्थिति है– इसमें मरीज की मृत्यु की संभावना सबसे प्रबल होती है।

– इसमें पीड़ित व्यक्ति का रक्तचाप गिर जाता है।

– धड़कनें कमजोर हो जाती हैं तथा बुखार भी या तो बहुत तीव्र या बहुत कम हो जाता है।

उपचार

– डेंगू का उपचार बहुत सावधानी से करना होता है।

– प्रायः एन्टीबायोटिक औषधियों का असर नहीं होता है।

– उपचार, उत्पन्न लक्षणों और शारीरिक अवस्था को ध्यान में रखकर करना चाहिए।

– सबसे पहले एक IV (इन्ट्रावीनस) लाईन लगाकर आवश्यकतानुसार द्रव्य देते हैं।

– बुखार को नियंत्रित करने के लिए पैरासीटामोल की गोली देते हैं। भूलकर भी डिस्प्रिन न दें क्योंकि इसके एन्टीप्लेटलेट गुणों के कारण रक्तस्राव की संभावना और बढ़ जाती है।

चित्र 2.2: मच्छरदानी का प्रयोग

– मरीज को तत्काल चिकित्सक या स्वास्थ्य केन्द्र पर ले जाना चाहिए ताकि उसका संपूर्ण उपचार किया जा सके।

– रक्तस्राव हो रहा हो तो प्लेटलेट्स चढ़ाया जाता है ताकि खून बहने की प्रवृति कम हो सके।

टिप्पणी

रोकथाम व नियंत्रण के उपाय

- पानी की टंकियाँ, कूलर या पड़े टायरों आदि में जमा पानी को हटा दें तथा उनमें मच्छरों को पनपने से रोकें।
- मच्छर न काटें, इसका उपाय करें – जैसे मच्छरदानी लगाना या मच्छरों को दूर भगाने वाले रसायनों का प्रयोग करना।
- जमे हुए पानी में केमिकल डालकर इसके लार्वा और प्यूपा को पनपने से रोकें।
- ये मच्छर अक्सर दिन में या शाम में काटते हैं इसका ध्यान रहे।

चित्र 2.3: कूलर की नियमित सफाई

स्वास्थ्य कार्यकर्ता की भूमिका

(1) डी एच एस तथा डी एस एस के मरीजों का सघन उपचार कराना ज़रूरी है।

(2) रक्त अधिक बह गया हो तो रक्त चढवाने का प्रबंध करें। प्लेटलेट ही चढ़वाएं खासकर यदि उनकी संख्या 20,000 से कम तक पहुँच गई हो।

(3) मरीज को ढक कर रखें तथा पैर के हिस्से को ऊँचा कर के रखें।

(4) उपर्युक्त दोनों (DHS & DSS) के मरीजों को ऐसे केन्द्र में ले जाएं, जहाँ सघन–चिकित्सा इकाई (ICU) की सुविधा हो।

स्वास्थ्य कार्यकर्ता क्या न करें

(1) मरीज को भूलकर भी डिस्प्रिन की गोली न दें।

(2) प्रतिजैविक (एन्टीबायोटिक) औषधियों का प्रयोग न करें।

(3) बिना चिकित्सक की अनुमति और परामर्श के खून चढ़वाने की गलती न करें।

(4) स्टीरॉयड का प्रयोग न करें।

2.1.2 मलेरिया (Malaria)

मलेरिया रोग की अब बेहतरीन औषधियाँ आ गई हैं और उपचार के तरीके भी बहुत सुदृढ़ हो गये हैं। मलेरिया भी डेंगू की ही तरह मच्छरों से फैलने वाली बीमारी है। सरकार के सघन मलेरिया उन्मूलन अभियान के बावजूद भी यह रोग आज भी एक गंभीर समस्या है।

मलेरिया के बारे में जानने योग्य कुछ बातें –

(1) यह एनोफीलिज नामक मच्छर से फैलता है। मादा एनोफीलिज के भीतर मलेरिया पैरासाइट का लैंगिक विकास और प्रजनन होता है। जिसके माध्यम से यह मनुष्य के शरीर में संक्रमित होता है।

(2) मच्छरों पर नियंत्रण तथा मनुष्य में इसका संपूर्ण उपचार करके इस रोग को दूर भगाया जा सकता है– जैसा कि बहुत सारे विकसित देशों ने इसे अपने देश से दूर भगा रखा है।

(3) क्लोरोक्विन, प्राइमाक्विन के अलावा अब तो और भी नई दवाइयाँ आ गई हैं जिसके सहारे इस परजीवी का समूल नाश किया जा सकता है।

(4) मलेरिया हमारी लाल रक्त–कोशिकाओं पर आक्रमण करके उन्हें नष्ट करता है और व्यक्ति रक्ताल्पता तथा रक्ताल्पता जन्य अन्य बिमारियों का शिकार हो जाता है।

(5) यह हमारी रोग–प्रतिरोधक क्षमता (Immunity) को भी प्रभावित करता है।

चित्र 2.4: मलेरिया संक्रमण चक्र

(6) इससे मुक्त परजीवी (प्लाजमोडियम) हमारे शरीर में विषैले पदार्थ (Toxins) भी मुक्त (inject) करते हैं जो हमारे अन्य महत्वपूर्ण अंगों (लीवर, मस्तिष्क, किडनी) आदि को भी क्षति पहुँचाते हैं।

(7) सबसे खतरनाक मस्तिष्कीय मलेरिया (Cerebral malaria) है जो ज्यादातर प्लाजमोडियम फेल्सिपेरम के वजह से होता है।

(8) भारत में ज्यादातर चार तरह के मलेरियल पैरासाइट मिलते हैं–

(क) प्लाज्मोडियम वायवेक्स
(ख) प्लाज्मोडियम फाल्सिपेरम
(ग) प्लाज्मोडियम आवेल
(घ) प्लाज्मोडियम मलेरी

(9) मलेरिया के मच्छर अधिकतर शाम को काटते हैं, अतः उस समय बच्चों/बुजुर्गों को बचा कर रखे।

मलेरिया के कारण –

(1) प्लाजमोडियम नाम का पैरासाइट (परजीवी) हमारी लाल रक्त कोशिकाओं को सक्रंमित करके हमारे शरीर में टॉक्सिन (विषैले पदार्थ) मुक्त करता है–वही मलेरिया का मुख्य कारण है।

(2) प्लाजमोडियम मादा एनोफेलीज के द्वारा एक मरीज से दूसरे मरीज में स्थानांतरित होता है।

चित्र 2.5: मलेरिया का प्रसार

टिप्पणी

लक्षण

(1) संक्रमण के कुछ दिनों के बाद यह परजीवी हमारी रक्त कोशिकाओं को नष्ट करता है और व्यक्ति में निम्न लक्षण दिखाई देते हैं–

(क) बुखार–कंपकपी के साथ।

(ख) रक्ताल्पता–कमजोरी और वजन कम होना।

(ग) भूख का न लगना आदि लक्षणों के साथ आता है। बुखार हमेशा एक निश्चित समय पर ही आता है।

चित्र 2.6: उच्च बुखार, ठण्ड लगना व कंपकपी, मलेरिया बुखार के लक्षण

जटिलताएं (Complications)

(1) व्यक्ति का प्लीहा (स्प्लीन) बढ़ जाता है।

(2) शरीर में हिमोलाइटिक एनीमिया हो जाता है जिसके साथ पीलिया भी हो सकता है, जो एक गंभीर स्थिति है।

(3) सेरिब्रल मलेरिया–परनीसियस मलेरिया–मस्तिष्क तक मलेरिया का पहुँच जाना।

(4) कभी–कभी फेफड़े में संक्रमण और सूजन भी होते देखे गये हैं।

रोकथाम

(1) बुखार के हर केस में तीव्र–ज्वर के समय स्लाइड बनाकर उसका रिकार्ड रखना एवं संबंधित विभाग तक सूचना भेजना।

(2) मच्छरदानी आदि के सहारे मच्छरों से बचने का उपाय करना।

(3) छिड़काव आदि के सहारे मच्छरों के पनपने की जगह से उनका उन्मूलन करना।

(4) जितना शीघ्र हो सके उपचार करते हुए, कोर्स पूरा कर रोग का निदान करना।

स्वास्थ्य कार्यकर्ता की भूमिका

(1) बुखार के मरीजों का पता लगाकर उनकी जाँच और निदान का उपाय करना।

(2) रक्त की स्लाइड बनाकर प्रयोगशाला या स्वास्थ्य केन्द्र में भेजना।

(3) मलेरिया–पॉजिटिव केस को यथाशीघ्र चिकित्सक के पास भेजना।

चित्र 2.7: मलेरिया की जाँच

(4) मच्छर उत्पन्न होने वाली जगहों की खोजकर उसके लार्वा–प्यूपा को नष्ट करने का उपाय करना।

(5) कीटाणुनाशकों का उचित छिड़काव, तथा

(6) आम लोगों को मलेरिया के बारे में शिक्षित करना।

स्वास्थ्य कार्यकर्ता क्या न करें

(1) मरीज के डायग्नोसिस के बिना और बिना चिकित्सक के परामर्श के उपचार प्रारंभ न करें (एन्टीमलेरियल औषधियों का)।

(2) मरीज को आधी–अधूरी दवा खाने की कभी सलाह न दे।

(3) उपचार के दौरान यदि कोई जटिलता दिखाई दे तो उसका उपचार चिकित्सक के पास ले जाकर उचित जाँच पड़ताल के अनुसार करें।

याद रखें

कोई भी बुखार डेंगू या मलेरिया हो सकता है अतः उसका पूरा उपचार एवं निदान आवश्यक है।

2.2 कुष्ठ रोग (Leprosy)

बहुत प्राचीन समय में यह एक निन्दनीय बीमारी के रूप में जाना जाता था। लाइलाज एवं संक्रामक होने के कारण ऐसे रोगियों को पहले समाज से बहिष्कृत कर दिया जाता था किन्तु, आज के समय में पूरी तरह इलाज कराने पर यह 100 प्रतिशत तक ठीक हो जाता है। *माइको बैक्टीरियम लेप्री* द्वारा उत्पन्न होने वाली यह बीमारी हमारे स्नायु और त्वचा को प्रभावित करती है।

कुष्ठ रोग के बारे में कुछ जानने योग्य बातें

(1) अब यह सौ प्रतिशत तक ठीक होने वाली बीमारी है।

(2) यह धीरे–धीरे फैलती है।

(3) घनी आबादी में रहने वाले लोगों को इसका खतरा अधिक रहता है।

(4) निम्न आय वाले गरीब लोग इसके अधिक शिकार होते हैं।

(5) यह किसी भी आयु के पुरुष या महिला को समान रूप से प्रभावित करता है।

(6) रोगी अपनी शादी, संतानोत्पत्ति तथा घर के सभी कार्य सामान्य तरीके से कर सकता है।

चित्र 2.8: कुष्ठ रोग प्रभावित अंग

(7) स्वास्थ्य केन्द्रों पर उपलब्ध मुफ्त औषधि उपचार के द्वारा इसे फैलने से रोका जा सकता है।

टिप्पणी

लक्षण

(1) त्वचा पर रक्तिम धब्बे का होना, उस पर पसीना नहीं आना।

(2) पिन चुभाने या गरम केन के स्पर्श का उस पर कोई संवेदना महसूस नहीं होना।

(3) उन धब्बों में कोई जलन या खुजली नहीं होना।

(4) निकट के स्नायुओं का मोटा हो जाना, जैसे अल्नर नर्व।

ध्यान रहे

त्वचा पर मौजूद जन्मजात धब्बे, या उस पर खुजली होना या त्वचा पर मौजूद शल्क (Scaling) या त्वचा पर मौजूद श्वेत दाग– ये सब कुष्ठ रोग नहीं है– जैसा कि आमतौर पर गाँवों में समझा जाता है।

इसके अलावा कालान्तर में इसके रोगियों में कई जटिलतायें भी उत्पन्न हो सकती हैं–

(1) कहीं जलने या चोट लगने पर हाथ–पैर में फफोला या घाव बन जाता है, जो निरन्तर बढ़ता जाता है– उचित उपचार न हो तो यह बढ़ता ही जाता है।

(2) उंगलियाँ और पैर टेढ़े–मेढ़े होकर विकलांगता उत्पन्न कर सकते हैं।

(3) बिना चोट के भी पैर की उंगलियों के बीच फफोला या अल्सर बन सकता है– क्योंकि, उनमें संवेदी–सूचक, रोग के प्रभाव से नष्ट हो जाते हैं।

स्वास्थ्य कार्यकर्ता की भूमिकाः–

(1) स्वास्थ्य कार्यकर्ता लोगों को बताएं कि छूने मात्र से यह बीमारी नहीं फैलती है।

(2) स्वास्थ्य कार्यकर्ता लोगों को बताएं कि ऐसे रोगियों को बहिष्कृत न करें। यह बीमारी लाइलाज नहीं है– बल्कि, इलाज से पूरी तरह ठीक हो सकती है।

(3) इसके बारे में व्याप्त सामाजिक कुंठा और भय को दूर भगाकर लोगों को इलाज के लिए प्रोत्साहित करें।

(4) इस रोग का पता लगाकर इसकी सूची उपयुक्त केन्द्र को सौंपे ताकि इसका उन्मूलन किया जा सके।

(5) संदिग्ध केस को चिकित्सक के पास ले जाकर उसका उचित निदान और उपचार कराएं।

स्वास्थ्य कार्यकर्ता क्या न करें

(1) समाज में व्याप्त कुरीतियों और कुमान्यताओं को बढ़ावा न दें।

(2) कुष्ठ रोगियों के साथ बुरा व्यवहार न करें और उनके उपचार में घृणा और उपेक्षा न करें।

(3) मरीजों में सुधार होने पर आधे–अधूरे इलाज को प्रोत्साहित न करें।

2.3 तपेदिक (ट्यूबरक्यूलोसिस)

टीबी, राजरोग, तपेदिक, यक्ष्मा आदि नामों से ख्यात यह बीमारी ऐसे तो पूरे विश्व में व्याप्त है पर, विकासशील देशों में इसकी संख्या सबसे अधिक है। हर साल लगभग 2 से 3 लाख लोग इसके शिकार होते हैं।भारत में भी यह बीमारी बहुतायत में पायी जाती हैं।

कुछ जानने योग्य बातें

1. तपेदिक निम्न और निम्न–मध्यमवर्गीय लोगों को अधिक होता है।
2. भीड़–भाड़ वाले क्षेत्र में यानि घनी आबादी में रहने वालों के बीच इसका प्रसार अधिक तेजी से होता है।
3. HIV संक्रमित मरीजों या वैसे मरीज जिनकी रोग–प्रतिरोधक क्षमता (Immunity) कम हो गई है – उनमें यह जल्दी घर बना लेता है।
4. आज कल इसका इलाज बहुत आसान है, किन्तु आधे–अधूरे इलाज के कारण बहु औषधि प्रतिरोधी (मल्टी–ड्रग–रेज़िस्टेन्ट) केस की संख्या बढ़ती जा रही है। यह खतरनाक है।
5. ज्यादातर यह हमारे फेफड़ों को प्रभावित करता है, पर लिम्फ–ग्रन्थि, हड्डी, आँत, मस्तिष्क आदि की टीबी के भी खूब मरीज मिलते हैं।

चित्र 2.9: तपेदिक एक वायु संचारित रोग है

6. सरकार और अन्य संगठन टीबी–उन्मूलन के लिए DOTS आदि कई कार्यक्रम चला रहे हैं– इसका सुखद परिणाम भी आ रहा है, किन्तु आधे–अधूरे में ही दवा छोड़ने वालों की संख्या भी कम नहीं है, जो इनके उन्मूलन में बड़ी बाधा है।
7. पूरे कोर्स का इलाज होने से यह पूरी तरह ठीक हो सकता है।

टिप्पणी

टीबी कैसे फैलती है

यह वायुमार्ग से सांस के रास्ते फैलती है। टीबी के मरीज के खाँसने से टीबी को बैक्टिरिया हवा में निकलकर निकट के आदमी के साँस से श्वास नली के रास्ते बैक्टीरिया फेफड़ों में प्रवेश कर जाता है। फिर धीरे–धीरे अपना प्रसार करता है। टीबी **माइकोबैक्टीरियम ट्यूबरकुली नामक बैक्टीरिया** के द्वारा होता है।

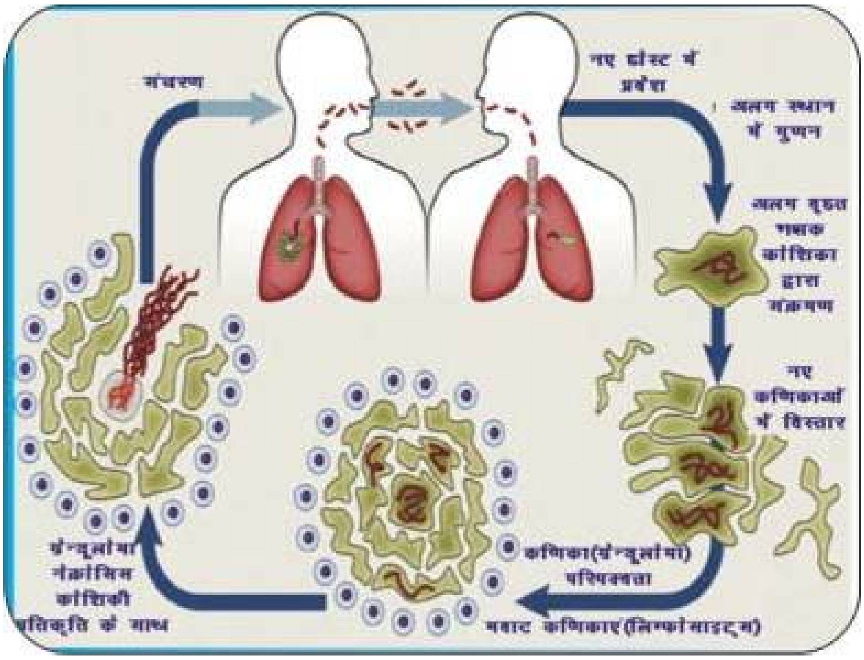

चित्र 2.10(क): टी.बी. का संक्रमण

इसके कुछ जन्तुजन्य प्रजाति, गाय/भैंस के अनपाश्च्युराइज्ड दूध के कारण भी होते हैं और फैलते हैं। कमजोर इम्यूनिटी वाले व्यक्ति इससे जल्दी प्रभावित हो जाते हैं।

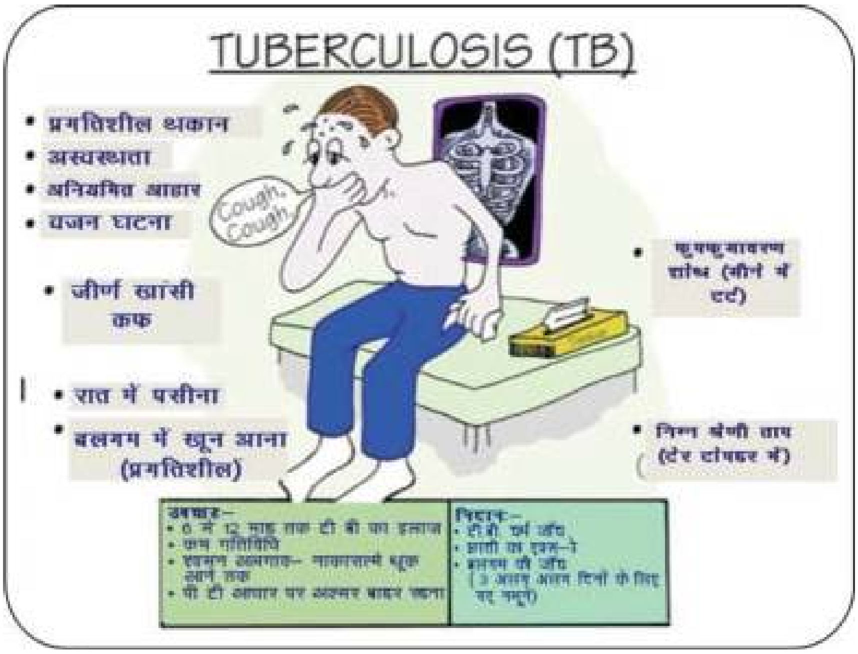

चित्र 2.10(ख): संक्रमण एवं लक्षण

लक्षण

(1) फेफड़ों की टीबी

– खाँसी – ऐसी खाँसी जो 3 सप्ताह से अधिक होने पर भी ठीक नहीं हो रही है।

– बुखार – रात के समय हल्का बुखार आते देखा गया है।

– खाँसी के साथ खंखार में खून भी आ सकता है– हीमोप्टीसिस।

– भूख कम लगना तथा शरीर का उत्तरोत्तर दुबला और कमजोर होते जाना।

चित्र 2.11: तपेदिक में भार निरंतर कम होता है

ये सब लक्षण फेफड़ों की टीबी के हैं– इसके अलावा दम फूलना, फेफड़ों में पानी भर जाने से सांस लेने में कठिनाई, प्रभावित हिस्से में ये सब लक्षण भी मिल सकते हैं।

(2) आँत की टीबी

इसमें मरीजों को भूख कम लगना, उल्टी, पतला पाखाना, कब्ज, आंत्रावरोध (Intestinal Obstruction) के लक्षण मिल सकते हैं। बुखार भी साथ साथ हो सकता है। कालान्तर में कई जगहों से आँतें फट भी जाती हैं। इसके कारण एक्ज्यूडेटिव द्रव (Exudative fluid) भी पेट में जमा हो जाता है।

(3) मस्तिष्क और हड्डी की टीबी

प्रभावित हड्डी– ज्यादातर रीढ़ की हड्डी में फ्रैक्चर हो जाता है, जिसके कारण कमर दर्द, पैर का लकवा (पैराप्लेजिया), दौरे (convulsion), तथा अनेकों मस्तिष्कजन्य लक्षण मिलते हैं, जो प्रभावित जगह के ऊपर पड़ने वाले दबाव पर निर्भर करते हैं।

बच्चों तथा बड़ों में लिम्फ–ग्रन्थियों में भी टीबी होता हुआ देखा गया है– इनकी ठीक से जाँच कर उचित इलाज की जरूरत है। इसके अलावा ट्यूबरकुलस मेनिन्जाइटिस एवं गर्भाशय में भी टीबी हो सकती है। इसके कारण बंध्यापन भी होता हुआ देखा जाता है।

निदान

1. खखार में AFB (एसिड फास्ट बैसीलाई) का मिलना इसका सबसे प्रामाणिक जाँच है।
2. X Ray से छाती, हड्डी की टीबी को हम लोग देख सकते हैं।
3. CSF के परीक्षण से एवं MRI की जाँच से मस्तिष्कीय टीबी को जाँचते हैं।
4. लिम्फ नोड्स के FNAC जाँच द्वारा ग्लैंड टीबी का पता लगा सकते हैं।
5. इसके अलावा जीन Xpert टेस्ट से भी टीबी की जाँच कर सकते हैं।
6. Ascitic-Fluid के परीक्षण से भी टीबी की जाँच होती है।
7. इन सब जाँच के साथ क्लिनिकल एसेसमेन्ट भी उतना ही जरूरी है।

टिप्पणी

उपचार

चित्र 2.12: टी.बी. रोगी की जाँच

ट्यूबरक्यूलोसिस उपचारणीय बीमारी है। टी. बी. के मरीज जिसके कफ में एसिड फास्ट बैसिली (ए.एफ.बी) पॉजिटिव होता है, उसे स्वस्थ लोगों से अलग रखें, क्योंकि ये संक्रमित रोग है । टी बी पूर्ण रूप से ठीक हो सकता है, यदि मरीज पूरी अवधि तक एंटी–ट्यूबरकूलर दवाई लेता रहे। अधिकांश एंटी–ट्यूबरकूलर दवाइयाँ रिफैम्पसिन, आइसोनरइज्ड, थियासिटाजोन, एथाम्बुटोल तथा पिराजिनामाइड होती हैं जिन्हें मुँह से लिया जाता है परन्तु, स्ट्रिप्टोमाइसिन मांसपेशियों के भीतर सूई के द्वारा दिया जाता है। मरीज घर पर इलाज करा सकता है, परन्तु, कुछ मरीज जिन्हें गंभीर कठिनाइयाँ होती हैं, उन्हें अस्पताल में भर्ती कराने की आवश्यकता है। महिला की छाती में ट्यूबरक्यूलोसिस होने के मामले में बच्चों को दूध पिलाने दिया जाना चाहिए। बच्चे का इलाज किया जाना चाहिए और साथ ही बी सी जी का टीका लगवाया जाना चाहिए।

डॉट्स DOTS (सीधे उपचार का अल्पकालिक कोर्स) तकनीक

आजकल ज्यादातर मरीजों का इलाज तकनीक के द्वारा किया जाता हैं। स्वास्थ्य कर्मचारी के पर्यवेक्षण में मरीज को दवाइयों की समुचित खुराक 6 से 8 महीने तक लेनी होती है। गहन अवधि मे स्वास्थ्य कर्मचारी की उपस्थिति में मरीज को दवाइयाँ लेनी चाहिए और पहली खुराक स्वास्थ्य कर्मचारी की उपस्थिति में लेनी चाहिए। मरीज इनमें से कोई एक दवाई डॉक्टर की सलाह के अनुसार ले सकता है : पिराजिनामाइड, एथाम्बुटोल, स्ट्रेप्टोमाइसिन रिफाम्पिसीन।

चित्र 2.13 (क): डॉट्स (DOTS) एस द्वारा टी बी का उपचार

यदि मरीज नियमित रूप से उपचार नहीं कराता है तो उसके भीतर औषधि के विरुद्ध प्रतिरोधात्मक शक्ति विकसित हो जाती है।

निवारण एवं नियन्त्रण

(1) जन्म के समय बी.सी.जी के टीके द्वारा।

(2) मरीज को कफ और नाक बहने के दौरान, अपने मुँह पर रूमाल रखना चाहिए।

(3) यदि ट्यूबरक्यूलोसिस के लक्षण प्रतीत हो तो मरीज के बलगम की तीन दिनों तक संयुक्त रूप से जाँच की जाए।

(4) मरीज का पूरी तरह से उपचार करना चाहिए।

(5) स्वास्थ्य कर्मचारी के सामने डॉट्स दवाई लेनी चाहिए ।

(6) एन्टी–ट्यूबरकुलर दवाइयों की आपूर्ति निरन्तर रूप से करनी चाहिए।

(7) उपचार के सम्बन्ध में, मरीज कितना ठीक हो रहा है, इसका पर्यवेक्षण एवं मानिटरिंग की जानी चाहिए।

(8) सभी ट्यूबरक्यूलोसिस मरीजों के मामले में एड्स/एच आइ वी की स्क्रीनिंग की जानी चाहिए।

(9) टी बी के निदान के लिए ट्यूबर क्यूलोसिस परीक्षण विश्वसनीय नही है। पॉजिटिव परीक्षण दर्शाता है कि संबंधित व्यक्ति टी बी से संक्रमित है। दूसरी ओर नेगेटिव परीक्षण ट्यूबरक्यूलोसिस की सम्भावना से इनकार नहीं करता है।

स्वास्थ्य कार्यकर्ता की भूमिका

ट्यूबरक्यूलोसिस को नियन्त्रित करने के लिए स्वास्थ्य कर्मचारियों को निम्नलिखित तथ्यों का ध्यान रखना चाहिए –

(1) ट्यूबरक्यूलोसिस के सभी मरीजों को एचआईवी परीक्षण तथा काऊंसलिंग का प्रस्ताव दें।

(2) ट्यूबरक्यूलोसिस मरीजों की एच आई वी जाँच ।

(3) हमारा लक्ष्य ट्यूबरक्यूलोसिस मरीजों में डॉट्स ट्रीटमेन्ट को बढ़ावा देना और साथ ही एच आई वी को भी देखना है।

(4) सभी ट्यूबरक्यूलोसिस मरीजों में एच आई वी तथा एड्स निदान के लिए स्क्रीनिंग करना ।

(5) क्षेत्रीय स्तर पर टीबी तथा एच आई वी/एड्स समन्वयन समिति की स्थापना करना।

टीबी को नियन्त्रित करने में स्वयं सहायता समूह ट्यूबरक्यूलोसिस तथा एच आई वी/एड्स से पीड़ित लोगों की टी.बी. निवारण कार्यक्रम द्वारा सहायता मे महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं–

(1) उनके पारिवारिक सदस्यों को स्वास्थ्य शिक्षा ।

(2) टी बी के प्राथमिक लक्षणों के बारे में सभी व्यक्तियों तथा उनके परिवार के लोगों को इसकी गंभीरता एवं जोखिम के बारे में बताना चाहिए। उन्हें डॉट्स के बारे में जानकारी देनी चाहिए और टीबी मरीजों को, अपने पारिवारिक सदस्यों के टी बी निवारण के लिए प्रत्येक सावधानी बरतनी चाहिए।

(3) एड्स तथा टी बी कार्यक्रमों के बारे में मीडिया महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है।

(4) एन जी ओ (गैर सरकारी संगठन) भी जन–समुदाय में टी बी / एड्स के नियन्त्रण में सहायक साबित हो रहे हैं।

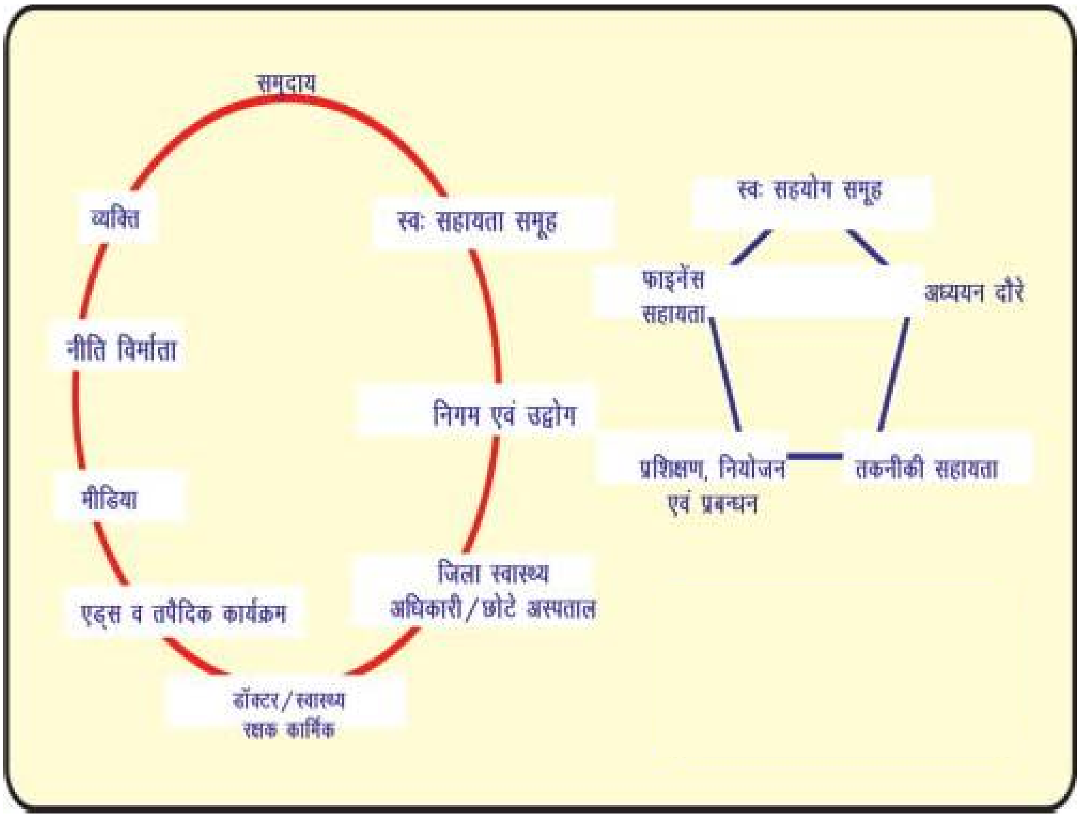

चित्र 2.14: टी. बी. नियंत्रण

2.4 गलघोंटु (डिफ्थीरिया)

गलघोंटु नाम से प्रसिद्ध यह बीमारी अक्सर बच्चों में हुआ करती है, यह एक गम्भीर संक्रामक बीमारी है। यह **कोर्नीबेक्टीरियम डिफ्थीरी नाम के जीवाणु** से होती है। इसमें मूलतः टॉन्सिल, नाक और गला संक्रमित होता है। ये सूक्ष्म जीवाणु कृत्रिम झिल्ली बनाते हैं, जिसके कारण साँस लेने में घुटन महसूस होने लगती है।

डिप्थीरिया के बारे में कुछ जानने योग्य बातें

यह अक्सर सर्दी के मौसम में होता है।

1. यह पाँच वर्ष से कम के बच्चों को अधिक प्रभावित करता है।
2. सघन टीकाकरण अभियान के कारण अब डिप्थीरिया के मरीजों की संख्या कम हो गई है।
3 DPT नाम से इसका टीका कुकुर खाँसी और टिटेनस के साथ हमारे राष्ट्रीय टीकाकरण अभियान में शामिल है।
4. गाँव में इसे पहले गलघोंटु कहा जाता था। इसके निवारण हेतु लोग झाड़–फूँक आदि के चक्कर में पड़ जाते थे, और, परिणामतः अक्सर बच्चों को मौत के मुँह में पहुँचा देते थे।

लक्षण

1. बुखार के साथ गले में दर्द।
2. गले में झिल्ली बन जाती है, जो टॉन्सिल्स और फेरिन्क्स के साथ चिपका रहता है और हटाने पर रक्त निकलता है।
3. बच्चों को दूध या भोजन निगलने में कठिनाई होती है।
4. वायुनलिका अवरूद्ध हो जाने से तत्काल मृत्यु हो सकती है।

उपचार

1. प्रभावित बच्चे को दूसरे बच्चों से अलग रखें।
2. प्रभावित बच्चे को तुरंत चिकित्सक के पास या अस्पताल लेकर जाएँ।

स्वास्थ्य कार्यकर्ता की भूमिका

1. बच्चों को समय पर DPT का टीका लगवाने के लिए प्रेरित करें।
2. डी.पी.टी. टीके को 4–8°C तापमान पर सुरक्षित रखें।
3. प्रभावित बच्चों की सूची बनाकर तत्काल स्वास्थ्य अधिकारियों को सूचित करें।

स्वास्थ्य कार्यकर्ता क्या न करें

1. यह पता चलते ही कि यह डिप्थीरिया का रोगी है, उसका इलाज खुद करने की कोशिश न करें।
2. झाड़–फूँक जैसे इलाज को प्रोत्साहित न करें।

2.5 निमोनिया

यह बीमारी निमोकोक्कस के कारण होती है अर्थात् इसके जीवाणु फेफड़े को संक्रमित करते हैं और श्वसन प्रणाली गंभीर रूप से संक्रमित हो जाती है। यदि सही ढंग से इलाज न किया जाए तो बच्चों की मृत्यु हो

टिप्पणी

सकती है। डाक्टर की देखरेख में बच्चों का इलाज घर पर भी किया जा सकता है।

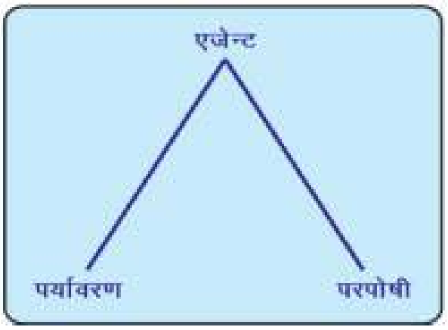

निमोनिया के कुछ प्रमुख तथ्य–

1) डिप्लोकोक्कस निमोनिया के कारण होता है।
2) फेफड़े के छिद्रों मे फिब्रिन भर जाने के कारण सांस लेने में रूकावट होती है।
3) छिद्रों में रूकावट के कारण सांस लेने में कठिनाई होती है।
4) यह वायुजनित संक्रामक बीमारी है मतलब यह संक्रमित व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति में वायु के द्वारा पहुंच जाती है।

परपोषी होस्ट : दो महीने से लेकर पांच वर्ष की आयु वाले लड़के और लड़कियों में।

पर्यावरण

1) भीड़ – भाड़
2) खराब पोषाहार (कुपोषण) महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है।
3) गरीब व्यक्ति पर्याप्त कपड़े नहीं खरीद सकता।

अन्य कारक

निमोनिया, मेनिन्जोकोक्कल मेनिन्जाइटिस, ट्यूबरक्यूलोसिस तथा विभिन्न प्रकार के विषाणुओं के कारण भी हो जाता है।

चिकित्सीय लक्षण

1) जब हम बच्चों से बात करते हैं तो बच्चे का ऊंघना यानी बात को ध्यान से न सुनना।
2) कुपोषण वाले अधिकतर बच्चे – कुपोषण के लक्षण।
3) असामान्य श्वसन – ध्वनिसहित व तीव्र।
4) कफ, सर्दी, नाक बहना एवं बुखार आना।
5) अधिक नींद (सुस्ती) आना।
6) तरल भोजन न ले पाना।
7) गंभीर मामलों में बच्चा ऐंठ जाता है।
8) साइनोसिस अर्थात् नाखून और होंठ नीले रंग का हो जाना।

उपचार (निदान)

1) एन्टीबायोटिक एवं एंटीपाइरेटिक जैसे पैरासीटामॉल का उपयोग करें।

2) बच्चे को गर्म रखें।
3) बच्चे को समुचित पौष्टिक आहार दें (खाना बन्द नहीं करना चाहिए)।
4) गंभीर मामलों को अस्पताल/प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र ले जाएं।
5) गंभीर मामलों मे ऑक्सीजन की आवश्यकता होती है।
6) मां का दूध निरन्तर पिलाएं।

निम्नलिखित के कारण मृत्यु तक हो सकती है।

– मरीज का इलाज न कराने पर।
– अस्पताल द्वारा मरीज को देर से उपचार देने पर।
– अपर्याप्त उपचार।

निवारण

1. बच्चे को निमोनिया से बचाने के लिए माँ का दूध पिलाना अच्छा है।
2. भीड़–भाड़ धूल–मिट्टी, धुएं वाले वातावरण से बचें।
3. स्वच्छ एवं संतुलित आहार खाएं।
4. बच्चे को पर्याप्त आराम दें।
5. सर्दी से बचाने के लिए बच्चे को गर्म कपड़े पहनाएं।
6. निमोनिया के बारे मे माताओं को स्वास्थ्य शिक्षा प्रदान करें।

पाठगत प्रश्न 2.1

रिक्त स्थान भरिए –

1. डेंगू परजीवी का वाहक .... मच्छर है।
2. मलेरिया हमारी .... रक्त कोशिकाओं पर आक्रमण करके उन्हें नष्ट करता है।
3. .... रोग में पिन चुभाने से रोगी को कोई संवेदना महसूस नहीं होती।
4. 3 सप्ताह से अधिक दिनों तक खांसी होना .... रोग का प्रमुख लक्षण है।
5. गलघोंटू .... वर्ष से कम आयु के बच्चों को अधिक प्रभावित करता है।

2.6 भोजन विषाक्तता (Food Poisoning)

भोजन में प्रदूषण–हमारे स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाला एक बड़ा कारक है। बहुत सारे जीवाणु, अपच्य

टिप्पणी

रसायन हमारे खाने को प्रदूषित करके पतला दस्त, उल्टी, पेट दर्द, आदि रोगों का कारण बनते हैं और हमें बीमार बना देते हैं। अक्सर लोग पार्टी शादी–ब्याह आदि समारोह में या गन्दे हाथों से खाकर, बासी सड़ा–गला खाना खाकर, बाजार में खुले में रखे भोजन को खाकर या प्रदूषित पानी पीकर खाद्य प्रदूषण के शिकार हो जाते हैं।

प्रदूषित भोजन के बारे में जानने योग्य कुछ बातें –

(1) डिब्बा बंद खाना अक्सर भोजन को विषाक्त बनाता है, कुछ तो उसमें मौजूद खाद्य परिरक्षक (फूड प्रिजरवेटिव) की वजह से, कुछ गलत रख–रखाव के कारण या फिर निर्धारित अवधि तक उपयोग न होने की वजह से।

(2) बाजार में खुले में रखे भोज्य पदार्थ अथवा ठेले की खाद्य सामग्री का प्रयोग न करें क्योंकि वे उन पर पड़ती धूल और मक्खियों के कारण प्रदूषित हो जाते हैं।

(3) ढ़ाबे पर बनने वाला खाना प्रायः कई दिनों तक फ्रिज में रखे रहने से खराब हो जाता है जिसे खाने से सेहत पर बुरा प्रभाव पड़ता है।

(4) घर में भी बाहर रखा खाना एवं लंबे समय तक फ्रिज में रखा खाना भी भोजन विषाक्तता का बड़ा कारण है।

(5) उर्वरक और कीटनाशक का अधिक और अनुचित प्रयोग भी हमारे भोजन को प्रदूषित करता है।

(6) खाने के पहले साबुन से अच्छी तरह हाथ धोने से हम खाद्य–प्रदूषण के अलावा और भी कई संक्रामक रोगों से बच सकते हैं।

(7) प्रदूषित भोजन खाने से आँत में कैंसर और कई अन्य बीमारियों जैसे आई.बी.एस. (Irritable Bowel Syndrome), अल्सरेटिव कोलाइटिस आदि का भी खतरा रहता है।

(8) साफ पानी पीकर हम कई भोजन विषाक्तता के कारणों से बच सकते हैं।

लक्षणः–

(1) कभी–कभी पखाने के साथ खून या म्यूकस भी आता है जिसे गंभीरता से लेने की जरूरत है।

(2) उल्टी, मतली या पेट फूल जाना।

(3) पतला पखाना।

(4) निगलने में कठिनाई।

(5) पेट में दर्द।

(6) आँख से धुंधला दिखाई देना।

(7) नसों का कमजोर पड़ जाना।

(8) शरीर में जल की कमी।

चित्र 2.15: फूड प्वायजनिंग के लक्षण

भोजन विषाक्तता के कारण

(1) ज्यादातर यह सालमोनेला, क्लोस्ट्रीडियम, बॉट्यूलीनम, स्टैफायलोकोकस, शिजेला आदि बैक्टीरिया के कारण हुआ करता है।

(2) इसके अलावा कई रसायन– यथा आर्सेनिक आदि भी इसके कारण हैं।

(3) बहुत से पौधे और उसके फल भी फूड–प्वायजनिंग करते हैं।

(4) समुद्री खाद्य पदार्थ यथा झींगा मछली आदि भी इसके कारण हैं।

(5) प्रदूषित उर्वरक तथा कीटनाशकों की अधिक मात्रा भी फूड–प्वायजनिंग की वजह बनती है।

(6) बिना हाथ धोये खाना खाने की आदत भी इसका एक बड़ा कारण है।

(7) भोजन पकाने की प्रक्रिया में यदि अस्वच्छता, अशुद्धता बरती गई हो तो भोजन विषाक्त हो सकता है। सामूहिक भोज में इसकी संभावना अधिक होती है।

चित्र 2.16: भोजन विषाक्तता (फूड प्वॉयजनिंग)–जानकारियाँ

रोकथाम के उपाय

(1) भोजन व्यवस्थापक को इन बातों पर ध्यान देना चाहिए –

- खुद संक्रामक रोग से ग्रस्त न हों।
- टायफायड का टीका लगवा लें तथा टोपी पहनें।
- नाखून छोटे–छोटे रखें तथा खुद को पूरी तरह साफ–सुथरा रखें।

(2) बूचड़खाने की देखभाल जरूरी है। उसकी रोज और नियमित खूब अच्छी तरह साफ सफाई हो। पशुओं को काटने के पहले और बाद में उसकी जाँच पशु चिकित्सक करें कि उसे कोई बीमारी तो नहीं है।

(3) दूध का पाश्चुरीकरण करें।

(4) बासी खाना न खाएं! ताजा पकाया हुआ खाना खाकर तुरन्त खत्म कर दें।

(5) रेफ्रीजरेटर में एक दो दिन से अधिक पकाया हुआ खाना न रखें।

(6) छने हुए पानी का ही प्रयोग करें।

(7) डब्बा बन्द खाना का प्रयोग न ही करें तो अच्छा है।

(8) रहने के स्थान, टेबल, कुर्सी, बरतन आदि को अच्छी तरह साफ करके रखें। अपने आसपास धूल, मक्खी, चूहे आदि को न पनपने दें।

(9) कूड़े–करकट का निपटारा तुरन्त करें, उसे जमा न रहने दें।

उपचार

(1) भोजन विषाक्तता के मरीज को तुरन्त ओ.आर.एस. (ORS) उपलब्ध कराएं और लेने की सलाह दें।

(2) फूड–प्वायजनिंग के अनेक कारण हो सकते हैं अतः योग्य चिकित्सक के पास ले जायें ताकि समय पर सही निदान और सही उपचार हो सके।

स्वास्थ्य कार्यकर्ता की भूमिका

(1) अगर कहीं फूड–प्वायजनिंग की संभावना लग रही हो तो तुरन्त संबंधित अधिकारी को सूचना दें।

(2) प्राथमिक उपचार के बाद तुरन्त चिकित्सक के पास भेजने की सलाह दें और हो सके तो व्यवस्था करें।

(3) होटल, ढ़ाबे, रेस्टोरेन्ट आदि में खाने की निगरानी करें और लोगों को खुले में रखी दुकान की चीजों को खाने से मना करें तथा उसके खतरे के बारे में बताएं।

(4) अपने आस–पास ऐसे रोगियों की निगरानी करें।

पाठगत प्रश्न 2.2

बताएं कि निम्नलिखित कथन सत्य हैं अथवा असत्य –

1. अधिकतर भोजन विषाक्तता के मामले डिब्बे वाले खाना खाने से होते हैं। ( )
2. भोजन का उर्वरक एवं कीटनाशक का प्रयोग करने से दूषित हो जाना भी भोजन विषाक्तता होने का एक कारक है। ( )
3. फूड प्वाइजनिंग में समुचित रूप से कूड़े – कचरों के निपटाये जाने की भूमिका नहीं होती है। ( )

2.7 यौन संक्रमण

बहुत सी ऐसी बीमारियाँ हैं जो यौन संबंधों के दौरान एक–दूसरे में संक्रमित होती और फैलती हैं। अनेक

प्रोटोजोआ, बैक्टीरिया या वायरस यौन मार्ग से संचरित होते हैं। इनमें कुछ बीमारियों के नाम नीचे दिये जा रहे हैं–

(1) सिफलिस

(2) गोनोरिया

(3) ट्राइकोमोनस वेजाइनलिस

(4) हिपेटाइटिस–बी

(5) एड्स (AIDS-Acquired Immune Deficiency Syndrome)

यौन संक्रमण फैलने के कारक

(1) उम्र–20 से 50 वर्ष की उम्र तक।

(2) लिंग–यह महिलाओं और पुरुष दोनों में होते हैं– पर पुरुष महिलाओं की अपेक्षा ज्यादा प्रभावित होते हैं।

(3) निम्न आर्थिक–सामाजिक हालात में यह ज्यादा होता और ज्यादा फैलता है।

(4) एक जगह से दूसरी जगह विस्थापन के साथ यह एक जगह से दूसरी जगह विस्थापित हो जाता है।

(5) अशिक्षित और लापरवाह लोगों में यह ज्यादा होता है।

(6) समलैंगिक लोग भी इसके प्रसार में सहायक हैं।

(7) नशे/ड्रग्स के आदी लोग–सेक्स के मामले में लापरवाह होते हैं। वे भी इसके प्रसारक हैं।

यौन रोगों की पहचान/लक्षण

(1) महिलाओं के योनिमार्ग से बदबू निकलना तथा यौन संबंध के समय योनि में जलन, दर्द तथा खुजलाहट होना।

(2) पेशाब करते समय जलन महसूस होना।

(3) पुरुषों के लिंग में अथवा महिलाओं के योनि में दर्द रहना तथा दाने निकलना।

(4) लिंग तथा योनि से स्राव (डिस्चार्ज) निकलते रहना।

यौन रोगों में होने वाली जटिलतायें (कम्पलीकेशन्स)

(1) पेशाब की थैली से निकलनेवाले मूत्रमार्ग (Urethra) का सिकुड़ जाना (Urethral Structure)

(2) बंध्यत्व (Infertility) या अर्धबन्ध्यत्व (Subfertility)

(3) शिशुओं में जन्मगत विकृति (Congenital abnormalities)।

टिप्पणी

(4) पेट में दर्द।

(5) स्थानच्युत गर्भ (एक्टोपिक प्रेग्नेंसी)।

अलग–अलग यौन रोगों के लक्षण और जटिलतायें अलग–अलग हैं, जिनका अध्ययन हम सम्बन्धित रोग के अंतर्गत करेंगे ।

रोकथाम के उपाय

(1) महिला एवं पुरुष वेश्याओं के पास जाने से बचें।

(2) एक से अधिक महिलाओं या पुरुषों से यौन–संबंध बनाने से बचें।

(3) संभोग (यौन संबंध) के तुरन्त बाद लैंगिक अंगों को ठीक से साफ कर लें।

(4) यौन–संक्रमण की आशंका हो तो शीघ्र उपचार कराएं। उसे छिपाने या टालने की कोशिश न करें।

स्वास्थ्य कार्यकर्ता की भूमिका

(1) ऐसे मामलों की तत्परता से तलाश कर उसका उपचार कराएं। मसलन किसी यौन रोग से संक्रमित व्यक्ति के सभी यौन संपर्क की सूची बनाकर सबका परीक्षण एवं उपचार करें।

(2) लोगों को इसके लक्षण, प्रसार के तरीके के बारे में बताएं तथा उसका उपचार की सलाह दें।

(3) यौन रोगियों को यौन–रोग विभाग में इलाज के लिए प्रेरित करें तथा उसका पूरा–पूरा इलाज कराएं।

(4) सेक्स–वर्कर्स की पहचान कर समय–समय पर उनकी जाँच तथा उपचार की व्यवस्था करें।

(5) उपचार में विलंब से अनेक तरह की जटिलतायें हो सकती हैं– बीमारी क्रॉनिक हो सकती है अथवा कैंसर में भी बदल सकती है। ये बातें लोगों को बताएं।

2.7.1 सिफिलिस (सुजाक)

(1) यह ट्रिपोनिमा पैलिडम नामक बैक्टीरिया के कारण होता है। यह जीवाणु कॉर्क के पेंच के आकार का होता है।

(2) यह प्रायः 18–40 वर्ष के आयु समूह के लोगों को होता है।

(3) यह बच्चों में कॉन्जेनाइटल विकृति के साथ भी हो सकता है।

(4) महिलाओं की तुलना में पुरुष इस रोग से अधिक ग्रस्त होते हैं।

(5) कंडक्टर, चालक, पुलिसकर्मी, सैनिक आदि लोग जो परिवार से दूर रहते हैं, अक्सर प्रभावित होते हैं।

(6) अकेले रहनेवाले, तलाकशुदा लोग इस रोग से अधिक पीड़ित होते हैं।

(7) निम्न – आर्थिक सामाजिक स्थिति वाले लोगों में इसके होने की संभावना प्रबल होती है।

(8) रोजगार के लिए गाँव के जो लोग शहरों में पलायन कर रहे हैं, उनमें इसकी संख्या अधिक होती है।

(9) वैसी कंपनी में काम करने वाले लोग, जिन्हें काम के सिलसिले में दूर–दूर जाना पड़ता है, और अक्सर घर से बाहर रहना पड़ता है, उनमें भी इनके होने की संभावना अधिक रहती है।

(10) यह रोग अक्सर संपर्क में आने के 10 से 90 दिन के बाद अपने लक्षणों के साथ प्रकट होता है।

लक्षण

(1) पुरुषों के शिश्न तथा महिलाओं की योनि के बाहरी भाग में घाव हो जाता है–जिसमें कोई दर्द नहीं होता।

(2) पुरुषों तथा महिलाओं की संतानोत्पत्ति की क्षमता में कमी आती है।

(3) बाद में घुटनों तथा जाँघों में सूजन हो जाती है, जिसमें दर्द नहीं होता।

(4) सामाजिक भय और लाज के कारण लोग समय पर उपचार नहीं कराते हैं, जिस कारण बाद में शिश्न पर दाने, मुँह में फोड़े तथा जोड़ों में सूजन आ जाती है।

(5) नवजात शिशुओं में भी माँ के द्वारा यह बीमारी हो जाया करती है, जिसे जन्मजात सिफलिस कहते हैं।

उपचार

वी.डी.आर.एल. पॉजिटिव केस को–

(1) पेनिसिलिन का इन्जेक्शन लंबे समय तक डॉक्टर की सलाह के अनुसार देते हैं। यह एनाफाइलैक्टिक प्रतिक्रिया भी करता है। अतः इसे जाँच (तत्वकीय संवेदी परीक्षण– Skin Sensitivity Test) करने के बाद ही दिया जाता है।

(2) पेनिसिलिन –सेन्सीटिव केस में इसी ग्रुप की अन्य दवाइयाँ यथा एम्पीसीलिन, एमॉक्सिलीन आदि भी कारगर हैं।

रोकथाम के उपाय

(1) काण्डोम का प्रयोग करके हम सिफलिस ही नहीं अन्य भी कई यौन रोगों से बच सकते हैं।

(2) जन–समुदाय को शिक्षित करके उन्हें यौन रोगों, फैलने के तरीकों के बारे में बताकर तथा वेश्यागमन के नुकसान से अवगत कराकर हम यौन–संक्रमण को काफी हद तक रोक सकते हैं।

2.7.2 गोनोरिया

सिफलिस की तरह गोनोरिया भी हमारे समाज में व्याप्त एक बीमारी है। यह निसेरेरिया–गोनोरी नामक ग्राम निगेटिव बैक्टीरिया फैलाता है।

कुछ जानने योग्य बातें

(1) यह 18 वर्ष की उम्र में ज्यादातर होता है, जब हमारी यौन सक्रियता चरम पर रहती है।

(2) स्त्रियों की अपेक्षा पुरुष अधिक प्रभावित होते हैं।

(3) अकेले रहने वाले, तलाकशुदा, वेश्याओं तथा वेश्यागामी लोग इससे अधिक प्रभावित होते हैं।

(4) सामाजिक और आर्थिक रूप से गरीब, अशिक्षित तथा बेरोजगार लोग इसकी चपेट में जल्दी आते हैं।

(5) बढ़ते शहरीकरण के कारण गाँव से शहरों की ओर कमाने के लिए पलायन करने वाले लोग जल्दी प्रभावित होते हैं।

(6) घनी आबादी में रहने वाले जैसे झुग्गी–झोपड़ियों के निवासी जल्दी चपेट में आते हैं।

(7) संक्रमण के एक सप्ताह के अन्दर ही इसके लक्षण प्रकट होने लगते हैं। सिफलिस की तरह बीच में लंबा अंतराल नहीं होता।

लक्षण

(1) पेशाब के रास्ते में सूजन, जलन तथा दर्द होता है।

(2) मूत्र मार्ग से चिकना–चिकना मैल निकलता है तथा उस पर बाद में धब्बे पड़ जाते हैं।

(3) कालान्तर में मूत्र–मार्ग में सिकुड़न भी हो सकती है।

निदान

मूत्र–मार्ग से निकलने वाले पदार्थ के कल्चर से भी बीमारी का पता चल सकता है।

उपचार

निदान के बाद चिकित्सक के सलाह के अनुसार उपयुक्त एन्टीबायोटिक के सेवन से इसका उपचार किया जा सकता है। सिफलिस की तरह यह भी पेनिसीलीन के फुल कोर्स से ठीक हो जाता है।

जटिलताएं

यदि समय पर उपचार न हो तो यह मूत्र–मार्ग में सिकुड़न पैदा कर सकता है जिससे बार–बार UTI (मूत्र–संक्रमण) होता रहता है।

रोकथाम के उपाय

इसमें रोकथाम के वही उपाय है, जो पीछे सिफलिस के लिए बताये गये हैं– कंडोम का प्रयोग जन–शिक्षण और जागरूकता तथा तुरन्त निदान व तुरन्त उपचार का प्रबंध (Early Detection & Treatment)।

2.7.3 एड्स (AIDS)

एड्स हमारे समाज के लिए एक बहुत ही भयावना नाम है। इसकी भयावहता का मुख्य कारण है, इसका उपचार का उपलब्ध न हो पाना। भारत में अभी 50 लाख से अधिक व्यक्ति एचआईवी पॉजिटिव हैं और इनकी संख्या दिन प्रतिदिन बढ़ती ही जा रही है।

एड्स (AIDS) के बारे में कुछ जानने योग्य बातें

एक्वायर्ड इम्यून डेफिशिन्सी सिन्ड्रोम (Acquired Immune Deficiency Syndrome)

(1) यह एक वायरस जनित रोग है–जिसे ह्यूमेन इम्यून डेफिशिन्सी वायरस (HIV) कहते हैं।

(2) वर्तमान समय में इसके नियंत्रण का कोई कारगर एन्टीबायोटिक उपलब्ध नहीं है।

(3) यह विषाणु प्रभावित व्यक्ति के रोग प्रतिरोधक प्रणाली पर प्रहार करता है और उसे कमजोर बना देता है। यही रोग–प्रतिरोधक प्रणाली विभिन्न रोगों से लड़ती है। नतीजतन व्यक्ति विभिन्न रोगों से ग्रस्त हो जाता है और वह ठीक नहीं होता।

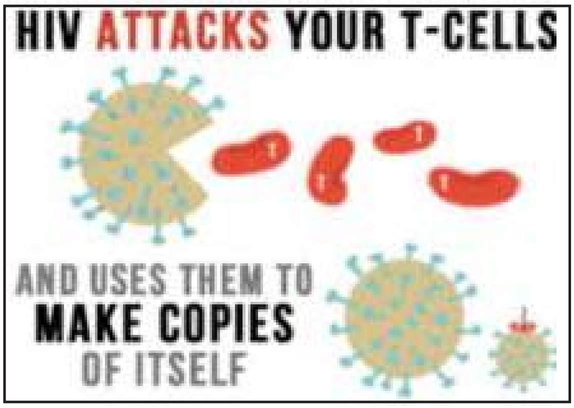

(4) यह आनुवंशिक रोग नहीं है–इसे हम अपने आस–पास से ग्रहण करते हैं इसी लिए इसे एक्वायर्ड डिजिज कहते हैं।

(5) एच–आई–वी पॉजिटिव का अर्थ है कि 6 से 12 सप्ताह में व्यक्ति के शरीर में एच–आई–वी का संक्रमण हुआ है। इस अंतराल में शरीर के भीतर रोग–प्रतिरोधक क्षमता रहती है और मरीज के भीतर यह वायरस अपना विकास करता है। इस विंडो पीरियड में यदि जाँच कराई जाए तो रिपोर्ट निगेटीव आ सकती है– यद्यपि मरीज इससे संक्रमित रहता है।

विन्डो पीरियड (Window Period)

सामान्यतः 6–12 सप्ताह का यह समय उस अवधि को कहते हैं, जब व्यक्ति एचआईवी से संक्रमित तो हो जाता है, किन्तु उसके शरीर में रोग–प्रतिरोधक क्षमता मौजूद रहती है– यानी यह मरीज बिल्कुल स्वस्थ की तरह रहता है–यहाँ तक की रक्त जाँच में भी यह निगेटिव मिलता है। ब्लड–बैंक को ऐसे लोगों के प्रति विशेष सावधान रहना चाहिए। ऐसे व्यक्ति का रक्त दूसरे को संक्रमित कर सकता है।

कुछ अन्य तथ्य

(1) यौन–सक्रिय उम्र के लोग ज्यादातर प्रभावित होते हैं–यानी 20 से 40 वर्ष के लोग।

(2) महिला–पुरुष दोनों समान रूप से प्रभावित होते हैं।

(3) सेक्स वर्कस ज्यादातर प्रभावित होते हैं।

(4) घर से दूर रहकर नौकरी करने वाले लोगों को ज्यादा प्रभावित होते देखा गया है।

(5) तलाकशुदा और अकेले जीवन जीने वाले लोग इसकी चपेट में जल्दी आते हैं– क्योकि, इनमें यौन शुचिता नहीं देखी जाती है।

(6) निम्न आर्थिक सामाजिक परिवेश वाले, घनी आबादी (झुग्गी–झोपड़ी) में रहने वाले अधिक प्रभावित होते हैं।

(7) बढ़ता शहरीकरण और शहरों की ओर पलायन इसके बढ़ने में सहायक हैं।

सामान्य और चिकित्सीय लक्षण

(1) शरीर का वजन कम हो जाना–थोड़े ही समय में शरीर का वजन 10 प्रतिशत से अधिक कम हो जाता है।

(2) लंबे समय से बुखार–एक महीने से अधिक जो ठीक नहीं हो रहा हो।

(3) लगातार लाइलाज डायरिया, सूखी खाँसी, मुँह में दाने तथा साँस फूलना।

(4) जाँघ, गरदन, काँख आदि जगहों पर लिम्फ नोड्स का सूज जाना।

(5) दिखाई देने में तकलीफ।

(6) उल्टी।

(7) त्वचा पर जख्म, एक्जिमा या फंगल संक्रमण।

(8) त्वचा या अन्य जगहों पर अप्रत्याशित कैंसर।

(9) स्नायु–तंत्र तथा मस्तिष्कीय क्षति– जिससे याद्दाश्त, निर्णय लेने आदि क्षमता में कमी हो जाना।

(10) भूख कम लगना।

(11) कई अन्य ऐसे जीवाणुओं का संक्रमण जो आमतौर पर मनुष्यों को संक्रमित नहीं करते (Opportunistic Infections)

(12) ट्युबरकुलोसिस से पीड़ित हो जाना।

एड्स (AIDS) कैसे फैलता है

(1) एच आई वी से पीड़ित महिला या पुरुष के साथ यौन संबंध बनाने से (यौन संबंध – योनि, गुदा या मुँह सभी से)।

(2) एच आई वी वीर्य, योनिस्राव, लार, रक्त या रक्त उत्पाद तथा माँ के दूध में भी विद्यमान रहता है।

(3) संक्रमित इन्जेक्शन के प्रयोग से।

(4) संक्रमित रक्त या रक्त उत्पाद के प्रयोग से।

(5) प्लासेन्टा के रास्ते गर्भस्थ शिशु में।

(6) इसके अलावा संक्रमित रेजर से दाढ़ी बनाने से, संक्रमित औज़ार से ऑपरेशन कराने से आदि।

एड्स इन माध्यमों से नहीं फैलता

एड्स के फैलने के बारे में बहुत सारे भ्रम हैं जिनका भय हमारे समाज में व्याप्त है। आइए, इसे जान कर और समझ कर दूर कर लें।

(1) एड्स हाथ मिलाने से नहीं फैलता।

(2) एड्स गले मिलने, चुम्बन, टेलीफोन करने, साथ–साथ खेलने आदि से नहीं फैलता।

(3) एड्स एक ही शौचालय का प्रयोग करने, एक ही कमरे में रहने से नहीं फैलता।

(4) एड्स एक साथ बस, ट्रेन में सफर करने से नहीं फैलता।

(5) एड्स मच्छर, मक्खी से भी नहीं फैलता।

(6) एड्स छींकने, खाँसने, थूकने आदि से भी नहीं फैलता।

(7) एड्स एक ही ऑफिस में साथ–साथ काम करने से भी नहीं फैलता।

रोकथाम के उपाय

इन उपायों को अपनाकर हम अपने को तो बचा ही सकते हैं, समाज में इसे फैलने से भी रोक सकते हैं:–

(1) यौन–संबंध के समय कण्डोम का प्रयोग अवश्य करें।

(2) सुरक्षित यौन संबंध बनायें, बहु–यौन संबंध से बचें।

(3) संक्रमित सिरिंज या निडिल का प्रयोग न करें। प्लास्टिक का डिस्पोजेबल सिरिंज का प्रयोग करें तथा उसे यथासमय नष्ट कर दें।

(4) दोनों पार्टनर का समुचित निदान तथा उपचार प्रबंध करें।

(5) आम लोगों को यह बतलायें कि एड्स कैसे फैलता है।

(6) एच आई वी पॉजिटिव मरीज का पता चलने पर उसके सारे यौन संपर्कों की सूची बनायें। उन सभी की पुनः जाँच कराएं। फिर उनके संपर्कों का भी पता लगाएं।

(7) खून चढ़ाने से पहले उसका पूरी तरह परीक्षण कराएं। रक्तदाताओं को प्रोत्साहित करें एवं व्यावसायिक रक्तदाताओं से रक्त लेने से बचें।

(8) वेश्यालयों एवं कॉलगर्ल्स का पता लगाकर उन सभी की अच्छी तरह स्क्रीनिंग कराना अत्यन्त आवश्यक है।

पाठगत प्रश्न 2.3

निम्नलिखित के जोड़े मिलाइए–

(क)	(ख)
1. सिफिलिस (सुजाक)	(i) संक्रमित इन्जेक्शन
2. गोनोरिया	(ii) कण्डोम
3. एच. आई. वी./एड्स	(iii) ग्राम निगेटिव बैक्टीरिया
4. सुरक्षित यौन संबंध	(iv) ट्रिपोनिमा पैलिडम

2.8 कुछ परजीवी संक्रमण (Parasitic Infection)

2.8.1 एमीबियेसिस

एमीबियेसिस एक ऐसी बीमारी है जो एक कोशिकीय परजीवी एंट अमीबा हिस्टोलिटिका के कारण हुआ करता है। ज्यादातर यह हमारी आँतों को प्रभावित करता है और आमातिसार या पेचिश पैदा करता है। आँतों के अलावा यह परजीवी – लीवर, फेफड़े, प्लीहा यहाँ तक की मस्तिष्क को भी प्रभावित कर सकता है।

एमीबियेसिस के बारे में कुछ जानने योग्य बातें

(1) यह हमारे लीवर, फेफड़े और मस्तिष्क को भी प्रभावित करके एमीबिक एब्सेस बनाता है जो कभी कभी जानलेवा भी हो जाता है।

(2) यह हमारे शरीर में मल–मुख मार्ग (Fecal-Oral Route) से प्रवेश कर सकता है जिसमें मक्खियाँ सहायक का काम करती हैं।

(3) व्यक्तिगत स्वच्छता और खान–पान पर ध्यान देकर हम इससे बहुत हद तक बच सकते हैं।

(4) फलों और सब्जियों को बिना अच्छी तरह धोये रेफ्रीजरेटर में मत रखें। ये उसमें रखी अन्य खाद्य सामग्री को भी प्रदूषित कर सकते हैं।

(5) प्रदूषित पानी और भोजन ही इसके फैलने का सबसे बड़ा कारण है।

फैलने के माध्यम

(1) मल–उत्सर्जन में मौजूद परजीवी धूल और मक्खियों के सहारे हमारे भोजन के रास्ते भीतर पहुँच जाता है।

(2) समलैंगिक पुरुषों के द्वारा भी यह फैल सकता है।

(3) बिना हाथ धोये खाने, प्रदूषित भोजन और जल के माध्यम से यह फैल सकता है।

लक्षण

(1) पेट में दर्द

(2) शौच के साथ श्लेश्मा (म्यूकस) या/और रक्त का आना।

(3) आंत्र–बाह्य संक्रमणों जैसे लीवर, फेफड़े, मस्तिष्क में घाव बन जाता है तथा उसमें मवाद भर जाता है।

निदान

(1) मल परीक्षण में एन्टअमीबा हिस्टोलिटिका पाया जाता है।

(2) लीवर या फेफड़े के मवाद का रंग एन्कोवी–सॉस की तरह रहता है। इसमें भी यह परजीवी मिलता है।

उपचार

(1) मेट्रोनिडाजॉल, टिनीडाजॉल या सेक्नीडाजॉल की खुराक पाँच दिनों तक देने से यह अधिकांशतः ठीक हो जाता है।

(2) उपचार के दौरान हल्का सुपाच्य आहार लेते हैं। जैसे खिचड़ी, गीला भात आदि।

रोकथाम में स्वास्थ्य कार्यकर्ता की भूमिका

(1) खाना खाने के पहले व बाद में तथा शौच के बाद साबुन से हाथों को अच्छी तरह साफ करें ।

(2) मानव मल–मूत्र के सुरक्षित निपटारे का उपाय हो। खुले में शौच न जाएं। जाना भी पड़े तो दूर मैदान में जाएं और उसे मिट्टी से ढ़क दें।

(3) पानी को क्लोरीन से या फिल्टर से शुद्ध करके पिएं। जहाँ तहाँ का पानी न पिएं।

(4) आसपास के क्षेत्र को ब्लीचिंग पाउडर या अन्य तरीकों से मक्खियों के प्रवेश से दूर रखें।

(5) फलों और सब्जियों को अच्छी तरह धोकर ही प्रयोग में लाएं।

(6) व्यक्तिगत स्वच्छता पर ध्यान दें। जैसे शारीरिक, वस्त्र और आसपास के परिवेश (नाली आदि की सफाई) की स्वच्छता।

(7) जन समुदाय को भी शिक्षित कर इससे बचने को प्रेरित करें।

क्या न करें

(1) पेचिश के अन्य भी कारण हो सकते हैं। अतः सही निदान के बाद ही इलाज करें, वैसे नहीं।

(2) एमीबिक लीवर एब्सेस का इलाज स्वंय न करें – चिकित्सक के पास ले जाएं।

2.8.2 हुक वर्म (एनसायक्लोस्टामा डुवोडिनेल) संक्रमण

यह अक्सर नंगे पाँव चलने वालों को होता है। खासकर उस क्षेत्र में जहाँ लोग खुले में शौच किया करते हैं। यह एक परजीवी संक्रमण है और हमारी आंतों को प्रभावित करता है। यह हमारे शरीर में खून की कमी पैदा करता है।

हुक वर्म के बारे में जानने योग्य बातें

(1) यह हमारी छोटी आँत में रहता है।

(2) वयस्क नर हुक वर्म, मादा हुक वर्म से छोटा होता है।

(3) यह सिलिन्ड्रिकल आकार का होता है। इसका रंग भूरा या सफेद होता है।

(4) इसके मुँह और पूँछ का भाग अलग–अलग होता है।

(5) इसके लैंगिक अंग भी होते हैं।

(6) एक वयस्क हुक वर्म हमारी छोटी आँत में 3 से 4 वर्ष तक जीवित रहता है।

हुक वर्म का जीवन चक्र

यह अंडा, लार्वा और वयस्क हुक वर्म के रूप में रहता है

(क) अंडे से लार्वा – इसके अंडे गोलाकार तथा रंगहीन होते हैं। यह वयस्क व्यक्ति के शौच के साथ मिट्टी में प्रवेश कर जाते हैं। उन अंडो का विकास लार्वा के रूप में मिट्टी में होता है। किसी छायादार वृक्ष की मिट्टी में जहाँ अधिकतर नमी रहती है वहीं इसका लार्वा मिट्टी में मौजूद रहता है।

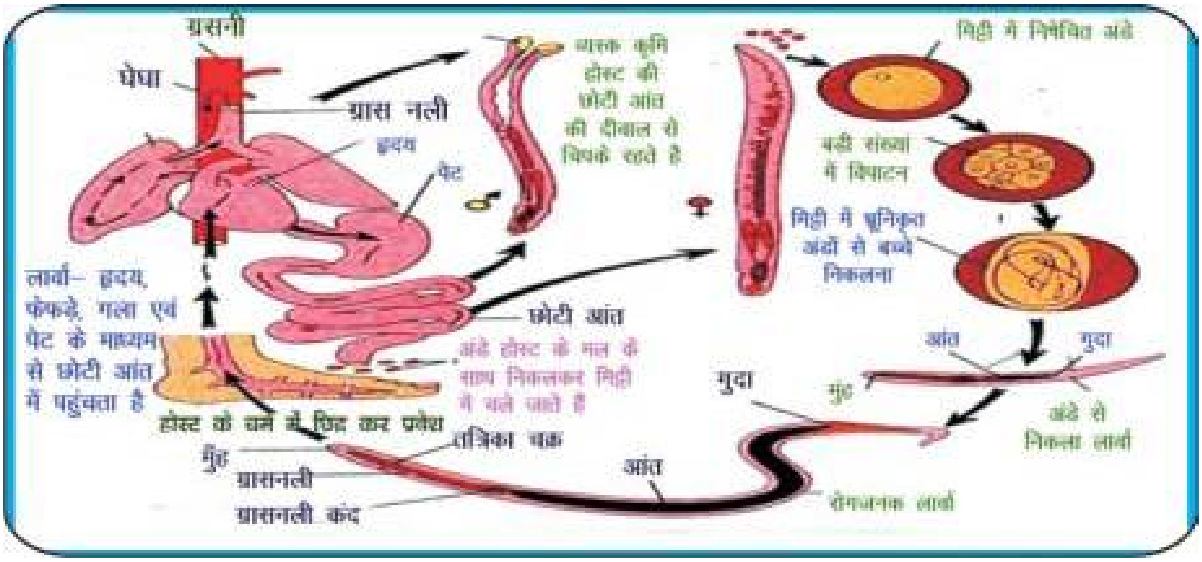

चित्र 2.17: हुक वर्म–जीवन चक्र

( ) जब आदमी नंगे पैर टहलता या चलता है तो ये लार्वा उसके तलवे तथा उंगलियों से चिपक जाता है तथा धीरे–धीरे त्वचा के भीतर प्रवेश करता हुआ रक्त प्रवाह के साथ दिल और फेफड़े के रास्ते श्वसन प्रणाली से आहार नली, फिर पेट और अंत में छोटी आंत तक पहुँच जाता है। वहाँ वह विकसित होकर नर तथा मादा हुकवर्म में बदल जाता है।

लक्षण

(1) एलर्जी के लक्षण – खुजलाहट, त्वचा पर चकत्ते।

(2) साँस फूलना।

(3) गंभीर रक्ताल्पता (एनीमिया) पीली एवं सफेद त्वचा।

(4) पेट में दर्द।

निदान

(1) मल परीक्षण करने पर उसमें हुकवर्म के अंडे या लार्वा भी मिल सकता है।

(2) कभी–कभी रक्त में इस्नोफील भी बढ़ा मिलता है।

टिप्पणी

रोकथाम के उपाय

(1) घर के शौचालय में शौच जाएं।

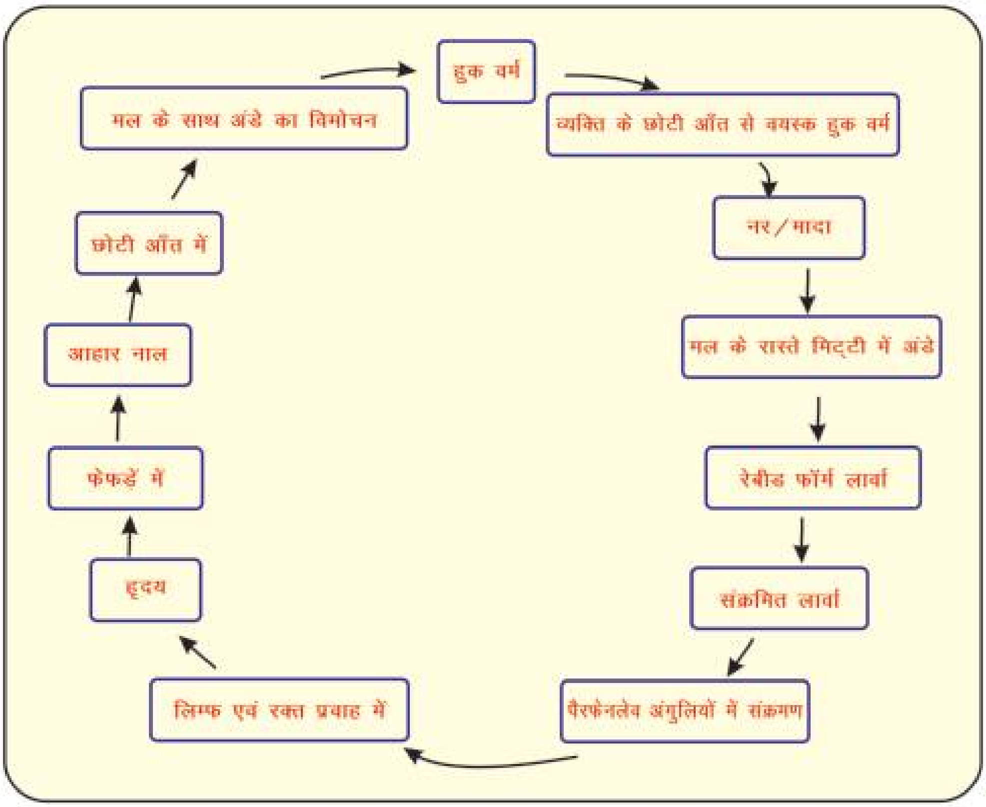

चित्र 2.18 (ख): हुक वर्म–जीवन चक्र

(2) बाहर खुले में शौच न जाएं– जाना भी पड़े तो मिट्टी से अच्छी तरह ढँक दें।

(3) नंगे पैर न चलें– पैर में जूता या चप्पल पहन कर चलें।

उपचार

(1) एलबेन्डाजोल या मेबेन्डाजोल की गोली तीन दिनों तक दें तथा पुनः मल परीक्षण करायें।

(2) उपचार चिकित्सक की सलाह से ही करें।

(3) खून की कमी को रक्तवर्धक औषधियों से या अधिक गंभीर स्थिति में खून चढ़ाकर करते हैं।

स्वास्थ्य कार्यकर्ता की भूमिका

(1) खुले में शौच को हतोत्साहित करें।

(2) लोगों को नंगे पाँव नहीं बल्कि जूते–चप्पल पहनकर चलने की सलाह दें।

(3) खून की कमी वाले मरीज को तुरन्त चिकित्सक के पास भेजें।

टिप्पणी

स्वास्थ्य कार्यकर्ता क्या न करें

(1) मरीज को खून चढ़ाने जैसा काम खुद न करें।

(2) नंगे पाँव न चलें।

2.8.3 एस्केरियेसिस (गोल कृमि)

अक्सर यह मुँह या शौच के रास्ते बाहर आता दिखाई देता है। इसे हम पेट की जोंक के नाम से जानते हैं। देखने में यह केंचुए के जैसा रहता है, किन्तु इसका रंग कुछ–कुछ सफेद और गुलाबी रंग का होता है।

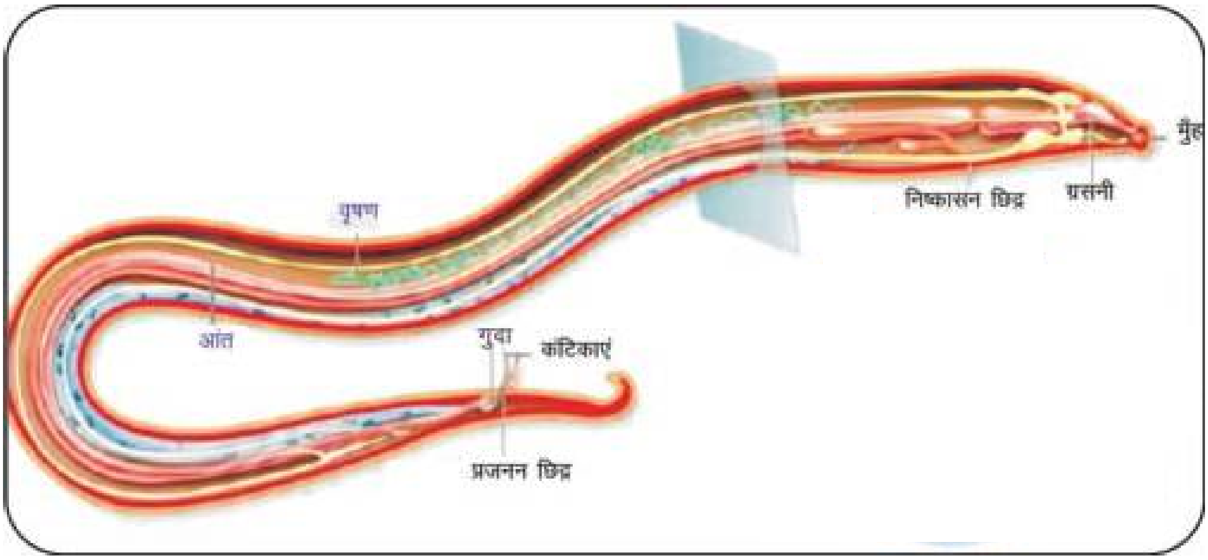

चित्र 2.19 (क) : एस्केरियेसिस (गोल कृमि)

एस्केरियेसिस के बारे में जानने योग्य कुछ बातें –

(1) यह गोल आकार का होता है तथा दोनों छोर शुण्डाकार होता है (सूँढ़ के जैसा)।

(2) नर 15 से 20 सें.मी. तक लंबा होता है तथा पूँछ का हिस्सा थोड़ा मुड़ा होता है। मादा की लंबाई 20 से 35 से.मी. तक होती है तथा नर की अपेक्षा लंबी और मोटी होती है।

(3) एस्केरिस का शरीर द्रव एलर्जी पैदा करता है जिससे साँस फूलना, शरीर पर लाल चकत्ते आना आदि लक्षण होते हैं।

(4) एस्केरिस के कारण होने वाले आंत्रावरोध में शल्य चिकित्सा की जरूरत भी पड़ सकती है। दरअसल इसमें वयस्क नर और मादा एक जगह इकट्ठे होकर एक गुच्छा सा बना देते हैं जिससे आंत का रास्ता अवरूद्ध हो जाता है।

एस्केरिस के अंडे मलोत्सर्जन के साथ बाहर निकलकर मिट्टी में मिल जाते हैं फिर धूल के रास्ते हमारे भोजन और पानी को प्रदूषित करते हैं। यह प्रदूषित पानी हमारे भोजन के रास्ते आंत्र मार्ग में प्रवेश करते हैं, जहाँ

ये अंडे लार्वा में बदल जाते हैं। फिर ये लार्वा अपना जीवन चक्र फेफड़े में पूरा करते हैं और पुनः आँत में प्रवेश करते हैं। छोटी आँत में यह पुनः वयस्क नर और मादा का रूप प्राप्त करते हैं।

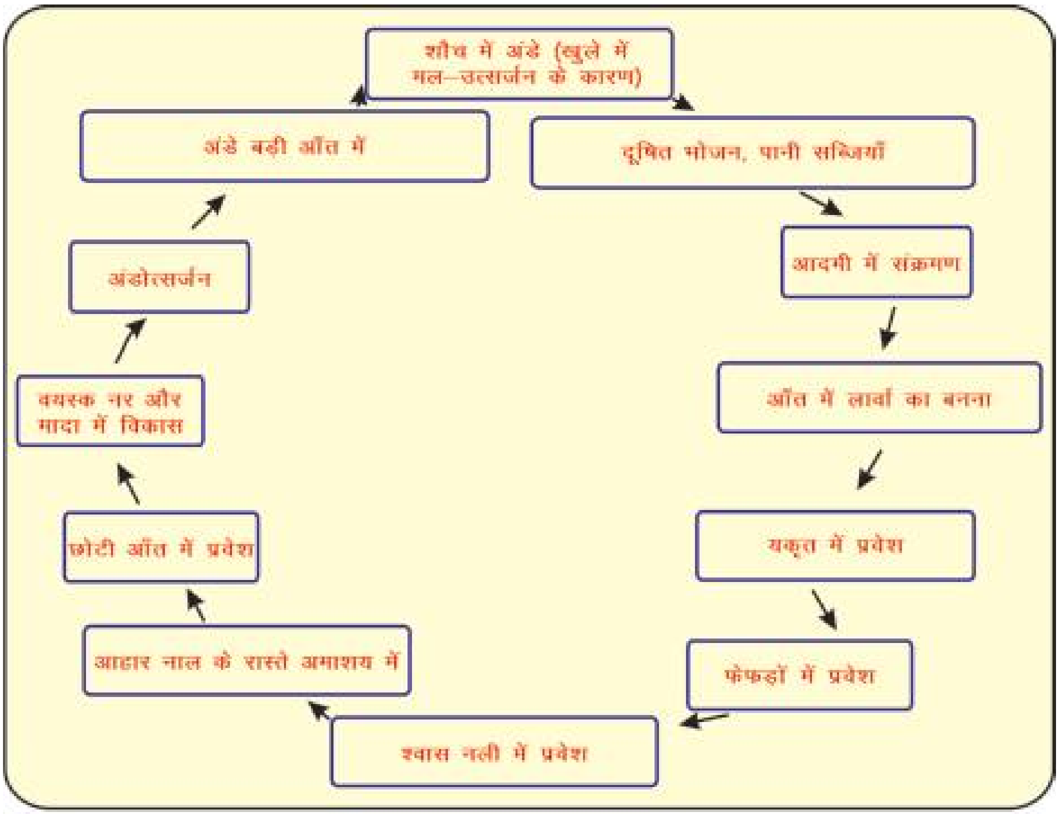

चित्र 2.19 (ख): गोल कृमि का संक्रमण

लक्षण

(1) खून की कमी

(2) इस्नोफिलिया

(3) एलर्जी के लक्षण तथा साँस फूलना

(4) आंत्रावरोध (Intestinal Obstruction)

(5) पेट में दर्द

(6) मितली की इच्छा

निदान

(1) मल परीक्षण में एस्केरिस के अंडे मिलते हैं।

(2) शौच और मुँह के रास्ते वयस्क एस्केरिस बाहर आते हैं।

टिप्पणी

उपचार

(1) एलबेन्डाजोल, मेबेन्डाजोल या पायरेन्टल पामोएट की गोली चिकित्सक के बताये खुराक के अनुसार।

(2) कभी–कभी इसकी खुराक को लंबे समय तक दोहराना पड़ता है।

रोकथाम में स्वास्थ्य कार्यकर्त्ता की भूमिका

(1) मल–मूत्र के सम्यक निपटारे के लिए प्रोत्साहित करना।

(2) हर मरीज का पूरा इलाज कराएं ताकि वह संक्रमण फैलाने न पाए।

(3) व्यक्तिगत सफाई के बारे में जानकारी दें।

(4) साफ स्वच्छ ताजा भोजन करने की सलाह दें। बाहर – खुले में रखे भोजन के नुकसान के बारे में बताएं।

(5) खुले में शौच को हतोत्साहित करें।

स्वास्थ्य कार्यकर्त्ता क्या न करें

आंत्रावरोध की स्थिति में मरीज को शीघ्र अस्पताल ले जाएं, स्वयं इलाज करने की गलती न करें।

पाठगत प्रश्न 2.4

रिक्त स्थानों को भरें –

1. हुक वर्म के लार्वा के प्रवेश से बचने के लिए -------- पहनना चाहिए ।
2. एन्ट अमीबा हिस्टोलिटिका के कारण -------------- बीमारी होती है।
3. गोल कृमि के संक्रमण का निदान ------------ परीक्षण द्वारा किया जाता है।
4. हुकवर्म हमारे शरीर की ------------ में रहता है।
5. अमीबा हमारे शरीर में ------------ मार्ग से प्रवेश कर सकता है।

आपने क्या सीखा

इस पाठ में आपने कुछ अन्य संक्रामक रोगों जैसे डेंगू, मलेरिया, कुष्ट रोग, तपेदिक के अलावा डिप्थीरिया, निमोनिया और भोजन विषाक्तता के बारे में जाना। इन रोगों की पहचान, लक्षण, रोकथाम एवं नियंत्रण के बारे में भी आपने समझा। यौन रोगों जैसे सिफिलिस, गोनोरिया के साथ–साथ एड्स रोग के बारे में भी चर्चा की गई है। इन सभी रोगों में स्वास्थ्य कर्ता की महत्वपूर्ण भूमिका है जिसकी विस्तृत जानकारी भी आपने इस पाठ में प्राप्त की।

टिप्पणी

पाठान्त प्रश्न

1. डेंगू की रोकथाम व नियंत्रण में स्वास्थ्य कार्यकर्त्ता की भूमिका पर प्रकाश डालिए।
2. मलेरिया के लक्षण, जटिलताएं व रोकथाम के उपाय लिखिए।
3. कुष्ठ रोग से जुड़ी भ्रांतियों को मिटाने में स्वास्थ्य कार्यकर्त्ता की भूमिका पर चर्चा कीजिए।
4. टी. बी. रोग के निवारण एवं नियन्त्रण के बारे में लिखिए।
5. भोजन विषाक्तता के कारणों की सूची बनाइए।
6. यौन रोगों की रोकथाम के विभिन्न तरीकों पर विस्तार से चर्चा कीजिए।
7. हुक वर्म के जीवन चक्र के बारे में लिखिए।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

2.1

1) एडिस   2) लाल   3) कुष्ठ   4) टी बी

5) गलघोंटू (डिफ्थीरिया) पांच

2.2 1. सही   2. सही   3. गलत

2.3 1. (iv),   2. (iii),   3. (i),   4. (ii)

2.4 1. जूते   2. आमीबियोसिस   3. मल   4. छोटी आँत

5. मल–मुख

3

रोकथाम के उपाय

रोगोपचार से रोकथाम भली (Prevention is better than cure)- यह कहावत हमारे यहाँ शुरू से प्रचलित है। विज्ञान के बढ़ते कदम भी रोकथाम के उपायों पर ज्यादा केन्द्रित हैं। संक्रामक रोग या खराब जीवन शैली से उत्पन्न होने वाले सभी रोगों की रोकथाम के उपायों के जरिए उनको नियंत्रित किया जा सकता है। इसके अलावा बीमारियों से लाचार हुए मरीजों को पुनर्वास के उपायों द्वारा अधिक उपयोगी और कारगर बनाया जा सकता है। इस पाठ में हम इन्हीं बातों पर थोड़ी गहराई से विचार करेंगे।

उद्देश्य

इस पाठ के अध्ययन के पश्चात् आपः

- रोग की उत्पत्ति के मूल कारण तथा सहायक कारकों को ठीक से पहचान सकेंगे,
- रोगोत्पत्ति तथा उसके सहायक कारकों की रोक थाम में सहयोग कर सकेंगे,
- भोजन तथा पानी की गुणवत्ता में विकास करके बहुतेरी जन्तु–जन्य और खाद्य–जन्य व्याधियों को नियंत्रित कर सकेंगे।
- प्रतिरक्षण (Immunisation) तथा खाद्य–संपूरण (Food Supplementation) के द्वारा बीमारी को दूर करने के तरीकों को अपना सकेंगे,
- पुनर्वास के आधुनिक तकनीकों के द्वारा अक्षम हो चुके लोगों को अधिक सक्षम बना सकेंगे।

टिप्पणी

3.1 रोग की उत्पत्ति के मूल कारण तथा उसके सहायक कारक –

रोग की उत्पत्ति के मूल कारण निम्नलिखित हैं –

(1) वायरस, कीटाणु, परजीवी, फंगस आदि जीवाणु जन्य व्याधियाँ –

(2) रोग की उत्पत्ति के सहायक कारक हैं –

अशिक्षा, अस्वास्थ्यकर रहन–सहन, हिंसा, सघन आबादी चिकित्सा सुविधाओं का अभाव, गरीबी, दवाइयों की अनुपलब्धता, खान–पान की अस्वास्थ्यकर आदतें आदि।

3.2 रोगोत्पत्ति के कारणों का नियंत्रण

जनसमुदाय को सबसे ज्यादा प्रभावित करने वाले रोगों को सूचीबद्ध करके सामूहिक स्तर पर इसके निदान (Diagnosis) का उपाय करते हैं, जिससे कि रोग का सही पता चल सके।

इसके साथ साथ इसके प्रसार के सहायक कारकों की भी पहचान करते हैं तथा उसका भी पूरा–पूरा आंकलन करते हैं। इनमें ज्यादातर सहायक कारक तो सामान्य ही हैं – जैसे अशिक्षा, गरीबी, अस्वास्थ्यकर खान–पान और रहन सहन, अंधधारणाएं, चिकित्सक और स्वास्थ्य केन्दों का अभाव, दवाइयों और निदान की अनुपलब्धता, घनी आबादी।

व्यापक स्तर पर इन सभी सहायक कारकों को दूर करने की योजना बनाई जाए ताकि उपलब्ध संसाधनों का महत्तम उपयोग हो सके। इस क्रम में कई खास कदम उठाने होते हैं, जिसकी चर्चा हम इस पाठ में करेंगें।

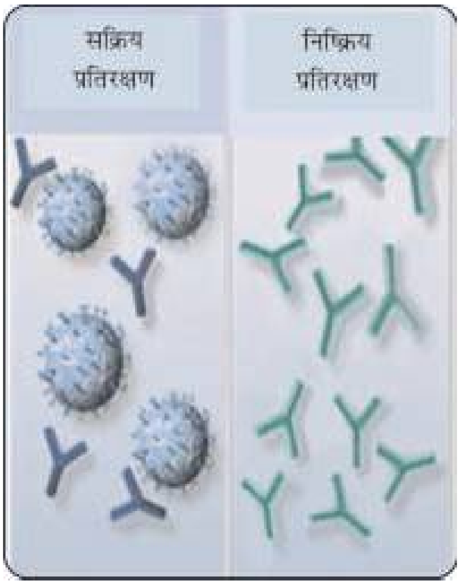

चित्र 3.1: इम्यूनाइजेशन के प्रकार

संक्रामक रोगों के नियंत्रण के लिए कई तरह के वैक्सीन और खास बीमारी के लिए खास इम्यूनोग्लोबुलिन उपलब्ध हैं जिसके सहारे हम व्यक्ति को सक्रिय (एक्टिव) तथा निष्क्रिय (पैसिव) टीकाकरण करते हैं जिससे व्यक्ति में उस रोग विशेष के प्रति प्रतिरक्षण क्षमता विकसित हो जाती है।

3.2.1 सक्रिय प्रतिरक्षण (एक्टिव इम्यूनाइजेशन)

इस प्रक्रिया में संक्रामक रोग फैलाने वाले किसी बैक्टीरिया या वायरस का प्रयोग कर विशेष विधि के द्वारा उसकी वैक्सीन तैयार की जाती है – जिसे शरीर में प्रवेश कराने पर वह रोग तो उत्पन्न नहीं करता, पर

टिप्पणी

उसी बैक्टीरिया या वायरस के द्वारा होने वाले रोग के प्रति प्रतिरक्षण क्षमता विकसित कर देता है जिससे वह रोग विशेष प्रतिरक्षित बच्चे या वयस्क को आक्रान्त नहीं कर पाते। कुछ संक्रामक रोग जिनका टीका हमारे राष्ट्रीय प्रतिरक्षण कार्यक्रम में हर व्यक्ति को सहज उपलब्ध है – वे हैं – पोलियो, टीबी, कुकुरखांसी, डिप्थीरिया, टिटनेस, खसरा, हिपेटाइटिस–बी। इसके अलावा जापानी इन्सेफ्लाइटिस के टीके भी हमारी सरकार अभियान चला कर लोगों तक उपलब्ध करा रही है।

इसके अलावा कई एक्टिव वैक्सीन मार्केट में उपलब्ध है – जैसे टायफॉइड, चिकेन पॉक्स आदि।

चित्र 3.2: एक्टिव इम्यूनाइजेशन

3.2.2 निष्क्रिय प्रतिरक्षण

(Passive Immunization)

एक्टिव इम्यूनाइजेशन को विकसित करने में शरीर को समय लगता है – इस बीच यदि महामारी या क्षेत्र विशेष में कोई संक्रामक रोग फैले तो तत्काल प्रतिरक्षण के लिए कई रोगों के इम्यूनोग्लोबुलिन उपलब्ध हैं। इन्हें इन्जेक्शन के रास्ते शरीर में उचित मात्रा में पहुँचाकर हम उन रोगों से बच्चों और वयस्कों का बचाव कर सकते हैं। ये रोग प्रतिकारी पदार्थ पहले से बनाकर रखे जाते हैं। इसका असर तत्काल शुरू होता है पर तत्काल ही खत्म भी हो जाता है। जैसे टिटनेस या रेबीज़ के एन्टीटॉक्सीन तथा इम्यूनोग्लोबुलीन।

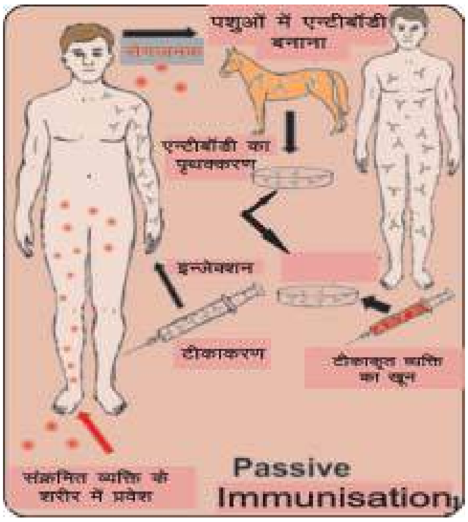

चित्र 3.3: पैसिव इम्यूनाइजेशन

3.2.3 राष्ट्रीय प्रतिरक्षण कार्यक्रम

(National Immunization Schedule)

- जन्म के समय – बीसीजी , ओपीवी तथा हेपेटाइटिस –बी
- 6 वें सप्ताह, 10 वें सप्ताह तथा 14 वें सप्ताह – डीपीटी तथा ओपीवी
- 9 महीने पर – खसरा या एमएमआर (गलसुआ, खसरा तथा रूबेला) 2 लाख आईयू "विटामिन ए"
- 16 – 24 महीने पर – डीपीटी तथा ओपीवी
- 5 – 6 वर्ष पर – डीटी
- 10 – 16 वर्ष पर – टी.टी (टिटनस टॉक्साइड)
- गर्भवती महिला के लिए – टी.. टी. की दो खुराक

(पहली खुराक आरम्भिक गर्भावस्था में / एक महीने के पश्चात टी.टी. की दूसरी खुराक)

नोट :

(1) दो खुराकों के मध्य कम से कम एक महीने का अन्तर होना चाहिए ।

(2) हलकी खांसी, जुकाम तथा हल्के ज्वर की स्थिति में भी टीकाकरण किया जा सकता है।

3.2.4 औषधियों द्वारा रोगों की रोकथाम (Prevention by Chemo Prophylaxis)

बहुत सी ऐसी दवाइयाँ हैं जिसके प्रयोग से हम अपने आसपास फैली महामारी या एपिडेमिक से बच सकते हैं। ये औषधियाँ रोग के संक्रमण को शरीर में रोक देती हैं, और व्यक्ति को सुरक्षा प्रदान करती हैं। जैसे मलेरिया आस–पास फैला हो तो क्लोरोक्विन की गोलियों की उचित खुराक देकर हम उसे होने से रोक सकते है। नीचे दी गई सारिणी मे रोगों के नाम तथा उसमें प्रयुक्त होने वाली प्रोफाइलैक्टिक दवाइयों के नाम लिखे हैं–

बीमारी का नाम	फैलने का तरीका	प्रोफाइलैक्सिस औषधि
तपेदिक (TB)	संदिग्ध संपर्क	आइसोनियाजाइड
डिप्थीरिया	संपर्क से	एरिथ्रोमाइसिन
टिटनेस	घाव में संपर्क से	TT तथा एरिथ्रोमाइसिन
मलेरिया	मलेरिया एपिडेमिक	क्लोरोक्विन
मेनिन्जोकोकस	आसपास के संपर्क से	सिप्रोफ्लॉक्सासीन

3.2.5 सुरक्षा मास्क (Protective Mask) का प्रयोग

यह कई संक्रमणों से सुरक्षा प्रदान करता है। वैसे संक्रमण जो साँस के द्वारा फैलते हैं– जैसे तपेदिक इन्फ्लुऐंजा, निमोनिया, प्लेग आदि को हम मास्क के इस्तेमाल से अपने भीतर संक्रमित होने से रोक सकते हैं। ये संक्रमण सूक्ष्म जीवाणुओं के द्वारा रोगी व्यक्ति से स्वस्थ व्यक्ति तक संचरित हो जाता है। ये सूक्ष्म जीव वायु में विद्यमान रहते हैं। ऑपरेशन थियेटर, प्रसूति–कक्ष या प्रदूषित क्षेत्रों में मास्क का प्रयोग हमें संक्रमित होने से बचाता है। डॉक्टर, नर्स तथा अन्य स्वास्थ्य कर्मचारी इसके प्रयोग से रोगियों द्वारा फैलाये गये संक्रमण से स्वयं को बचा सकते हैं।

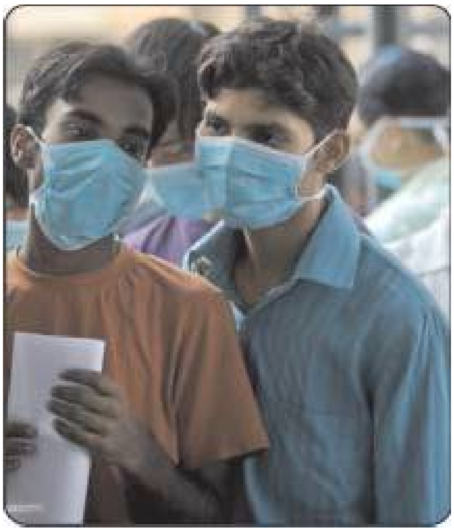

चित्र 3.4: सुरक्षा मास्क

टिप्पणी

3.3 स्वस्थ व्यक्ति का संक्रमण

(1) मुँह के रास्ते (Oral Route)

गंदे हाथों, दूषित पानी तथा भोजन के रास्ते हम कॉलरा, पोलियो तथा भोजन विषाक्तता**(Food Poisoning)** के शिकार हो सकते हैं।

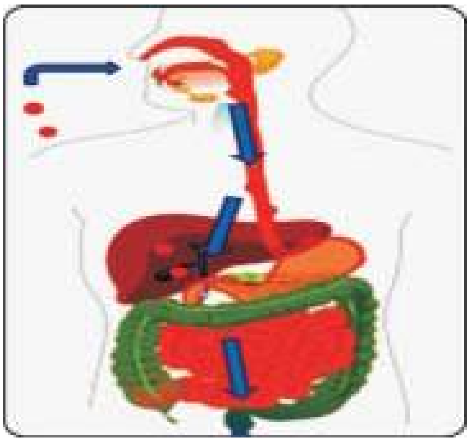

चित्र 3.5: मुँह के रास्ते संक्रमण

रोकथाम

(क) भोजन करने के पूर्व तथा शौच से आने के पश्चात दोनों हाथों को साबुन तथा पानी से अच्छी तरह साफ कर लें, तभी खाना खाएँ।

(ख) फलों तथा सब्जियों को भी खाने से पूर्व स्वच्छ पानी से अच्छी तरह साफ कर लें।

(ग) हमेशा गरम खाना खाएँ तथा पीने के पानी की भी सुरक्षित आपूर्ति सुनिश्चित करें।

चित्र 3.6: हाथ धोने की विधि

(2) मल के रास्ते (Foecal Route)

खुले में शौच करने से उससे निकलने वाले सूक्ष्म जीवाणु गंदे हाथों, पैर तथा थूक के रास्ते भोजन और पानी को प्रदूषित कर सकते हैं, और हमें कई बीमारियों से ग्रस्त बना देते हैं।

रोकथाम

(क) हाथ–पैरों को समय–समय पर साबुन–पानी के द्वारा अच्छी तरह साफ कर लें।

(ख) हमेशा शौचालय का प्रयोग करें, खुले में शौच न जाएं।

(3) मक्खियों मच्छरों से – बहुत सी बीमारियाँ मक्खियों और मच्छरों के द्वारा फैलती है जैसे – कॉलरा, अतिसार (डायरिया), मलेरिया, प्रदूषित भोजन से उत्पन्न व्याधि आदि। ये सब हमें बीमार, कुपोषित और इलाज के अभाव में मृत्यु तक पहुँचा सकती हैं।

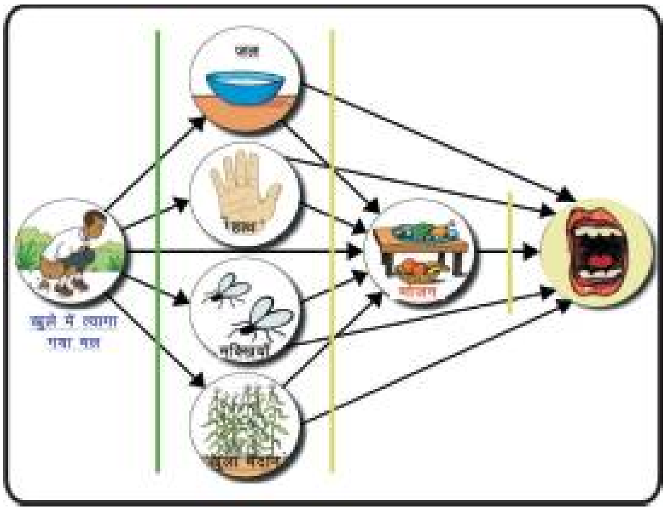

चित्र 3.7: मल के द्वारा संक्रमण

टिप्पणी

रोकथाम

(क) अपने आसपास नालियों आदि की समय पर साफ सफाई होती रहे ताकि उसमें मक्खी–मच्छर न पनप सकें। नालियों को ढ़ककर रखें तथा उसके डिस्पोजल (निस्तारण) की समुचित व्यवस्था करें।

(ख) गंदी जगहों जैसे कूड़े या डम्प स्टेशन पर कीटाणुनाशकों का सुसमय प्रयोग करके मक्खियों तथा अन्य कीड़े–मकोड़ों को न पनपने दें।

(ग) नगरपालिका के साथ सामूहिक प्रयत्न से सैनिटेशन का उचित प्रबंध करें। ताकि उपलब्ध संसाधनों का पूरा–पूरा प्रयोग हो।

(घ) कूड़े को कूड़ेदान में ही डालने की संस्कृति विकसित करें।

3.4 सीधे संपर्क से फैलने वाले रोग (Direct Contact Route)

ये बीमारियाँ किसी स्वस्थ व्यक्ति का संक्रमित व्यक्ति के संपर्क में आने से फैलती हैं। जैसे कोढ़ (Leprosy), यौन–संबंधों से फैलने वाले रोग – एड्स, हिपेटाइटिस आदि।

रोकथाम

(1) एक से अधिक लोगों के साथ यौन संबंध न बनाएं।

(2) डिस्पोजेबल सिरिंज (Disposable Syringe) का प्रयोग करें।

(3) रक्त तथा रक्त उत्पादों के समय पूरी सावधानी बरतें तथा यह सुनिश्चित करें कि ये पूरी तरह संक्रमण मुक्त हैं।

(4) अस्पताल से निकलने वाले कचरे का उचित और पूर्ण निस्तारण सुनिश्चित करें क्योंकि, ये कचरा आमलोगों के स्वास्थ्य के लिए बहुत नुकसानदेह है।

(5) रोगी की चिकित्सा और जाँच के बाद हाथ अच्छी तरह साबुन से धो लें।

3.5 अस्पताल में रोगों की रोकथाम के कुछ विशेष उपाय

अस्पताल जहाँ बीमारियों से छुटकारा दिलाता है वहीं अनेक संक्रमण के फैलने में भी सहायक हो सकता है– यदि उसका समुचित प्रबंध न किया जाए। यहाँ भाँति–भाँति के संक्रमित मरीज आते हैं और आसपास में मौजूद स्वस्थ व्यक्ति, चिकित्सक या स्वास्थ्य कर्मी तथा रोगी के परिचारकों में रोग संक्रमित हो सकते हैं। अतः अस्पताल के लिए कुछ विशेष ढ़ंग से सफाई का प्रबंध होना चाहिए।

(क) निःसंक्रमण

(1) संक्रामक रोग से पीड़ित व्यक्ति को अलग कक्ष मे रखा जाना चाहिए पर कुछ ऐसे क्षेत्र है, जहाँ विशेष रूप से सफाई आवश्यक है – जैसे

(a) प्रसव कक्ष

(b) ऑपरेशन थियेटर

(c) नवजात शिशुओं की नर्सरी

(d) रिकवरी कक्ष

पूरे अस्पताल के साथ इन क्षेत्रों में विशेष रूप से निःसंक्रमण तथा प्रधूमन (Fumigation) की व्यवस्था करनी चाहिए ताकि उसके फर्श तथा हवा में मौजूद कीटाणु भी मर जायें। प्रयुक्त होनेवाले औजारों को सही ढंग से विसंक्रमित (Sterilization) करते हैं ताकि उसके संक्रमण की संभावना न के बराबर हो।

संक्रमण–रोग से मरने वाले मरीज के आसपास के क्षेत्र को भी पूरी तरह निःसंक्रमित कर देना चाहिए ताकि दूसरा व्यक्ति प्रभावित न हो।

अस्पताल में संक्रमण से बचने और प्रसार को रोकने के लिए कुछ अन्य उपाय भी किये जाते हैं जैसे–

(ख) मास्क का प्रयोग

वायुजन्य संक्रमण हमारे श्वास के साथ रोगी तक तथा रोगी से हमारे पास तक पहुँच सकता है। सुरक्षा–मास्क के सहारे हम इनसे बच भी सकते हैं और रोगी को बचा भी सकते हैं।

(ग) कैप का प्रयोग

हमारे बालों में जीवाणु और धूल भरे रहते हैं, जो ऑपरेशन के दौरान रोगी को संक्रमित कर सकते हैं। ये कैप डिस्पोजेबुल होते हैं या कपड़े के बने हो सकते हैं। कैप के साथ हमारे बाल ढ़क जाते हैं।

(घ) दस्तानों का प्रयोग

डॉक्टर, नर्स, स्वास्थ्यकर्मी तथा लैब में काम करने वालों को इसका प्रयोग अवश्य करना चाहिए ताकि हमारे हाथों में मौजूद जीवाणु या रोगी के रक्त में मौजूद संक्रमण एक दूसरे में स्थानान्तरित न हो जाए। खासकर रक्त से फैलने वाले संक्रमण जैसे–एड्स, हिपेटाइटिस–बी, सिफलिस, हिपेटाइटिस सी आदि।

(ङ.) गाउन का प्रयोग

स्टरलाइज्ड गाउन का प्रयोग भी ऑपरेशन तथा अन्य उपचार आदि के समय अवश्य करना चाहिए ताकि संक्रमण स्वास्थ्यकर्मियों के हाथों रोगी तक न चला जाए।

(च) जूतों का प्रयोग

नंगे पैर न चलें, जूतों का प्रयोग अवश्य करें अन्यथा बहुत से जीवाणु हमारे फटे तलवों के रास्ते शरीर में प्रवेश कर जाते हैं और हमें संक्रमित बना देते हैं जैसे– हुकवर्म– यह हमारे तलवों से प्रवेश कर रक्ताल्पता उत्पन्न कर देता है जो गर्भवती महिलाओं में बहुत घातक होता है।

टिप्पणी

(छ) कॉन्डोम का प्रयोग

इसका प्रयोग यौन संबंधों से फैलने वाले रोगों से बचाव के लिए करते हैं जैसे–एड्स, सिफिलिस, गनोरिया, हिपेटाइटिस–बी आदि।

पाठगत प्रश्न 3.1

रिक्त स्थान भरें–

1. ––––––––––––––द्वारा एड्स , एसटीडी जैसे रोगों से विशिष्ट संरक्षण प्राप्त किया जाता है।
2. ––––––––––––––––––– को पहन कर हुकवर्म संक्रमण से बचा जा सकता है।
3. रोगी का रक्त लेते समय –––––––––––––– का प्रयोग किया जाना चाहिए।
4. समुदाय में –––––––––––––––––– के निवारण के लिए सक्रिय प्रतिरक्षण का प्रयोग किया जाता है।

3.6 खाद्य–संपूर्ति (Food Supplementation)

अनेक व्याधियाँ हमारे शरीर में कुपोषण उत्पन्न कर सकती हैं। कुपोषण के कारण भी अनेक संक्रमण हमारे भीतर आसानी से घर बना लेते हैं। हमारे समाज में खासकर गरीब तबकों का खान–पान संतुलित नहीं है। उनके भोजन में पर्याप्त प्रोटीन, विटामिन, खनिज़ लवण, वसा मौजूद नहीं रहते, नतीजा कई कुपोषणजनित व्याधियाँ उत्पन्न हो जाती हैं। बच्चे और गर्भवती औरतें इसका सबसे ज्यादा शिकार होते हैं। सबके खाने के बाद बचा–खुचा खाना ही औरतों के हिस्से में आता है–जिसमें पूरे पोषक तत्व नहीं मिलते।

स्कूलों में पौष्टिक–आहार उपलब्ध कराकर हम बच्चों को कुपोषण से बचा सकते हैं। इसके अलावा विटामिन ए व डी की खुराक देकर हम उन्हें रतौंधी, रिकेट्स आदि बीमारियों से बचा सकते हैं।

यद्यपि सरकार ने गर्भवती महिलाओं के लिए कुछ कार्यक्रम चलाए हैं परंतु वे पर्याप्त नहीं हैं। सिर्फ आयरन और कैल्शियम की गोलियाँ देना काफी नहीं है। प्रोटीन की जरूरत पूरी न होने से माँ तो बीमार रहती ही है, गर्भस्थ शिशु भी कुपोषण का शिकार (IUGR) हो जाता है। सरकारी स्तर पर ऐसी सुविधा ग्रामीण गर्भवती महिलाओं के लिए उपलब्ध कराना अति आवश्यक है। संपन्न घरों में भी कुपोषण और अतिपोषण जन्य बीमारियाँ बहुतायत में मिलती हैं। उन्हें संतुलित आहार, संतुलित श्रम के सही अर्थ से परिचित कराना चाहिए।

इसके अलावा शराब, तंबाकू आदि नशीले पदार्थों का प्रयोग हमारे कुपोषण जन्य व्याधियों की बढ़ोत्तरी में सहायक है। इनकी रोकथाम के लिए सरकार को हर संभव कदम उठाना चाहिए।

3.7 पुनर्वास (Rehabilitation)

इस प्रक्रिया के द्वारा हम अशक्त हो चुके लोगों को पुनः क्रियाशील और लगभग सामान्य स्थिति में लाने का उपाय करते हैं। शारीरिक अशक्तता प्रायः दो तरह की होती है–

(1) अस्थायी अशक्तता (2) स्थायी अशक्तता

क अस्थायी (Temporary) अशक्तता

इस प्रकार की अशक्तता विभिन्न प्रकार के दीर्घकालीन रोगों के परिणाम स्वरूप उत्पन्न होती है। इसमें हाथ तथा पैर या आवाज आंशिक रूप से क्रियाशील रहते हैं। इस प्रकार की सभी चिकित्सीय स्थितियों में फिजियोथैरेपी तथा बोली (स्पीच) के माध्यम से रोगी को उसके सामान्य जीवन में वापस लाया जाता है।

ख. स्थायी (Permanent)

इस प्रकार की अशक्तता दुर्घटना, फ्रैक्चर तथा डिस्लोकेशन (अभिघातज), अंग कटना तथा अर्धांगघात **(Hemiplegia)** के कारण होती है। इनमें से अनेक अशक्तताएं स्थायी प्रकृति की होती हैं, जहां सामान्य क्रियाशीलता को प्राप्त करने के लिए कृत्रिम अंगों का प्रयोग किया जाता है। अन्य मामलों में अशक्तता को उपयुक्त फिजियोथैरेपी तथा व्यायाम के माध्यम से दूर किया जा सकता है। इससे अंगों की 60% क्रियाशीलता को प्राप्त किया जा सकता है।

पुनर्वासन (Rehabilitation) की आवश्यकता निम्नलिखित परिस्थितियों में होती है :–

- जोड़ों की तपेदिक जिसके कारण अस्थि समेकन **(Ankylosis)** हो जाता है।
- फ्रैक्चर तथा अस्थियों के विस्थापन
- वृद्धावस्था मे ऊर्वस्थि **(Femur)** का फ्रैक्चर
- गम्भीर ऑस्टियोआर्थ्राइटिस (Oesteoarthritis)
- सिर की चोट के पश्चात अशक्तता

3.8 रोगों का निवारण

स्वास्थ्य कार्यकर्ता को समुदाय में संक्रामक रोगों को फैलने से रोकने के लिए आवश्यक कदम उठाने चाहिए। तीन कदमों द्वारा वह रोगों को रोकने के उपाय कर सकता है :–

(1) प्राथमिक निवारण (2) द्वितीयक निवारण

(3) तृतीयक निवारण

(1) स्वास्थ्य कार्यकर्ता समुदाय में आवश्यक उपाय करता है ताकि रोग जनसमुदाय के शरीर को प्रभावित न कर सकें। इसकी समझ विकसित करना।

(2) यदि समुदाय में रोग विद्यमान हैं तो इन्हें नियंत्रित करने में उसकी क्या भूमिका है? इसकी समझ विकसित करना।

(3) यदि कोई व्यक्ति किसी रोग से संक्रमित हो चुका है तो अन्य लोगों की सहायता कैसे करनी है तथा विभिन्न उपायों द्वारा और अधिक क्षति को कैसे रोका जाए।

1. प्राथमिक निवारण (Primary Prevention)

स्वास्थ्य कार्यकर्ता की भूमिका

स्वास्थ्य कार्यकर्ता का यह कर्तव्य है कि वह लोगों के स्वास्थ्य में सुधार लाने के लिए प्रयास करे। रोगों के फैलने तथा उनके निवारण के संबंध में लेक्चरों, पोस्टरों तथा पैंफलेटों आदि के माध्यम से रोगों के निवारण के लिए जनसमूह को स्वस्थ जीवन शैली के संबंध में स्वास्थ्य शिक्षा प्रदान करके ऐसा किया जा सकता है।

(1) स्वास्थ्य कार्यकर्ता द्वारा लोगों को बताया जाना चाहिए कि उन्हें धूल – मिट्टी तथा मक्खियों के सम्पर्क में रखे भोजन तथा कटे हुए फल व सब्जियों का सेवन नहीं करना चाहिए ।

(2) हैंडपम्प के पानी का प्रयोग पीने के लिए नहीं करना चाहिए। कुएं के पानी का प्रयोग यदि पीने के लिए किया जा रहा हो तो सप्ताह में दो बार कुएं में ब्लीचिंग पाउडर डालना चाहिए । क्लोरीनयुक्त नल के पानी का प्रयोग करें या ऐसा पानी उपलब्ध नहीं है तो क्लोरीन टेबलैट का प्रयोग करें।

(3) स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं को यह याद रखना चाहिए कि दूषित उंगलियाँ, दूषित व खुले भोजन, मक्खियों, तथा मल–मूत्र से बीमारियाँ फैलती हैं।

(4) शौच के पश्चात तथा भोजन से पहले हाथों को साबुन व पानी से साफ करने की आवश्यकता बतानी चाहिए।

(5) धूम्रपान व शराब से बचने के लाभ बताने चाहिए।

परिवार नियोजन से भी समुदाय के लोगों का स्वास्थ्य संवर्धन किया जा सकता हैं जिसमें उनके बच्चों की संख्या सीमित रहेगी तथा उनकी सामाजिक – आर्थिक स्थिति में सुधार होगा । अच्छी व्यक्तिगत स्वच्छता **(Personal Hygiene)** के माध्यम से भी खुद को विभिन्न रोगों से बचाया जा सकता है। प्रतिरक्षण **(Immunization)** के माध्यम से विशिष्ट संरक्षण द्वारा भी विभिन्न रोगों के निवारण में सहायता मिलती है। कॉण्डोम के प्रयोग से एस टी डी से बचा जा सकता है तथा यह परिवार नियोजन में भी सहायक होता है।

2. द्वितीय निवारण (Secondary Prevention)

स्वास्थ्य कार्यकर्ता की भूमिका

समुदाय में रोग प्रवेश कर जाते हैं, यह स्वास्थ्य कार्यकर्ता का दायित्व है कि वह संक्रमण की श्रृँखला को विखण्डित करके इन्हें नियंत्रित करें।

संक्रमण श्रृंखला	स्रोत	नियंत्रण के उपाय	संचरण के माध्यम
1. रोगी 2. वाहक		– प्रारम्भिक स्तर पर निरूपण – प्रारम्भिक स्तर पर उपचार – वियोजन – सूचना – स्वास्थ्य शिक्षा	– दूषित जल (जलवाहित रोग) – वायुवाहित – मृदा से (Soil) – प्रत्यक्ष सम्पर्क – पशु

3. तृतीयक निवारण (Tertiary Prevention)

रोग द्वारा प्रभावित किए जाने के पश्चात स्वास्थ्य कार्यकर्ता के द्वारा उठाए जाने वाले कदम

(1) अशक्तता के कारण संचलन **(Movement)** को सीमित करना – कोढ़ जैसे रोगों में डाक्टर द्वारा ऐसा किया जा सकता है।

(2) पुनर्वासन एंव व्यावसायिक चिकित्सा विज्ञान **(Occupational Therapy)** – इन मामलों में फिजियोथेरेपिस्ट उपयोगी होते हैं।

पाठगत प्रश्न 3.2

रिक्त स्थान भरिए –

1. रोगी को........................ में वापस लाने के लिए पुनर्वासन सहायक होता है।
2. शारीरिक विकृति .... प्रकार की हो सकती है।
3. रोगों के निवारण प्राथमिक, द्वितीय, व .... निवारण होते हैं।

3.9 व्यक्तिगत स्वच्छता (Personal Hygiene)

विभिन्न स्वास्थ्य संबंधी आदतें ''व्यक्तिगत स्वच्छता विज्ञान'' (Personal Hygiene) के अन्तर्गत आती हैं। विभिन्न रोग व्यक्तिगत प्रस्वच्छता के कारण जन्म लेते हैं, उदाहरण के लिए त्वचा रोग, दातों का खराब होना, फोड़े आदि।

स्वास्थ्य विज्ञान में वे सभी कारक शामिल हैं जो स्वस्थ जीवन में सहयोग करते हैं। व्यक्तिगत स्वच्छता शारीरिक स्वास्थ्य से संबंधित है, जब कि पर्यावरण भी इसमें महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है, जैसे दूषित जल, वायु प्रदूषण, विभिन्न कीटाणु जनित रोग मलेरिया, फाइलेरिया आदि।

रोजाना ब्रश करना | नाखून काटना | जूतों का प्रयोग | बालों की देख–रेख | रोज़ाना नहाना | हाथ धोना

चित्र 3.8: व्यक्तिगत स्वच्छता

क) प्रतिदिन स्नान

प्रतिदिन स्नान करने से शरीर धूल तथा पसीने से मुक्त रहता है। साबुन व पानी से स्नान करना अच्छा होता है तथा स्नान करते समय शरीर के सभी अंगों को साफ करना चाहिए । सर्दियों के दौरान सूरज के प्रकाश में स्नान करना लाभदायक होता है। सूरज की किरणों से हमें विटामिन–डी' प्राप्त होता है, जिसकी आवश्यकता हमारी अस्थियों को होती है ताकि ओएस्टोमलेसिया (वयस्कों में) तथा रिकेट (बच्चों में) जैसे अस्थि रोगों से सुरक्षा प्राप्त हो सके ।

ख) साफ कपड़े पहनना

हमें प्रतिदिन अपने कपड़े धोने चाहिए और उन्हें धूप में सुखाना चाहिए तथा प्रतिदिन स्नान करने के पश्चात साफ कपड़े पहनने चाहिए। सूरज की किरणें कीटाणुओं (सूक्ष्मजीवों) को नष्ट कर देती हैं।

अस्वच्छ कपड़े पहनना रोगजनक तो है ही, साथ ही दरिद्रता की भी निशानी है। इसलिए आपके कपड़े साफ–सुथरे होने चाहिए।

ग) दाँतों की देखरेख

दाँतों की मजबूती तथा मुँह के स्वास्थ्य के लिए भोजन के पश्चात दाँतों को ब्रश करना चाहिए। नियमित रूप से ब्रश करने से दाँतों में केविटी तथा उनके खराब होने से बचा जा सकता है। यह मसूड़ों को भी स्वस्थ रखता है और पायरिया (Pyorrhoea) जैसे रोगों से मसूड़ों को सुरक्षित रखता है। इसके अतिरिक्त, मुँह से बदबू भी नहीं आती है। समय–समय पर दाँतों के डाक्टर से दाँतों की जांच कराना भी आवश्यक है।

घ) आंखों की देखरेख

अपनी आँखों को धुएं, चोट तथा धूल इत्यादि से बचाना चाहिए। बच्चों में विटामिन – ए की आवश्यकता होती है क्योंकि यह विटामिन बच्चों को रतौंधी (Night Blindnes) जैसे रोगों से सुरक्षा प्रदान करता है। बच्चों की आँखों में काजल या सुरमा नहीं लगाना चाहिए क्योंकि ये तत्व आंखों के लिए हानिकारक हो सकते हैं तथा आप जिन उंगलियों से काजल या सुरमा लगाते हैं वे भी दूषित हो सकती हैं। कुपोषण की स्थिति भी शुष्काक्षिपाक (Xerophthalmia) तथा रतौंधी (Night Blindness) जैसे रोगों को जन्म देती है।

मोतियाबिन्द तथा दृष्टि में खराबी जैसी आंखों की बीमारियों की जांच के लिए डाक्टर से सम्पर्क करें। आँखों की देखरेख निम्नलिखित माध्यमों से की जा सकती है:–

1. स्कूल में बच्चों की आँखों की जांच
2. कार्निया अलसर की जांच व उपचार
3. नेत्र विशेषज्ञ से परामर्श
4. संतुलित भोजन
5. स्वास्थ्य शिक्षा
6. अच्छा शारीरिक स्वास्थ्य

टिप्पणी

ड.) हाथों को धोना

शौच के पश्चात तथा भोजन करने से पहले हाथों को साबुन व पानी से धोएं। भोजन पकाने व परोसने वालों को अपने हाथों को अच्छी तरह से धोना चाहिए ताकि रोगों को फैलने से रोका जा सके।

च) नाखूनों को काटना

भोजन खाते समय लंबे नाखून भोजन के सम्पर्क में आ जाते हैं। लंबे नाखूनों में बड़ी मात्रा में मैल तथा बैक्टीरिया एकत्र हो जाते हैं तथा ये बैक्टीरिया अनेक रोगों को जन्म देते हैं। जहां भोजन परोसा जाता है, हमें वहां भोजन वितरक के नाखूनों की जांच करनी चाहिए।

छ) बालों की देखभाल

हमें अपने बालों की देखभाल करनी चाहिए क्योंकि गंदे बालों में रूसी (Dandruff) तथा जूएं पैदा हो जाती हैं। बालों को नियमित रूप से शैंपू से धोने तथा अच्छा आहार (पोषण) लेने से बालों को स्वस्थ तथा बैक्टीरिया मुक्त बनाए रखने में मदद मिलती है। स्वास्थ्य कार्यकर्ता को सुनिश्चित करना चाहिए कि रसोईघरों में कार्य करने वालों के सिर पर टोपी अवश्य हो, जिससे खाना बनाते समय खाने में बालों के गिरने से बचा जा सके।

ज) खुले में मलोत्सर्जन से बचना

खुले में मलोत्सर्जन से हैजा, हुकवर्म (Hookworm) संक्रमण आदि अनेक रोग उत्पन्न हो जाते हैं। मानव मल सर्वाधिक सुरक्षित ढ़ंग से निपटाया जाना चाहिए तथा हमेशा सेनिटरी शौचालय का प्रयोग किया जाना चाहिए।

झ) रजोधर्म (Menstruation) के दौरान स्वच्छता

रजोधर्म के दौरान महिलाओं को **अस्वच्छ** (Unclean) माना जाता है तथा इस दौरान उन्हें बहुत सारे कार्य करने वर्जित होते हैं। अंधविश्वासों के कारण रजोधर्म के दौरान महिलाओं को रसोईघर में कार्य करने तथा अन्य घरेलू कार्यों की अनुमति नहीं होती है । रजोधर्म स्राव को नियंत्रित करने के लिए स्वच्छ सेनिटरी पैड का प्रयोग किया जाना चाहिए। साथ ही, अंतः वस्त्रों की स्वच्छता के साथ–साथ व्यक्तिगत स्वच्छता पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए।

पाठगत प्रश्न 3.3

जोड़े मिलाइए–

(क)	(ख)
1. दाँत	(i) रिकेट्स
2. आँख	(ii) हुकवर्म संक्रमण
3. हड्डी	(iii) फोड़े, फुंसी

टिप्पणी

4.	खुले मलोत्सर्जन	(iv) पायरिया
5.	त्वचा	(v) विटामिन डी
6.	सूरज की किरणें	(vi) रतौंधी

3.10 संगरोध (Quarantine)

यदि कोई व्यक्ति संक्रामक रोग से प्रभावित है तो उसे उस समय तक स्वस्थ लोगों से अलग रखा जाना चाहिए, जब तक सम्पर्क में आए विशेष रोग की उद्भवन अवधि पूरी न हो जाए। उद्भवन अवधि (Incubation Period) से तात्पर्य किसी मानव शरीर में एजेंट (सूक्ष्मजीवी) के प्रवेश से लेकर रोग के संकेत/लक्षणों के विकसित होने तक की अवधि है।

किसी देश में संक्रामक रोग फैला हुआ हो तथा उसे देश से लोग समुद्री जहाज या विमान के माध्यम से आ रहे हों तो यह उन पर लागू होता है। ऐसे यात्री जो उस विशेष संक्रामक रोग के प्रतिरक्षण (Immunization) के बिना आते हैं , जो कि उस देश में विद्यमान है जहाँ से वे आ रहे है तो उन्हें संक्रामक रोग की उद्भवन अवधि समाप्त होने तक देश में प्रवेश नहीं करने दिया जाता है। भिन्न–भिन्न रोगों के लिए उद्भवन अवधि भिन्न–भिन्न होती है , जैसे हैजा के लिए 6 दिन, पित्त ज्वर तथा प्लेग के लिए 6 दिन। यात्री द्वारा अपने देश से प्रस्थान किए जाने की तारीख से उद्भवन अवधि गिनी जाती है।

जीव, लक्षण तथा निवारक उपाय संबंधी तालिका

बीमारी	सूक्ष्म जीवाणु	लक्षण	उपचार	निवारक उपाय
कॉलरा (हैजा)	बिब्रियो कॉलरा	डिहाड्रेशन, चावल के पानी जैसे शौच दर्द रहित डायरिया	ओ.आर.एस. ऐन्टिबायोटिक टेट्रासाइक्लिन घर का बना तरल पदार्थ	शीघ्र निदान एवं उपचार करना, सूचित करना स्वास्थ्य, शिक्षा, इम्यूनाइजेशन, उल्टियां तथा मानव मल–मूत्र को असंक्रमिकृत करना
बैसिलरी पेचिश	शिजेल्ला (जीवाणु)	डिहाड्रेशन, रक्त और श्लेष्मा के साथ डायरिया	ओ.आर.एस. एन्टीबायोटिक घर का बना हुआ तरल पदार्थ	मानव मल–मूत्र का असंक्रमणीकरण, मरीज/वाहक का उपचार, स्वास्थ्य, शिक्षा खाने और पीने वाले पदार्थों का संरक्षण
अमीबा पेचिश	एन्ट अमीबा हिस्टोलिटिका (परजीवी)	डायरिया रक्त के साथ कम मात्रा में शौच आना, मरोड़ एवं ऐठन के साथ दर्द	ओ.आर.एस. मेट्रोनीडाजोल गोली, घर का बना तरल पदार्थ	मानव मल–मूत्र का समुचित निपटारा, जिससे जल व सब्जी दूषित न हो व्यक्तिगत स्वच्छता

टिप्पणी

(ख) जीवाणु से होने वाली बीमारियाँ

बीमारी	सूक्ष्म जीवाणु	लक्षण	उपचार	निवारक उपाय
तपेदिक (टी.बी.)	माइकोबैक्टीरियम ट्यूबर क्यूलोरिस	शाम के समय पर हल्का बुखार, वजन कम होना, लम्बे समय तक कफ बलगम के साथ रक्त आना, छाती में दर्द होना	डॉट्स 3 सप्ताह से अधिक समय के लिए ट्यूबर क्लोसिस रोधी	बलगम(थूक) की ए.एफ.बी. (एसिड फास्ट बैसिलसी की जाँच बी.सी.जी. स्वास्थ्य शिक्षा मैनटॉक की जाँच
टिटनेस	क्लोस्ट्रीडियम टिटेनी	बच्चों एवं शिशुओं को डी.पी.टी. की खुराकें घाव का उपचारएवं एन्टी टॉक्सिन उपचार	दर्द मांसपेशियों में खिंचाव,जबड़े का बन्द होना, खेत अथवा गलियों में चोट लगना तथा अप्रशिक्षित दाइयों द्वारा प्रसव कराया जाना	गर्भवती महिलाओं को टिटनेस टॉक्सॉयड ऑपरेशन में उपकरणों की, कपड़ों ग्लूकोस की आटो क्लैविंग ओ.टी. तथा प्रसूति कक्ष में छिड़काव, टी.टी., डी.पी.टी. द्वारा असंक्रमणी–करण टिटनेस टॉक्साईड का इंजेक्शन तथा 1 महीने के अन्तराल पर दो खुराकें गर्भवती महिलाओं को 4°C से 8°C के तापमान में डी.पी.टी. के टीके का नियो नैटल टिटनस का निवारण गर्भवती महिलाओं को टी.टी. की खुराक, प्रशिक्षित कर्मचारियों द्वारा स्वच्छ और साफ–सुथरी प्रसव कराया जाना। मामले की पहचान करना और स्वास्थ्य अधिकारियों को सूचित करते हुए इसका तुरन्त उपचार करना, स्वास्थ्य शिक्षा, असंक्रमित मामलों को टेटनस गामा ग्लोब्यूलिन से उपचारित किया जाना चाहिए।

टिप्पणी

निमोनिया	न्यूमोकोक्कस स्टैफाइलोकोक्कस स्टैप्टोकोक्कस	सामान्य सर्दी बुखार एवं बलगम के साथ कफ	एन्टी बायोटिक सिम्पटोमेटिक दर्द और बुखार के लिए	धूम्रपान करने से बचें और सर्दी से बचें। एक्स–रे द्वारा शीघ्र इस रोग की जाँच कराएँ। उपरी श्वसन प्रणालियों को संक्रमित होने से बचाएँ। असंक्रमणीकरण।
मैनिन–जाइटिस	स्टैप्टो कोक्कस मेनिनजो कोक्कस	तेज बुखार, सिर दर्द, गर्दन में दर्द ।	एन्टीबायोटिक टयूबरक्लोसिस के मामले में ए.टी.टी.	औषधी द्वारा निवारण तथा महामारी रोगों के सम्पर्क से बचें।
मैनिन–जाइटिस	ट्यूबरकुलर	कठोरता मरोड़ एवं ऐंठन कोमा (अचेत होना)	औषधि द्वारा निवारण	महामारी रोगों के सम्पर्क से बचें।

(ग) परजीवी से होने वाली बीमारियाँ

बीमारी	**सूक्ष्म जीवाणु**	लक्षण	उपचार	निवारक उपाय
मलेरिया	मलेरिया परीजीवी प्लाजमोडियम प्रजातियाँ :– 1. पी. विवैक्स 2. पी .फैल्सीपैरम 3. पी. ओवेल 4. पी. मलेरिया	सर्दी के साथ बुखार एवं ज्याद ठंड एवं गर्म स्तर पर पसीना आना विवैक्स मलेरिया होने से 3–4 दिन के अंतराल पर दुबारा लक्षण प्रतीत होना अधिक तेज बुखार मरोड़ और अचेतना	क्लोरोक्वीन तथा प्रभावक्वीन से उपचार (रैडिकन प्राइमाक्विन)	इंजीनियरिंग पद्धति से मच्छरों को नियंत्रित करने के लिए एन्टी लार्वा, एन्टी व्यस्क उपाय छिड़काव / फॉगिंग, मच्छरदानी का प्रयोग तथा बायोलॉजिकल कंट्रोल, घरेलू पदार्थों की स्वच्छता पीने योग्य पानी, स्वच्छता
एन्ट अमीबा हिस्टो–लिका	एन्ट अमीबा हिस्टोलिका (शौच में एन्टअमीबा हिस्टोलिटिका सिस्ट)	लीवर फोड़ा अमीबीक पेचिश पेट दर्द	एन्टीबायोटिक मेट्रोनाइडाजोल, स्वास्थ्य शिक्षा व्यक्तिगत स्वच्छता	पर्यावरण स्वच्छता को सुधारना तथा जल–आपूर्ति वाहकों का उपचार आहार की स्वच्छता, पीने के लिए पीने योग्य पानी।

टिप्पणी

(घ) वायरल बीमारी

बीमारी	सूक्ष्म जीव	लक्षण	उपचार	निवारक उपाय
स्माल पॉक्स	विषाणु	(बीमारी का उन्मूलन कर दिया गया है)		
एन्फ्लूएन्जा	एन्फ्लूएन्जा विषाणु	बुखार,कफ, कमजोरी एवं शरीर में दर्द	सिम्टोमैटिक एन्टीपाइरेटिक एनलजेसिक्स	बच्चों और वयस्कों का टीकाकरण
पोलियो माइलिटिस	पोलियो विषाणु	नॉन–पैरालाइटिक के हल्के लक्षण तथा गर्दन तथा पीठ में दर्द के साथ पैरालाइज संकुचन, बुखार मांशपेशियों का संकुचित होना	यदि शरीर के अधिक हिस्सों में पैरालाइज का प्रभाव हो तो मरीज को अस्पताल ले जाएं! दर्द के लिए एनालजेसिक अशक्तता की जांच के लिए परीक्षण	0–5 वर्ष तक की आयु के बच्चों को ओ.पी.वी. कोल्डचेन का अनुरक्षण छोटे मामलों में शारीरिक व्यायाम कराएं पैरालाइज के लिए फिजियोथैरेपी इन्जेक्शन से बचें।
एड्स	एच.आई.वी. विषाणु	इसके कोई खास पहचान व लक्षण नहीं है, निम्नलिखित लक्षण देखे जा सकते हैं। वजन कम होना डायरिया बुखार मरीज ट्यूबरक्लोसिस से पीड़ित हो सकता है।	सिम्पटोमैटिक	1. कंडोम का प्रयोग 2. असुरक्षित तथा बहुलैंगिक संबंध से बचें 3. सिरिन्ज एवं सुईयों (संक्रमित) से बचें। इनको उपयुक्त रूप से नष्ट किया जाना चाहिए। 4. शीघ्र उपचार एवं निदान– दोनों पार्टनरों की जांच कर उनका उपचार किया जाना चाहिए। 5. स्वास्थ्य शिक्षा
खसरा	खसरा विषाणु	बुखार, नाक बहना, कफ, ऑखें लाल होना उल्टी एवं डायरिया के साथ शरीर पर दाने। पहले तथा दूसरे उपरी जबड़े की झिल्लियों में नीले रंग के तथा बहुत ही छोटे फफोले, कान गर्दन और चेहरे के पीछे दाने दिखाई देना, वजन कम होना, कमजोरी	यह वायरस से होने वाली बीमारी हैं इसलिए एन्टीबायोटिक का असर नहीं होता, हालांकि इनकी जटिलताओं की जांच करते रहने की आवश्यकता होती है सामान्यतः पैरासीटामॉल की गोली बुखार को कम करने के लिए दी जाए	मरीज को अलग रखना, स्वास्थ्य अधिकारी को सूचित करना कमरे और वस्तुओं को संक्रमित करना। यदि आवश्यक हो तो इस बीमारी की जटिलता के निवारण के लिए एन्टीबायोटिक दें। 9 माह की आयु में बच्चों को खसरे का टीका लगवाएं बच्चों को समुचित पौष्टिक आहार। कुपोषण से बचें।

(ङ.) फंगी

बीमारी	सूक्ष्म जीव	लक्षण	उपचार	निवारक उपाय
गोल कृमि द्वारा परजीवी संक्रमण (एसकेरियोसिस)	एसपरजेल्लस	म्यूकस के साथ कफ, बलगम,छाती में दर्द	हैमीसिन	फफूंदी की नमी से शरीर का बचाव समुचित कपड़ा पहनना, फफूंदी का कल्चर

(च) कीटाणु

बीमारी	सूक्ष्म जीव	लक्षण	उपचार	निवारक उपाय
गोल कृमि द्वारा परजीवी संक्रमण (एसकेरियोसिस)	एस्केरिस लुम्ब्री कॉयडेस (गोल कृमि)	पेट में दर्द, लोहे की एनीमियॉ खराब स्वास्थ्य डायरिया एलर्जी	मेबेन्डाजोल एवं अलबैन्डाजोल	मल मूत्र का समुचित तरीके से निपटान मरीज का उपचार व्यक्तिगत स्वच्छता खेत में शौच जाने से बचें।
हुक वॉर्म (अंकुश कृमि) द्वारा परजीवी संक्रमण	एन्साइलोस्टोमा ड्यूओडेनेल (अंकुश कृमि)	श्वसन प्रणाली में एलर्जी गंभीर एनीमिया पीली एवं सफेद त्वचा पेट में दर्द	निदानः शौच की जांच उपचारः औषधि द्वारा– मेबेन्डाजोल और अल्बेंडाजोल आयरन (ओरली)	मानव मल–मूत्र का समुचित निपटान, खेत में शौच जाने से बचें। टहलते समय जूते पहनें।
फीता कृमि टेनियनसिस का परजीवी संक्रमण	टैनिया सोलियम (फीता कृमि) टैनिया सैजीनाटा (सुअर के मांस से गोल कृमि)	पेट की आंते खराब होना, एनीमिया की स्थिति भूख, पेट में दर्द	अल्बेन्डा जोल	मांस को उचित रूप से पकाकर खाएं (सुअर का मांस)

आपने क्या सीखा

इस पाठ में आपने रोग की उत्पत्ति के विभिन्न कारकों के बारे में व उनकी रोकथाम के बारे में विस्तार से अध्ययन किया। प्रतिरक्षण तथा खाद्य संपूरण द्वारा बीमारियों को नियंत्रित करने के बारे में भी जानकारी दी गई है। अस्पताल में रोगी की रोकथाम के उपायों के साथ व्यक्तिगत स्वच्छता के विभिन्न पहलुओं पर भी चर्चा की गई है।

पाठान्त प्रश्न

1. स्वास्थ्य संगठन (WHO) के अनुसार 6 रोगों के विरूद्ध प्रतिरक्षण कार्यक्रम का उल्लेख कीजिए।

2. अस्पताल में अपनाए जाने वाले विशिष्ट संरक्षकों का उल्लेख कीजिए।

3. व्यक्तिगत स्वच्छता (Personal Hygiene) से आप क्या समझते हैं? नेत्रों की देखरेख के संबंध में लिखिए।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

3.1 1. कॉन्डोम 2. जूतों

3. दस्तानों 4. रोग

3.2 1. सामान्य क्रियाशीलता 3. तृतीयक

2. दो

3.3 1 (iv), 2 (vi), 3 (i), 4 (ii), 5 (iii), 6 (v)

गतिविधियाँ

1. स्वास्थ्य केन्द्रों का दौरा करें तथा प्रतिरक्षण कार्यक्रम का अवलोकन करें।
2. अपने क्षेत्र के अस्पताल को देखें तथा वहाँ अपनाए जा रहे विशिष्ट सुरक्षा उपायों का पता लगाएँ।

टिप्पणी

4

प्राथमिक उपचार

भूमिका

कभी–कभी बहुत सी ऐसी आकस्मिक परिस्थितियाँ हर व्यक्ति के जीवन में अक्सर आती हैं–जिसमें यदि ढंग से तुरन्त उपचार किया जाए तो शारीरिक क्षति को बहुत हद तक कम किया जा सकता है और कई बार तो उसे मृत्यु से भी बचाया जा सकता है। उपचार के इसी तरीके को हम प्राथमिक उपचार (First aid) कहते हैं। इसमें रोग या परेशानी को दूर तो नहीं किया जा सकता पर कम किया जा सकता है। मतलब यह कि यह पूर्ण उपचार तो नहीं है, पर समय पर उपलब्ध हो जाए तो दुर्घटना के बाद अनेक लोगों की जान बच सकती है।

चित्र 4.1: प्राथमिक उपचार किट

प्राथमिक उपचार का महत्व इतना है कि स्कूलों में हर विद्यार्थी को इसके बारे मे जानना अनिवार्य कर दिया गया है।

इस पाठ में हम अपने स्वास्थ्य कार्यकर्ता को एक कुशल प्राथमिक उपचारक बनाकर न केवल अनेक व्यक्तियों को बचा सकते हैं– बल्कि आम नागरिक को भी उनके मार्फत जानकारी और

टिप्पणी

प्रशिक्षण दिलवाकर उन्हें प्राथमिक उपचार में निपुण बना सकते हैं। इसमें हम जानेंगे कि कैसे प्राथमिक उपचार द्वारा –

(1) जीवन को बचाना है।

(2) पीड़ा को कम करना है।

(3) पीड़ित व्यक्ति को त्वरित सहायता उपलब्ध कराने में सहायक होना है।

(4) पीड़ित व्यक्ति की परिस्थितियों को और खराब होने से रोकना है।

(5) शरीर के विभिन्न अंगों की क्षति को रोकना है।

चित्र 4.2: नब्ज़–दर मापने के लिए उंगलियों के अग्रभाग का प्रयोग

उद्देश्य

इस पाठ के अध्ययन के पश्चात् आपः

(क) चिकित्सीय या शल्य–आपात स्थितियों का प्राथमिक उपचार कर सकेंगे।

(ख) आपात स्थिति में संकेतों और लक्षणों के सहारे उसके प्राथमिक उपचार प्रबंध के तरीकों को अपना सकेंगे।

(ग) आपात स्थितियों में प्राथमिक उपचार उपलब्ध कराकर जीवन की रक्षा कर सकेंगे।

(घ) विभिन्न परिस्थितियों को समझकर उसके उपचार का व्यावहारिक उदाहरण प्रस्तुत कर सकेंगे।

(ङ) शरीर के वायटल पैरामीटर्स को समझ सकेंगे।

4.1 सामान्य एवं आवश्यक जानकारियाँ

आपातकाल में उपचार एक जटिल प्रक्रिया है। अतः प्राथमिक उपचारकर्ता को कुछ चीजों का सामान्य ज्ञान होना आवश्यक है, जिसके सहारे उपचार करना थोड़ा आसान हो जाता है। ये चीजे हैं– व्यक्ति की लंबाई, भार, नब्ज दर, रक्तचाप, श्वसन दर तथा तापमान। किसी स्वस्थ व्यक्ति में इनका सही माप क्या होना चाहिए इसकी पूरी जानकारी आवश्यक है। बीमारी या दुर्घटना के समय इनमें किसी भी तरह की गड़बड़ी (असामान्यता) मरीज के जीवन–क्रम में असंतुलन पैदा कर देती है जिसे यदि तत्काल न देखा जाए तो मरीज की स्थिति गंभीर हो सकती है और उसकी मृत्यु भी हो सकती है।

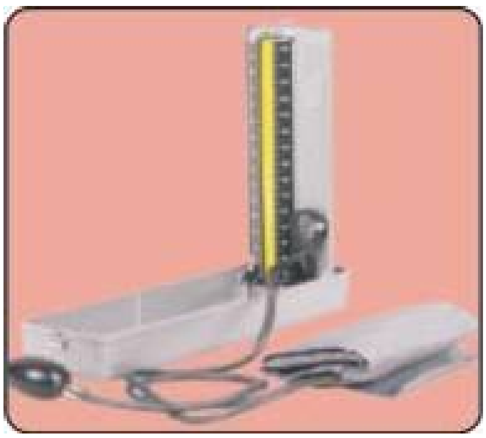

चित्र 4.3: रक्त दाब मापन उपकरण

टिप्पणी

भार

(1) हर मरीज का भार लेना चाहिए– जूते उतारकर और हल्के कपड़े में।

(2) संभव हो तो नापने वाले स्केल के सहारे उसकी लंबाई की भी माप कर लें। (सारिणी देखें–)

(3) स्केल और सारणी में देख लेना चाहिए कि व्यक्ति समानुपातिक है या मोटा (ओवरवेट) या पतला (अंडरवेट) है। उपचार क्रम में इसकी जरूरत पड़ती है।

	आयु वर्ष	भार		लम्बाई	
		(कि.ग्रा.)	(पौंड)	(सेमी.)	(इंच)
शिशु	0.0–0.5	6	13	60	24
	0.5–10	9	20	71	28
बच्चे	1–3	13	29	90	35
	4–6	20	44	112	44
7 – 10 वर्ष	28	62	132	52	
पुरुष	11–14	45	99	157	62
	15–18	66	145	176	69
	19–22	70	154	177	70
	23–50	70	154	178	70
	51+	70	154	178	70
महिलाएँ	11–14	46	101	157	62
	15–18	55	120	163	64
	19–22	55	120	163	64
	23–50	55	120	163	64
	51+	55	120	163	64

चित्र 4.4: लम्बाई अनुपात की सारणी

रक्तचाप

व्यक्ति का रक्तचाप उपचार में बहुत सहायक है–इसे स्फिग्मोमैनोमीटर (रक्तचाप मापी) के सहारे मापा जाता है। इसमें एक रबर के कप को बाँह में लपेटते हैं, फिर पम्प की मदद से उसका दबाव बढ़ाते हैं जिसे, पारा के स्केल पर देखते जाते हैं। फिर, स्टेथोस्कोप की मदद से ब्रेकियल नाड़ी पर घटते दाब को महसूस करते हैं, जितने दाब पर पहली ध्वनि सुनाई देती है, उसे सिस्टोलिक या संकुचन दाब कहते हैं और जितने दाब पर नाड़ी की ध्वनि मंद हो जाती है, उसे डायस्टोलिक दाब कहते हैं। चित्र में स्फिग्मोमैनोमीटर तथा उससे रक्तचाप मापने का तरीका दिखाया गया है।

चित्र 4.5: रक्त दाब मापते हुए

टिप्पणी

तापमान

अनेक व्यक्तियों में तीव्र तापमान संकट का कारण होता है। इसे हम थर्मामीटर के सहारे मापते हैं। प्रत्येक थर्मामीटर में 95°F से 108°F तक का स्केल अंकित रहता है। इसका सही आंकलन इलाज में बहुत सहायक होता है।

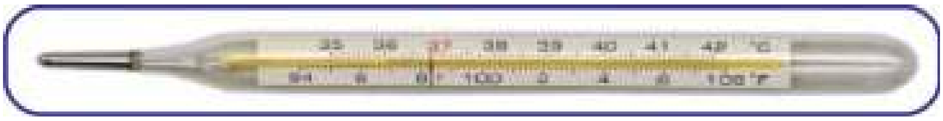

चित्र 4.6: क्लीनिकल थर्मामीटर

नाड़ी–दर

रोग के निर्धारण और उपचार में नाड़ी–दर की बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका है। जब हमारा हृदय संकुचित होता है तो उसका स्पंदन हमारी नाड़ी में महसूस होता है। एक मिनट में नाड़ी जितनी बाद स्पंदन करती है, उसे नाड़ी–दर कहते हैं। सामान्यतः यह नियमित रहता है। किन्तु असामान्य परिस्थितियों में यह तीव्र (100/मिनट से अधिक), मंद (50/मिनट से कम) तथा अनियमित हो सकता है।

इसे हम रेडियल धमनी के ऊपर कलाई के पास महसूस करते हैं। इसे रेडियल–नाड़ी कहते हैं। इसके अलावा हम जाँघ के ऊपरी भाग में फिमोरल नाड़ी, गरदन के पास कैरोटिड नाड़ी, कोहनी के जोड़ के पास ब्रैकियल नाड़ी, पैर में डॉर्सल–पेडिस नाड़ी आदि के रूप मे महसूस करते हैं। आपात स्थितियों में यदि रेडियल–नाड़ी नहीं मिल रही है तो दूसरी नाड़ियों से रोगी की स्थिति का आंकलन करते हैं।

श्वसन

श्वसन की दर यानी प्रति मिनट कितनी बार श्वास लिया जा रहा है। श्वसन का तरीका– ये इमरजेंसी की स्थिति में भीतरी अवस्था का परिचायक होता है। इसके द्वारा हमें उपचार में सहायता मिलती है।

4.2 आपातकालीन स्थितियां

आइये, अब हम कुछ ऐसी स्थितियों की चर्चा करें जिसमें प्राथमिक उपचार मरीज की जान बचाने में सहायक होता है–

4.2.1 प्रघात (Shock)

प्रघात अर्थात शॉक एक ऐसी स्थिति है जो अचानक चोट लगने या आंतरिक हैमरेज (खून बहना) से उत्पन्न होती है। इस अवस्था में रक्तचाप कम हो जाता है, नाड़ी दर बढ़ जाती है, हृदय गति तीव्र हो जाती है। त्वचा पीली पड़ जाती हैं, ठंडा पसीना आने लगता है तथा संवेदना कम हो जाती है। संवेदना की कमी के बाद व्यक्ति बेहाश हो जाता है और समय पर सही उपचार न हो तो व्यक्ति मर भी सकता है।

टिप्पणी

- **लक्षण** –

(क) रक्तचाप घटता जाता है और सिस्टोलिक रक्तचाप 90 से भी कम हो जाता है।

(ख) हृदयगति तीव्र हो जाती है और साथ ही नाड़ी–दर भी तेज हो जाती है।

(ग) त्वचा का रंग पीला पड़ जाता है।

(घ) ठंडा पसीना आने लगता है।

(ङ) श्वसन–दर भी तेज हो जाती है।

(च) पेरिफेरल रक्तवाहिनी संकुचित हो जाती है।

(छ) संवेदना कम हो जाती जो बेहोशी की अवस्था तक पहुँचा देती है।

(ज) उल्टी और वमन की प्रवृति रहती है।

★ **शॉक के कारण और प्रकार**

(1) अत्यधिक रक्तस्राव के कारण (हिमरेजिक शॉक), चोट लगने के कारण आंतरिक हिमरैज–उदरीय रक्तस्राव। पेप्टिक अल्सर के कारण। चोट लगने के कारण–बाहरी रक्तस्राव।

(2) अत्यधिक डायरिया और वमन से हुये निर्जलन के कारण।

(3) पैन्क्रियाटाइटिस के कारण उत्पन्न शॉक।

(4) हृदय शैथिल्य या एरिद्मियाजनित शॉक।

(5) संक्रमण के कारण शॉक–इंडोटॉक्सिक शॉक, सेप्टिक शॉक

(6) स्नायु आघात से उत्पन्न–न्यूरोजेनिक शॉक

(7) इसके अलावा भी शॉक के कई अन्य कारण हैं– जिसकी चर्चा यहाँ जरूरी नहीं है। जैसे–इलेक्ट्रिक शॉक।

प्राथमिक उपचार में स्वास्थ्य कार्यकर्ता की भूमिका:–

(1) पैर को उठाकर रखें ताकि हृदय को अधिक से अधिक रक्त मिल सके।

(2) फेस मास्क के सहारे ऑक्सीजन से अन्तः श्वसन देना।

(3) शिराओं के रास्ते डेक्सट्रोज नार्मल सेलाइन तथा रिंगर लैक्टेट का चढ़ाना।

(4) यदि आंतरिक रक्तस्राव है तो रक्त–ट्रान्सफ्यूजन या उसके अभाव में प्लाजमा–एक्सपेन्डर चढ़ाना।

(5) हृदयगति, नाड़ी–दर, रक्तचाप, रक्त–ग्लुकोज़, रक्त–यूरिया पर निरंतर निगरानी रखना।

(6) मूल कारण का पता लगाकर उसका उपचार करना।

(7) मरीज को जल्द से जल्द अस्पताल पहुँचाने की व्यवस्था करना।

4.2.2 बिजली का झटका (Electric Shock)

जब कोई व्यक्ति बिजली–प्रवाह के संपर्क में आता है–चाहे नंगी तारों के चलते, विद्युत के चलते या विद्युत उपकरण के चलते तो उसे बिजली का झटका (Electric Shock) लगता है। यह झटका अक्सर गलती से दुर्घटनावश हो जाता है। इसका असर हमारे स्नायु, हृदय और श्वसन– तीनो तंत्र पर एक साथ पड़ता है।

प्राथमिक उपचार में स्वास्थ्य कार्यकर्ता की भूमिका:–

(1) प्रभावित व्यक्ति को यथाशीघ्र लकड़ी आदि कुचालक की सहायता से विद्युत–स्रोत से दूर हटाने की कोशिश करें तथा जल्दी से जल्दी मेन–स्वीच को बन्द करें।

(2) तुरन्त उपचार के तौर पर कृत्रिम रूप से मुँह से श्वसन दें, ऑक्सीजन दें तथा 5% ग्लूकोज–सेलाइन और रिंगर लैक्टेट के जरिये रक्तचाप को संतुलित करने की कोशिश करें!

(3) जितनी जल्द हो सके प्राथमिक उपचार के बाद निकटतम अस्पताल में भेजने की कोशिश करें।

4.2.3 हाइपोथर्मियां (Hypothermia)

यह स्थिति सर्दियों के महीनों में बुजुर्गों, छोटे बच्चों व शिशुओं में उस समय विकसित होती हैं जब तापमान शून्य डिग्री से नीचे चला जाता है। पहाड़ी क्षेत्रों में जब बच्चे व बुजुर्ग सर्दी से बचने का पर्याप्त उपाय नहीं कर पाते तो उनके शरीर का तापमान उत्तरोत्तर कम होने लगता है। यदि समय पर उपचार का समुचित प्रबंध नहीं हुआ तो प्रभावित व्यक्ति की मृत्यु भी हो सकती है।

★ **लक्षण**

(1) कमजोरी और थकान महसूस होती है।

(2) शरीर में थरथराहट और कंपन महसूस होती हो।

(3) नब्ज और श्वसन कमजोर पड़ने लगता है।

(4) यदि उपचार तुरन्त नहीं हुआ तो मरीज की मृत्यु हो सकती है।

प्राथमिक उपचार में स्वास्थ्य कार्यकर्ता की भूमिका:–

1. मरीज के गीले कपड़ों को तुरन्त उतार दें।
2. उसे किसी सूखे गरम स्थान में आग या हीटर के समीप रखें।
3. पूरे शरीर को कंबल या रजाई से ढक दें।
4. पैरों के नीचे गरम पानी की बोतल रखें और उससे गरम करें।
5. पीने के लिए गरम पानी, चाय, कॉफी आदि दें।
6. अपेक्षित सुधार नहीं हो तो जल्द से जल्द अस्पताल भेजने की व्यवस्था करें।

टिप्पणी

4.2.4 शीत शोथ या शीत–दंश (Chill-Blens or Frostbite)

जब तापमान 0°C या उससे भी नीचे चला जाता है तो बाहर का तापमान बहुत ठंडा हो जाता है तथा शरीर के वे अंग जो हवा के संपर्क में रहते हैं, जैसे हाथ–पैर लाल–लाल होकर थोड़ा सूज जाते हैं, उनमें जलन और खुजलाहट महसूस होती है। इस स्थिति को हम शीत–शोथ या (Chill-blens) कहते हैं। यदि समय पर उपचार न हो तो स्थिति और गंभीर हो जाती है, उस अंग–विशेष में रक्त प्रवाह बहुत कम हो जाता है और वह नीला पड़ जाता है, इस स्थिति को शीत–दंश या Frostbite कहते हैं। यदि उपचार में और विलंब हुआ तो वह अंग और गहरा नीला हो जाता है, जिसे शुष्क गैन्ग्रीन (dry gangrene) कहते हैं। समय पर उपचार नही हुआ, तो गैंग्रीनयुक्त अंग को काटना पड़ सकता है।

प्राथमिक उपचार में स्वास्थ्य कार्यकर्ता की भूमिकाः–

(1) प्रभावित व्यक्ति को गरम कमरे में हीटर या अलाव के पास रखें।

(2) प्रभावित अंग (हाथ/पैर) को गरम पानी में डुबाकर उसे गरम करें (बहुत गरम नहीं)।

(3) गरम करने के बाद उसे ठंड के कुचालक गरम कपड़े से ढ़ककर रखें।

(4) प्रभावित व्यक्ति को यथाशीघ्र अस्पताल भेजने का प्रबंध करें।

4.2.5 एनाफायलैक्सिस (Anaphylaxis)

किसी बाह्य पदार्थ (Foreign Substance) के संपर्क में आने पर शरीर उसके विरूद्ध जो तीव्र एलर्जिक रिएक्शन प्रदर्शित करता है, उसे हम एनाफायलैक्सिस कहते हैं। यह रिएक्शन किसी भी चीज से हो सकता है यथा दवाइयों, विशेष भोजन, धूल या अन्य एलर्जिक तत्व, मधुमक्खी, बिच्छू का डंक आदि। कोई–कोई व्यक्ति एक या एक से अधिक चीजों के प्रति अति उच्च संवेदनशीलता प्रदर्शित करता है जिसके परिणामस्वरूप यह रिएक्शन होता है। शरीर में प्रतिक्रिया स्वरूप ये बातें देखने को मिलती हैं–

(1) रक्तचाप में कमी

(2) श्वास लेने में कठिनाई

(3) त्वचा पर लाल–लाल चकते(Urticarial rashes)

(4) बोलने में कठिनाई

(5) अर्धबेहोशी–बेहोशी

बहुत सी दवाइयाँ भी एनाफाइलैक्सिस के लक्षण, किसी–किसी व्यक्ति में प्रदर्शित करती हैं। ये लक्षण दवा लेने के तुरन्त बाद से लेकर एक से आधे घंटे के बाद उभरते हैं। पर इंजेक्शन, मधुमक्खी या कीड़े के डंक के बाद यह प्रतिक्रिया तुरन्त देखने को मिलती है।

टिप्पणी

एनाफायलैक्सिस पैदा करने वाले एजेन्ट–

औषधियाँ–

पेनिसिलीन, एम्पीसीलीन, एमॉक्सिसिलीन, सल्फा ग्रुप की दवाइयाँ, टेट्रासायक्लिन। NSAID दवाइयाँ–डिक्लाफेनैक, एसिक्लाफेनैक आदि। लोकल एनीस्थिसिया में प्रयुक्त दवाइयाँ–लिग्नोकेन, ब्युपीनाकेन आदि। विटामिन B_1, B_6, B_{12} का इंजेक्शन, ट्रिपल एन्टीजन, आयोडीनयुक्त रेडियोग्राफिक एजेन्ट, बहुत से हार्मोन–जैसे बोवाइन इन्सुलीन आदि।

★ **अन्य चीजें**

बहुत सी मछलियाँ– झींगा मछली आदि। बहुत से फूल के पराग, धूल, मकड़ी का जाला, कीड़ा आदि। मधुमक्खी, ततैया, जेलीफिश, बिच्छू आदि का विष। बहुत लोगों को दूध और अंडे से भी अतिसंवेदी प्रतिक्रिया हो सकती है।

प्राथमिक उपचार में स्वास्थ्य कार्यकर्ता की भूमिका:–

ऐसी किसी भी तरह की प्रतिक्रिया व्यक्ति की जान का खतरा बन सकती है अतः इसका उपचार तुरन्त शुरू करें। यह बहुत गंभीर तरह की प्रतिक्रिया है।

(1) तुरन्त एविल या अन्य एलर्जीरोधी औषधि दें।

(2) श्वसन को सपोर्ट करते हुए शीघ्रातिशीघ्र निकटतम चिकित्सक या अस्पताल में भेजने की व्यवस्था करें।

(3) रक्तचाप कम हो तो ग्लूकोज़–सेलाइन या रिंगर–लैक्टेट चढ़वाने का प्रबंध करें।

(4) गंभीर स्थिति में स्टेरॉयड–यथा हाइड्रोकॉर्टिसोन या डेक्टसामिथासोन का इन्जेक्शन मरीज को दिलवाने की व्यवस्था करें।

पाठगत प्रश्न 4.1

जोड़े मिलाइए:–

(क)	(ख)
1. नाड़ी दर	(i) एविल
2. प्रघात	(ii) हाथ–पैर का लाल होना
3. शीत दंश	(ii) रेडियन धमनी के ऊपर
4. एनाफायलैक्सिस	(ii) उदरीय रक्तस्राव

टिप्पणी

4.2.6 श्वासनली में कोई बाहरी पदार्थ अटकने पर (Forign body in Trachea)

यह अक्सर शिशुओं या बच्चों में होता हुआ देखा गया है। बच्चे खेल–खेल में अपने मुँह में छोटी–छोटी चीजें डालते रहते हैं –जैसे सिक्का, खिलौने के टुकड़े, पत्थर, पार्ट–पुर्जे, पौधों के बीज आदि। खाँसी या छींक के समय ये पदार्थ झटके के साथ श्वास नली में प्रवेश कर जाते है तथा कई परेशानियाँ पैदा करते हैं। जैसे –

(1) श्वासावरोध – साँस लेने में कठिनाई।

(2) खाँसी

(3) श्वास लेने और छोड़ते वक्त सिसकार (Hiss) की ध्वनि। यह स्थिति चिकित्सीय दृष्टि से आपात स्थिति है। इसका तुरन्त उपचार बहुत जरूरी है।

प्राथमिक उपचार में स्वास्थ्य कार्यकर्ता की भूमिकाः–

(1) यदि बच्चा छोटा है तो उसे उल्टा लटकाकर पीठ पर थपकी देते है। अधिकतर मामले में बाहरी पदार्थ बाहर निकल जाता है।

(2) यदि बच्चा बड़ा है और उसे पैर पकड़कर उलटा नहीं लटकाया जा सकता है तो उसके सिर को आगे की ओर झुकाकर पीछे से उसकी छाती पर हाथ रखकर पीठ पर और छाती पर झटका देने से वह बाहरी पदार्थ बाहर आ जाता है।

(3) हीमलिच मैन्यूवर का तरीका (Heimlich Manuver) अपनाएं।

हीमलिच मैन्यूवर–

बड़े बच्चों में यह तरीका प्रयुक्त होता है इस पूरी प्रक्रिया के निम्नलिखित चरण हैं–

(क) मरीज को खड़ा करके उसके पीछे खड़े हो जाएं। उसके काँख से अपना हाथ घुमाकर नाभि के नीचे उसके पेट को जकड़कर रखें।

(ख) मरीज के सर और गर्दन को आगे की ओर झुकाकर रखें।

(ग) दोनों हाथों को जोड़कर फोईड स्टर्नम के नीचे पीड़ित का जोर से आलिंगन करें।

(घ) ध्यान रखें कि आपका हाथ स्टर्नम को नही छुए वरना आंतरिक अंगों को क्षति पहुँच सकती है।

(ङ) दोनों मुट्ठियों को पेट के बीच में रखकर झटके से अचानक दबाएं। इस प्रक्रिया को 5 से 7 बार दोहराएं।

इन तरीकों से अधिकांश मरीजों में श्वास–नली में फँसा पदार्थ बाहर आ जाता है। पर यदि ऐसा न हो तो मरीज को तत्काल अस्पताल ले जाएं जहाँ लैरिन्जोस्कोप (Laryngoscope) तथा अन्य उपकरणों की मदद से उसे बाहर निकाला जा सके।

4.2.7 कुत्ते का काटना (Dog Bite)

यदि रेबिज से ग्रस्त कुत्ते ने काटा है तो अक्सर कुछ दिनों के बाद रेबीज के लक्षण प्रकट होने लगते हैं। ये लक्षण कुत्तों के अलावा संक्रमित बिल्ली, लोमड़ी, भालू, बंदर, भेड़िये, यहाँ तक कि चमगादड़ के काटने से भी हो सकता है। काटने के तुरन्त बाद यदि मरीज का टीकाकरण या उपचार नहीं हुआ तो रेबीज रोग हो सकता है।

चित्र 4.7: कुत्ते का काटना

लक्षण

(अ) जानवरों में –

(क) असामान्य व्यवहार – अनावश्यक और अनपेक्षित रूप से वह उत्तेजित और बेचैन रहता है।

(ख) उग्र – वह उग्र स्वभाव का अचानक हो जाता है। बिना कारण के किसी पर आक्रमण करने को प्रस्तुत रहता है।

(ग) मुँह से झाग आना – मुँह से अत्यधिक झाग आता है, वह खा–पी नहीं पाता है।

(घ) अस्वाभाविक व्यवहार परिलक्षित होने के दस दिनों के अंदर वह जानवर मर जाता है।

(ब) आदमी में –

(a) स्नायु–तंत्र में गड़बड़ी होने से अनावश्यक उत्तेजना रहती है।

(b) लार बहुत गाढ़ा हो जाने से निगलने में कठिनाई होती है।

(c) पानी पीने में भय होता है – हाइड्रोफोबिया

(d) बार–बार दौरे पड़ते हैं लकवा – जो अंत में मृत्यु का कारण बनते हैं।

ध्यान देने की बात है कि प्रभावित व्यक्ति के लार, मूत्र तथा पसीने में रेबीज के वायरस मिल सकते हैं। प्रभावित पशु के दूध आदि के संपर्क में ना आएं। कभी भी मुँह से मुँह की साँस रेबीज के मरीज में न दें।

टिप्पणी

प्राथमिक उपचार में स्वास्थ्य कार्यकर्ता की भूमिकाः–

(1) अगर संभव हो तो काटने वाले पशु को बाँधकर/पिंजरे में बन्द करके रखें।

(2) काटे हुए स्थल को साबुन और पानी के तेज धार में अच्छी तरह रगड़कर साफ कर दें! उस जगह पर हाइड्रोजन–पेराक्साइड से साफ करके उसपर कोई एन्टीसेप्टीक क्रीम या लोशन लगा दें।

चित्र 4.8: क्षति रोकने के लिए कंस्ट्रक्टिव बैंडेज

(3) घाव को खुला रखें, टांके न लगाएं। टांके लगाने से वायरस ज्यादा तेजी से शरीर में प्रसार करता है।

(4) इतने उपचार के बाद व्यक्ति को तत्काल अस्पताल ले जाए ताकि उसे एन्टी रेबीज वैक्सीन आदि जल्द से जल्द दिया जा सके।

चित्र 4.9: घाव पर पट्टी बाँधना

(5) काटने वाला जानवर सामान्यतः 10 से 14 दिनों में मर जाता है। यदि वह दूसरे कारण से मरा हो या मार दिया गया हो तो भी उसका पूर्ण उपचार और जरूरी हो जाता है। याद रखें, एक बार लक्षण उभर कर दिखाई देने लगे तो इसमें शत प्रतिशत केस में मृत्यु हो सकती है, अतः बचाव ही इसका उपाय है।

4.2.8 कान का दर्द (Ear Ache)

कान में दर्द, प्रायः कान में संक्रमण के कारण होता है।

बाह्य कान में – बाहरी कान में कभी कोई घाव या मैल जमा हो जाने से दर्द होता है। रोगी को कान में दर्द, टीस, खुजलाहट, सुनाई कम देना, कान का लाल हो जाना ये सब लक्षण दिखाई देते हैं।

प्राथमिक उपचार में स्वास्थ्य कार्यकर्ता की भूमिकाः–

(1) दर्द के लिए पैरासिटामोल की गोली दें। इससे दर्द कम हो जायेगा।

(2) यदि पीड़ित व्यक्ति को बुखार आये या कान से मवाद आए तो चिकित्सक की सलाह लेनी चाहिए।

(3) कान में मैल घुलाने वाली दवा (सेरूक्लीन, वैक्सॉर्ट आदि) डालते हैं, इससे मैल घुलकर बाहर आ जाता है। नहीं आए तो चिकित्सक उसे सिरिन्जिंग (Syringing) करके या अन्य उपकरण के सहारे बाहर निकाल देते हैं।

टिप्पणी

स्वास्थ्य कार्यकर्ता क्या न करे

(1) कान से मवाद आ रहा हो तो स्वयं उपचार न करें।

(2) कान में कभी बोरो ग्लीसरीन या हाइड्रोजन पेरॉक्साइड ना डालें।

ध्यान रखने योग्य बातें–

(1) तत्काल विशेषज्ञ चिकित्सक की मदद से उपचार आरंभ करें।

(2) देर करने से कई घातक संक्रमण के फैलने और मस्तिष्क तक पहुँचने का भय बना रहता है।

(3) शिशु को पीठ के बल लिटाकर बोतल से दूध न पिलाएं यह नाक या कान में पहुँचकर संक्रमण पैदा कर सकता है।

(4) जुकाम में बच्चों को बहुत जोर लगाकर छींकनें से मना करें।

4.2.9 कान में बाहरी चीज का घुस जाना (Foreign Body in Ear)

जब कभी कान में अनाज, बीज, कोई कीड़ा, मच्छर आदि घुस जाता है तो यह परेशानी का कारण बन जाता है। और उस कान में दर्द, चक्कर आना और कम सुनाई देना आदि लक्षण दिखाई देते हैं।

प्राथमिक उपचार में स्वास्थ्य कार्यकर्ता की भूमिकाः–

(1) बाह्य कान को खींचकर बच्चे के सिर को नीचे की ओर करते हैं इससे किटाणु या तो मर जाता है या बाहर आ जाता है।

(2) कान में टॉर्च की तेज रोशनी डालने पर भी उससे कीड़ा बाहर आ जाता है, खासकर जबकि कीड़ा जीवित है। कान में थोड़ा गरम नारियल या सरसों का तेल डालने से भी कीड़ा मरकर बाहर आ जाता है।

ध्यान रखने योग्य बातें–

(1) कान के भीतर कोई भी धारदार या नुकीली वस्तु न डालें।

(2) माचिस की तीली से कान साफ ना करें।

(3) यदि प्राथमिक उपचार से सफलता न मिले तो तत्काल अस्पताल या स्वास्थ्य केन्द्र पर ले जाएं ताकि उसका विशिष्ट उपकरणों और विशेषज्ञ चिकित्सकों के द्वारा सही उपचार हो सकें।

4.2.10 घाव से रक्त स्राव (Bleeding from Vound)

चोट लगने के बाद कटे–फटे जगह से कभी–कभी खून बहता रहता है। जब रोकने के सरल उपायों से भी इसे नहीं रोका जा सकता है तब इसके लिए स्वास्थ्य कार्यकर्ता को प्राथमिक उपचार के उपाय करने चाहिए।

(1) चोट लगे हुए हिस्से को ऊपर की ओर उठाएं।

(2) साफ कपड़े (हो सके तो स्टरलाइज्ड) की मदद से खून बह रहे जगह पर दबाब डालें ताकि खून बन्द हो जाएं।

(3) फिर भी खून न बन्द हो तो हाथ या पैर के चोट की जगह के ऊपर तथा घाव पर टाइट बाँध दें! हो सके तो इसमें संकुचन (कंस्ट्रक्टिव) बैंडेज लगाएं।

(4) हाथ या पैर को (जहाँ चोट लगा है) ऊँचा रखने का प्रयास करें।

ध्यान रखने योग्य बातें–

(a) उसे इतना कस कर ना बाँधें की रक्त प्रवाह अवरूद्ध हो जाए और वह नीला पड़ जाए।

(b) बाँधने के लिए तार, डोरी या मोटी रस्सी का प्रयोग न करें।

(c) बाँधे हुए हिस्से को आधे घंटे में एक बार खोल कर देख लें, रक्त का बहना बन्द हुआ या नहीं। अगर नहीं हुआ तो उसे फिर से बाँध दें और तुरन्त उचित उपचार के लिए अस्पताल के लिए रैफर करें। सामान्यत: 5 से 6 मिनट में खून का बहना रूक जाता है।

(d) खून बहना रोकने के लिए गोबर, मिट्टी का प्रयोग न करें।

पाठगत प्रश्न 4.2

रिक्त स्थान भरिए–

1. कान के भीतर कभी भी कोई ....वस्तु न डालें।
2. बड़े बच्चों की श्वासनली में कोई अटके हुए बाहरी पदार्थ को निकालने के लिए ....तरीके का प्रयोग किया जाता है।
3. घाव से हो रहे रक्त स्राव को रोकने के लिए ....बैंडेज का प्रयोग किया जाता है।
4. कुत्ते के काटने पर ....वैक्सीन जल्द से जल्द लगवानी चाहिए।
5. कान के दर्द को कम करने के लिए .... की गोली दें।

टिप्पणी

4.2.11 नाक में बाहरी वस्तु जाना (Foreign body in Nose)

कई बार बच्चे मिट्टी, अनाज के दाने, चना, मटर, राजमा आदि नाक में डाल लेते हैं। कोई भी बाहरी वस्तु नाक में हो तो नाक से सफेद रंग का श्लेष्मा स्रावित होता है जो अवरोध के कारण संक्रमित होकर पीला पड़ जाता है, इससे बदबू आने लगती है तथा नाक में दर्द होता है।

प्राथमिक उपचार में स्वास्थ्य कार्यकर्ता की भूमिका:–

(1) यदि बच्चा बड़ा है तो उसे छींक मारने तथा तेजी से नाक से हवा निकालने को कहें।

(2) यदि वह वस्तु भीतर चली गई हो, या बच्चा छोटा हो तो उसे तुरन्त अस्पताल ले जाकर उचित चिकित्सीय उपचार उपलब्ध कराएं।

4.2.12 नाक से खून बहना (Bleeding from Nose)

सामान्यतः नाक से खून निम्न कारणों से आता है –

(a) खुजलाते समय नाक का जख्मी हो जाना।

(b) नाक में दाना (Pimple) होना ।

(c) चोट के कारण नासिका की दीवार का जख्मी हो जाना।

(d) उच्च रक्तचाप से नासिका की रक्तवाहिनी नलियों का फट जाना।

प्राथमिक उपचार में स्वास्थ्य कार्यकर्ता की भूमिका:–

(a) मरीज को शान्त रहने के लिए कहें।

(b) नाक के कोमल भाग को करीब 5 मिनट तक दबा कर रखें।

(c) नाक के बाहरी भाग पर बर्फ रगड़ें व सिर पर ठंडा पानी डाले।

(d) वैसीलीन में भिगोकर गॉज को नासिका छिद्र में डालकर पैक करें और पुनः कोमल भाग दबाएं।

(e) रोगी को तुरन्त अस्पताल के लिए रैफर करें।

टिप्पणी

इयर ड्राप (Ear drops) के प्रयोग के चरण

कान, आँख व नाक में ड्राप डालना (Ear Eye, and Nosal drops)

1. सिर को एक ओर झुका लें या कान को ऊपर की ओर करके लेट जाएं।
2. धीरे से बाहरी कान को खींचे ताकि कर्णनलिका नजर आ सके।
3. डाक्टर द्वारा बताए गए अनुसार कान में निर्धारित मात्रा में ड्राप डालें।

चित्र 4.10: कान में ड्रॉप का प्रयोग

4. सिर को दूसरी ओर मोड़ने से पूर्व पांच मिनट का इंतजार करें।
5. बूंदों (ड्राप) को डालने के पश्चात कर्णनलिका को रूई से तभी बन्द करें यदि दवा विनिर्माता द्वारा ऐसे निर्देश दिए गए हों।
6. कान में डालने वाले तेल आदि को अधिक गर्म नहीं करना चाहिए।
7. यदि इसकी बोतल खुली है तो उसे 15 दिन के भीतर ही प्रयोग करें। इस अवधि के बाद इसका प्रयोग न करें।

आंखों की ड्राप (Eye drops) के प्रयोग के चरण –

1. अपने हाथों को साबुन व पानी से धो लें।
2. ड्रॉपर के सिरे (opening) को न छुएं।
3. ऊपर की ओर देखने को कहें।
4. निचली पलकों को नीचे की ओर खीचें ताकि एक 'मोरी' बन सके।
5. ड्रापर को यथा सम्भव मोरी के समीप लाएं किन्तु उसे आंखों में न छुएं।
6. मोरी में 'निर्धारित' मात्रा में बूंदें डालें।
7. आंखों को लगभग दो मिनट के लिए बन्द रखें। आंखों को अधिक जोर से बन्द न करें।

टिप्पणी

8. अतिरिक्त तरल टिश्यू पेपर के साथ निकल सकता है।
9. यदि एक से अधिक प्रकार के ड्रापों का प्रयोग किया जा रहा हो तो एक प्रकार व दूसरे प्रकार के ड्रापों के प्रयोग के बीच में पांच मिनट का अन्तर होना चाहिए।
10. आंखों की ड्राप जलन भी उत्पन्न कर सकती है, किन्तु यह जलन कुछ मिनटों से अधिक नहीं रहनी चाहिए। यदि ऐसा होता है तो डाक्टर से सम्पर्क करें।

★ **बच्चों की आंख में ड्रॉप डालते समय ध्यान में रखने वाली बातें–**

1. बच्चे को सीधे सिर की स्थिति में लेटाएं।
2. बच्चे की आंखें बन्द होनी चाहिए।
3. आंख के कोने में ड्राप की निर्धारित मात्रा डालें।
4. सिर को सीधा रखें
5. अतिरिक्त तरल को साफ कर लें।

★ **बच्चों को नासिका ड्राप (Nosal drops) देना –**

1. नाक से हवा निकालने को कहें।
2. बैठने को कहें तथा सिर को कसकर पीछे की ओर करें या लेटकर अपने कंधों के नीचे तकिया रख कर सिर को सीधा रखने को कहें।
3. नासिका छिद्र के भीतर एक सेंटीमीटर तक ड्रॉपर को डालें।

4.2.13 आन्तरिक रक्तस्राव (Internal Haemorrhage)

आन्तरिक रक्तस्राव को प्रच्छन्न रक्तस्राव (concealed heamorrhage) भी कहते हैं, क्योंकि रक्तस्राव को बाहर से नहीं देखा जा सकता है तथा स्राव आन्तरिक अंगों जैसे आंत, उदर, लीवर, स्प्लिन, किडनी आदि में होता है। कई बार रक्तस्राव को मल–मूत्र, वमन तथा गर्भाशय स्राव के रूप में देखा जा सकता है। जब कभी आन्तरिक रक्तस्राव की आशंका उत्पन्न हो तो निम्नलिखित संकेतों व लक्षणों को देखना चाहिए–

1. यदि रक्त बाहर निकलता है तो उसमें पीलापन या पीला रंग होता है।
2. शीत पसीनेदार त्वचा
3. अत्यधिक प्यास लगना
4. चक्कर आना व बेहोशी का अहसास होना
5. बेचैनी
6. तीव्र एवं मंद नब्ज

7. श्वसन के साथ जंभाई आना
8. बेहोशी की अवस्था
9. काला मल (Malena)

कारण – उदर में चोट, पैप्टिक अल्सर, किडनी–स्टोन आदि।

प्राथमिक उपचार में स्वास्थ्य कार्यकर्ता की भूमिकाः–

मरीज को नीचे लिटा दें। पैरों की छोर को ऊपर की ओर उठाएं ताकि महत्वपूर्ण अंगों जैसे हृदय फेफड़ों व लीवर आदि को अधिक रक्त उपलब्ध हो सके। यदि,उसे जी. आई. ट्रैक्ट का रक्त स्राव नहीं हो रहा तो सांत्वना दें तथा चाय या गर्म दूध पीने को दें।

4.3 बैंडेज (Bandages)

बैंडेज दो प्रकार के हो सकते हैंः–

1. रोलर बैंडेज
2. त्रिकोणीय बैंडेज

चित्र 4.11: पैरों के लिए प्रयोग किया जाने वाला रोलर बैंडेज

(1) **रोलर बैंडेज** मोटी बुनाई वाले कपड़े से बना होता है जो विभिन्न व्यासों यथा ½",1", 2" में उपलब्ध होता है तथा सामान्यतः इसका प्रयोग स्वास्थ्य कार्यकर्ता द्वारा चोटों पर लगाने के लिए किया जाता है।

(2) **त्रिकोणीय बैंडेज (Triangular bandage)** एक मीटर वर्गाकार कपड़े से बनता है। इसे दो टुकड़ों में काट लें तथा इसे घेर लें। इसे बांधते समय इसके छोरों पर रीफ गांठ बांधें (रीफ गांठ दर्शाएं) जो फिसलती नहीं है। एक ग्रैनी गांठ फिसल जाती है। त्रिकोणीय बैंडेज को शीर्ष बैंडेज के रूप में प्रयोग किया जा सकता है या उसे गोफन (sling) के रूप में प्रयोग किया जा सकता है।

चित्र 4.12: हाथ लटकाने के लिए प्रयोग किया जाने वाला त्रिकोणीय बैंडेज

टिप्पणी

पाठगत प्रश्न 4.3

निम्नलिखित के सामने सही (✓) या गलत (✗) लिखिए–

1. नाक से बहते खून को रोकने के लिए नाक के कोमल भाग को करीब 5 मिनट तक दबा कर रखें। ( )
2. इयर ड्राप की शीशी खुलने के बाद दो महीने तक प्रयोग की जा सकती है। ( )
3. दवा डालने के पश्चात आंखों को लगभग 2 मिनट तक बंद रखना चाहिए। ( )
4. उदर में चोट व पैप्टिक अल्सर के कारण आन्तरिक रक्तस्राव हो सकता है। ( )
5. रोलर बैंडेज का प्रयोग गोफन (Sling) के रूप में किया जाता है। ( )

प्राथमिक उपचार बॉक्स (First Aid Box)

प्राथमिक उपचार बॉक्स के लिए आवश्यक वस्तुएं निम्नानुसार हैं –

• छोटा प्लास्टिक पात्र (बाउल)	कटे व चोट लगे भागों को साफ करने के लिए
• रूई	ड्रेसिंग के रूप में पट्टी के साथ प्रयोग के लिए
• विसंक्रमित ड्रेसिंग	चोटों के ऊपर लगाने के लिए
• रोलर बैंडेज	ड्रेसिंग को स्थिर बनाने के लिए
• मैग्निफाईंग ग्लास	स्प्लिंटरों का पता लगाने के लिए
• चिमटियां	स्प्लिंटरों को बाहर निकालने के लिए
• ग्लूकोज़	प्रघात लगने की स्थिति में देने के लिए
• चिपकने वाली ड्रेसिंग	हल्के कटों व खरोचों के लिए
• कैंची	बैंडेज को काटने के लिए
• सेफ्टी पिन	बैंडेज पर लगाने के लिए
• पेपर टिशु	चोट पर लगी धूल को हटाने के लिए
• पट्टी	चोट पर रूई के साथ लगाने के लिए
• बर्नोल	जले भाग पर लगाने के लिए
• फेरी पोटेशियम परमैंगनेट (लाल दवा)	चोट पर लगाने के लिए
• डेटॉल	चोटों के साफ करने के लिए
• स्प्लिन्ट्स (Splints)	टूटी हड्डी को सहारा देने के लिए
• टोरनिकेट (Tourniquet)	रक्तस्राव रोकने के लिए
• साबुन	सफाई के लिए
• ब्लेड	काटने/चीरा लगाने के लिए

आपने क्या सीखा

इस पाठ में आपने मानव जीवन को बचाने के लिए समय पर प्रथम उपचार दिए जाने के महत्व के संबंध में अध्ययन किया है। आपने यह भी समझा कि संकेतों व लक्षणों का पता लगाकर कब और कहाँ प्रथम उपचार उपलब्ध कराना चाहिए। प्रथम उपचार स्थितियों को और अधिक खराब होने से बचाता है।

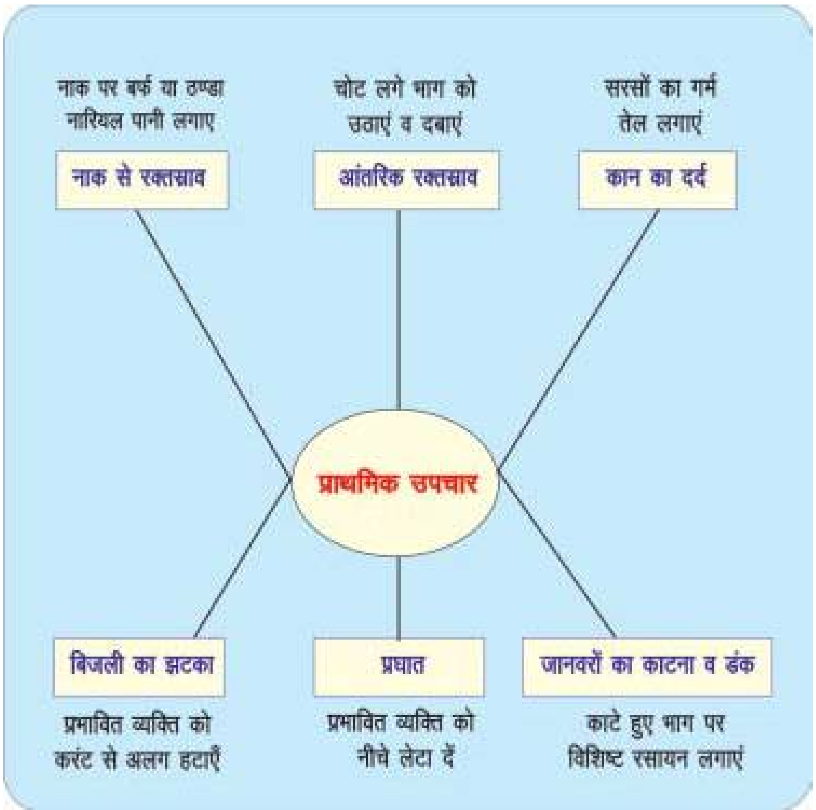

पाठान्त प्रश्न

1. हाइपोथर्मिया क्या है? इसके संकेत लक्षणों तथा उपचार का वर्णन कीजिए।
2. आंखों के ड्रॉप के प्रयोग के चरणों का उल्लेख कीजिए।
3. स्वास्थ्य कार्यकर्ता को प्राथमिक चिकित्सा बाक्स में क्या–क्या सामग्री रखनी चाहिए व क्यों?
4. आन्तरिक रक्तस्राव क्या है?
5. बैंडेज के दो प्रकारों की तुलना कीजिए।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

4.1
1. (iii)
2. (iv)
3. (ii)
4. (i)

4.2
1. धारदार/नुकीली
2. हीमलिच मैन्यूवर
3. संकुचन
4. एन्टी रेबीज़
5. पैरासिटामोल

4.3
1) सही
2) गलत
3) सही
4) सही
5) गलत

टिप्पणी

5

जीवन–शैली संबंधित रोग

जीवन शैली का अर्थ है हमारे रहन–सहन का तरीका। यह शैली कई चीजों पर निर्भर है जैसे, हमारा सांस्कृतिक परिवेश, शराब, धूम्रपान आदि की आदतें, काम करना या बैठे रहना, खान–पान का ढ़ंग, माँ–बाप, पास–पड़ोस के साथ हमारा व्यवहार, स्कूल की शिक्षा, टीवी, अखबार, इन्टरनेट मीडिया, हमारी आर्थिक स्थिति, शिक्षा और हमारी आदतें ये सब मिलकर हमारी जीवन–शैली का निर्माण करते हैं।

यदि हमें स्वस्थ रहना है तो अपने और अपने आस–पास एक स्वस्थ जीवन शैली का निर्माण करना पड़ेगा। विभिन्न शोधों और अध्ययनों से पता चलता है कि हमारे स्वास्थ्य और हमारी जीवन–शैली के बीच बड़ा घनिष्ठ संबंध है। आपको शायद पता न हो दमा, मधुमेह, बढ़ता हृदयाघात, मुँह, आँत और लीवर का कैंसर, मोटापा, फेफड़ों की बीमारी, गठिया, ऑस्टियोआथ्राइटिस, ये सब बीमारियाँ हमारी जीवन–शैली में हुए परिवर्तन के परिणाम है। आजकल कम उम्र में ही बड़ी संख्या में लोग हृदयरोग और कैंसर के शिकार होकर मृत्यु के मुँह तक पहुँच रहे हैं।

हमें ये सोचना जरूरी है कि कैसे जीवन शैली संबंधी रोगों को होने से रोका या टाला जा सकता है। कौन–कौन से रोग ऐसे हैं, जिन पर हमारी जीवन शैली का प्रभाव पड़ रहा है। रोग विशेष से बचने के लिए हमें अपनी जीवन शैली में क्या परिवर्तन करने चाहिए? इन प्रश्नों का उत्तर हम इस अध्याय में ढूँढ़ने की कोशिश करेंगे।

टिप्पणी

उद्देश्य

इस पाठ के अध्ययन के पश्चात् आपः –

- अनियमित जीवन–शैली से उत्पन्न होने वाले रोगों को पहचान कर सूचीबद्ध कर सकेंगे,
- जीवन–शैली से उत्पन्न होने वाले विभिन्न रोगों के लक्षणों की पहचान कर सकेंगे,
- इन रोगों को प्रभावित करने वाले विभिन्न कारकों को सूचीबद्ध कर सकेंगे,
- रोगों के रोकथाम और उपचार के लिए जीवन–शैली में उचित परिवर्तन कर सकेंगे,
- रोगों की रोकथाम के लिए सही सुझाव दे पायेंगे।

आइए, ऐसे कुछ आम (Common) व्याधियों की चर्चा करें–

5.1 कॉरोनरी हृदय रोग (Coronory Heart Disease)

यों तो दर्जनों रोग हैं जो हमारी जीवन–शैली की अस्त–व्यस्तता या कहें कि बदलते परिवेश के साथ या बदलती जीवन–शैली के साथ शरीर का संतुलन न बैठा पाने के कारण हैं। पर इसमें सबसे घातक है हमारी हृदय–धमनियों का उत्तरोतर संकीर्ण होते जाना। हमारी धमनियों में वसा और कॉलेस्टेरॉल की एक परत उनकी दीवारों पर उत्तरोत्तर जमा होने लगती है और धमनियों का लचीलापन खत्म होकर सख्त होने लगता है। साथ ही वह संकीर्ण भी होती जाती है, इसे हम एथेरास्क्लेरोसिस या रक्तवाहिनीदृढ़ण कहते हैं। उच्च रक्तचाप तथा मधुमेह के रोगियों में यह अधिक तेजी से होता है तथा उम्र बढ़ने के साथ लगातार बढ़ता जाता है।

(1) इसे हम ऐसे समझें कि हमारी हृदय–धमनी (कॉरोनरी आर्टरी) में व्यवधान उत्पन्न हो जाता है, जिससे हृदय क्रिया सामान्य नहीं रहकर विकृत हो जाती है जो अन्ततः हृदयाघात के रूप में प्रकट होता है। यह हमारी असंतुलित जीवन–शैली और मनोवैज्ञानिक तनाव के साथ गहराई से जुड़ा है।

(2) हृदय रोगों खासकर हृदय रक्तवाहिनी जन्य रोगों (Cardio Vascular Diseases) में हृदय का संकुचन अपनी नियमितता खो देता है, जिससे हृदय में एरिद्मिया उत्पन्न होता है और हृदयगति सामान्य नहीं रह जाती है। हमारे शोध–संस्थानों के अनवरत शोध से पता चलता है कि हृदय रोगों के होने का कारण तथा इसके होने में सहायक कारक कौन–कौन से हैं। इसकी चर्चा हम आगे करेंगे। पर हमें यह जानना चाहिए कि ये कारक दो तरह के हैं–कुछ तो ऐसे हैं जो हमारी जीवन–शैली में परिवर्तन के साथ बदल सकते हैं, पर कुछ ऐसे हैं, जिनमें हम कोई परिवर्तन नहीं ला सकते।

परिवर्तनीय कारक

धुम्रपान, शराब, उच्च रक्तचाप, कॉलेस्टेरॉल का स्तर, मधुमेह, मोटापा, शारीरिक श्रम में कमी, बढ़ता मानसिक तनाव। ये सब कुछ ऐसे कारक हैं, जिन्हें हम अपनी इच्छा–शक्ति और जीवन–शैली में परिवर्तन लाकर बदल सकतें है।

अपरिवर्तनीय कारक

जैसे बढ़ती उम्र, लिंग, पारिवारिक संकट, आनुवांशिक प्रभाव को हम चाहकर भी बदल नहीं सकते। आइए! अब हम इन कारकों के बारे में अलग–अलग विस्तार से जानें–

(1) **धूम्रपान** – कम उम्र में कॉरोनरी हृदय रोग उत्पन्न करने में इसकी दूसरी प्रमुख भूमिका है। धूम्रपान से धमनिगत स्कलेरोसिस (कड़ा हो जाना) की प्रक्रिया अधिक तीव्र हो जाती है। 65 वर्ष से कम उम्र में होने वाले हृदयाघात के 25% केस में यह मुख्य रूप से उत्तरदायी है।

(2) **उच्च रक्तचाप** – उच्च रक्तचाप के कारण हृदय से निकलने वाली रक्तवाहिनी नलिकाओं में कई तरह की जटिलतायें उत्पन्न होती हैं।

(3) **रक्त में कॉलेस्टेरॉल की उच्च मात्रा** – रक्त में कॉलेस्टेरॉल का बढ़ना हृदयाघात के खतरे को बढ़ा देता है, खासकर LDL & VLDL (कम घनत्व वाले लिपोप्रोटीन)। यद्यपि उच्च घनत्व वाले लिपोप्रोटीन (HDL) हृदयघात की संभावना को कम करता है। कॉलेस्टेरॉल और एचडीएल के अनुपात को 3.5 से कम रखने पर कॉरोनरी हृदय रोग का खतरा कम हो जाता है।

(4) **डायबिटीज (मधुमेह)** – मधुमेह वाले मरीजों मे हृदयाघात का खतरा सामान्य से 3 गुणा अधिक रहता है। विकसित देशों के आंकड़े बताते हैं कि 40 वर्ष से अधिक उम्र के मधुमेह के रोगियों में 30% से 40% रोगी हृदयाघात के कारण ही मरते हैं।

(5) **मोटापा** – विभिन्न अध्ययनों से पता चला है कि मोटी महिलाओं (पुरूष भी) में कॉरोनरी हृदय रोग का खतरा 3 से 4 गुणा अधिक रहता है। शरीर के स्टैण्डर्ड भार से अधिक प्रति एक किलोग्राम वजन हृदयाघात के खतरे को 4 प्रतिशत बढ़ा देता है।

(6) **शारीरिक श्रम की कमी** – विज्ञानजन्य सुविधाओं के बढ़ते प्रयोग से हमारी जीवन शैली सुविधापरस्त हो गई है। हम शरीर से श्रम बहुत कम करते हैं इससे मोटापा, रक्तचाप और फिर हृदयाघात की संभावना बढ़ जाती है। शरीर से श्रम या व्यायाम करने से शरीर में LDL की कमी और HDL की वृद्धि होती है, ऐसे में हृदयाघात की संभावना भी कम हो जाती है।

(7) **तनाव** – ऐसा देखा गया है कि बेचैन रहने वाले, धैर्यहीन लोग जो हमेशा उतेजना में रहते हैं और तत्काल परिणाम की अपेक्षा रखते हैं, उनमें कॉरोनरी हृदय रोग अधिक होता है। इसके अलावा अत्यधिक परिश्रम और नींद की कमी भी इसके सहायक हैं। इनकी तुलना में शान्त और सहज जीवन जीने वाले लोग कम प्रभावित होते देखे गये हैं।

कॉरोनरी हृदय रोग (CHD) का निवारण

(1) आहार में परिवर्तन

(a) अपने भोजन में वसा का प्रयोग कम करें खासकर संतृप्त वसा (Saturated fat) वाले पदार्थ न लें। संतृप्त वसा में कॉलेस्टेरॉल की मात्रा अधिक रहती है।

(b) आहार में रेशेदार चीजों की मात्रा बढ़ायें जैसे फल, सब्जियाँ, संपूर्ण अनाज तथा फलियाँ।

(c) शराब का सेवन न करें।

(d) प्रतिदिन 5 ग्राम से अधिक नमक अपने भोजन में न लें।

(e) अगर मधुमेह के रोगी हैं तो आहार को संयम, औषधि तथा श्रम के सहारे नियंत्रित रखें।

(2) **धूम्रपान–** हमें खुद भी धूम्रपान नहीं करना चाहिए तथा दूसरों को भी धूम्रपान के लिए हतोत्साहित करना चाहिए। हमें यह मालूम होना चाहिए कि पैसिव–स्मोकिंग का खतरा भी खुद धूम्रपान करने के ही बराबर है।

(3) **उच्च रक्तचाप –** हमारे अध्ययन यह बताते हैं कि उच्च रक्तचाप, हृदय–रोगों में कई तरह की जटिलतायें पैदा करता है। यदि औसत रक्तचाप में थोड़ी भी कमी की जा सके तो हृदय–रोगों की बहुत सी जटिलताओं से बचा जा सकता है। इसके लिए हमें –

- नमक का प्रयोग कम करना चाहिए।
- शराब के सेवन से बचना चाहिए।
- शरीर का वजन कम करना चाहिए।
- चिकित्सक की सलाह के अनुसार नियमित दवा भी लेनी चाहिए।

(4) **शरीर–श्रम** – प्रतिदिन का नियमित व्यायाम हमारी दिनचर्या में शामिल होना चाहिए। यह हमारे मोटापा, रक्तचाप, कॉलेस्टेरॉल का स्तर, मधुमेह, सबको नियंत्रित करने में सहायक है।

पाठगत प्रश्न 5.1

निम्नलिखित वाक्य सही हैं या गलत है, लिखिए–

1) जीवन–शैली संबंधी रोग लोगों का अपने पर्यावरण के साथ अनुपयुक्त संबंधों का परिणाम है। ( )

2) जीवन–शैली संबंधी रोग संक्रामक होते हैं। ( )

3) कॉरोनेरी हृदय रोग के प्रमुख जोखिम कारक हैं – उच्च रक्तचाप, धूम्रपान, मोटापा, मधुमेह। ( )

4) शारीरिक व्यायाम की कमी कॉरोनरी हृदय रोग से संबंधित है। ( )

5) उच्च घनत्व लिपोप्रोटीन (HDL) के बढ़े स्तर के कारण कॉरोनरी हृदय रोग की संभावना बढ़ जाती है।। ( )

5.2 उच्च रक्तचाप (Hypertension)

उच्च रक्तचाप का अर्थ है–हमारी धमनियों में तीव्र रक्त दाब। हमारे हृदय से रक्तवाहिनी नलियाँ निकलती हैं जो रक्त को एक खास दवाब पर हमारे ऊतकों तक पहुँचाती हैं। सामान्यतः यह 120/80 mmHg रहता है, जो सामान्य माना जाता है। इससे अधिक 140/90 तक यह उच्च रक्तचापोन्मुख अवस्था कहलाता है। 150/90 से ऊपर के रक्तचाप को हम उच्च रक्तचाप मानते हैं। इसमें ऊपरी भाग सिस्टोलिक रक्तचाप है तो नीचे का डायस्टोलिक रक्तचाप। सिस्टोलिक रक्तचाप हृदय के संकुचन के समय धमनियों में मौजूद रक्तचाप है तथा डायस्टॉलिक रक्तचाप हृदय के शिथिलन के समय का रक्तचाप है।

वर्गीकरण

(1) **अनिवार्य उच्च रक्तचाप (Essential Hypertension)**

जब हमें उच्च रक्तचाप का स्पष्ट कारण पता नहीं होता तो उसे हम प्राइमरी या एसेन्शियल उच्च रक्तचाप कहते हैं। उच्च रक्तचाप के 80 से 90 प्रतिशत मामले इसी श्रेणी में आते हैं।

(2) **द्वितीयक उच्च रक्तचाप (Secondary Hypertension)**

जब किसी अन्य रोग प्रक्रिया या स्पष्ट कारणों से रक्तचाप अधिक हो तो उसे सेकेन्डरी उच्च रक्तचाप कहते हैं।

व्यापकता

औद्योगिक देशों में 25 प्रतिशत वयस्कों में रक्तचाप अधिक पाया जाता है। शहरों में लगभग प्रति 100 पुरुषों में से 60 में तथा 100 महिलाओं में से 70 को उच्च रक्तचाप है। वहीं गाँवों में दोनों में इसकी औसत संख्या 36 प्रतिशत है।

उच्च रक्तचाप से उत्पन्न होने वाली जटिलताएं

उच्च रक्तचाप के कारण कई जटिलताएं उत्पन्न हो सकती हैं :

(a) स्ट्रोक–मस्तिष्काघात

(b) कॉरोनरी हृदय रोग

(c) हृदय शैथिल्य (Heart Failure)

(d) गुर्दा शैथिल्य (Kidney Failure)

(e) आँखों में क्षति (Retinal Haemorrhage) – दृष्टि पटल संकुचन आदि।

रक्तचाप जितना अधिक होता है। जटिलताएं भी उतनी ही अधिक होती है। बहुधा व्यक्ति मृत्यु का शिकार हो जाता है।

रक्तचाप को मापना

रक्तचाप को स्फिग्मोमैनोमीटर नामक यंत्र के सहारे मापा जाता है। यह पारे के दबाव को मिलीमीटर ऑफ मरकरी इकाई में मापता है।

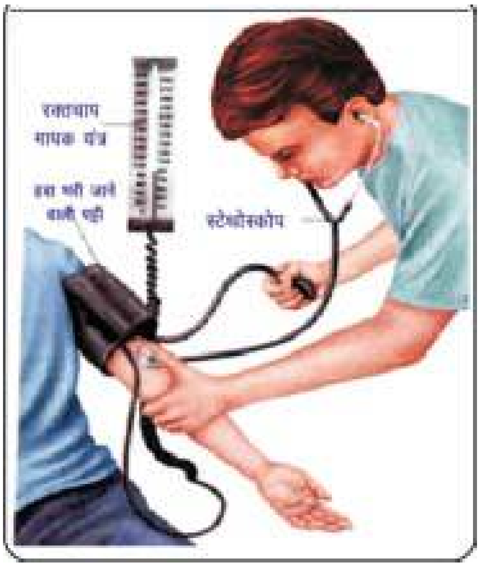

चित्र 5.1: स्फिग्नोमीटर की सहायता से रक्तदाब मापना

उच्च रक्तचाप के सहायक कारक

(क) ऐसे कारक जिन्हें बदला जा सकता है –

मोटापा, नमक का अधिक सेवन, संतृप्त वसा का सेवन, शराब की अधिकता, शारीरिक क्रिया का अभाव, पर्यावरणीय, पारिवारिक या कार्य क्षेत्रीय तनाव, अन्य कारक।

(ख) ऐसे कारक जिन्हें बदला नहीं जा सकता है –

उम्र, लिंग, आनुवांशिक कारक।

आइए! परिवर्तनीय कारकों पर थोड़ी चर्चा करें –

(क) मोटापा – हमारे अध्ययन दर्शाते हैं कि मोटापा उच्च रक्तचाप का एक प्रमुख कारक है। हमारे शरीर का बढ़ता भार उच्च रक्तचाप की संभावनाओं को उतना ही बढ़ा देता है।

(ख) नमक का सेवन – नमक के अधिक सेवन से आनुपातिक रूप में उच्च रक्तचाप भी बढ़ जाता है। सोडियम की कम मात्रा रक्तचाप को कम करता है। अन्य खनिज पदार्थ भी रक्तचाप पर अपना प्रभाव डालते हैं।

(ग) संतृप्त वसा – संतृप्त वसा में कॉलेस्टेरॉल (LDL और VLDL) की मात्रा अधिक रहती है जो कॉरोनरी हृदय रोग का तो जोखिम कारक है ही, उच्च रक्तचाप को भी कालान्तर में बढ़ाता है।

(घ) शराब – शराब के अधिक सेवन से हमारे सिस्टोलिक रक्तचाप में वृद्धि होते देखा गया है।

(क) शारीरिक श्रम – जो लोग कम शारीरिक श्रम करते हैं तथा आरामदायक जीवन जीते हैं उनमें रक्तचाप बढ़ते हुए देखा गया है। इसके विपरीत नियमित परिश्रम करने वाले व नियमित व्यायाम करने वाले लोगों में रक्तचाप कम रहता देखा गया है।

(ख) तनाव – मानसिक तनाव, घरेलू और कार्यालयी दबाव तथा मानसिक रूप से उसे सहन न करने की तैयारी। बढ़ती अनावश्यक जरूरतें तथा उसे प्राप्त करने के लिए होड़, आर्थिक चक्रव्यूह, तथा कर्ज चुकाने के लिए अत्यधिक मानसिक श्रम। ये सब तनाव पैदा करते हैं जो रक्तचाप बढ़ाने का बहुत बड़ा कारक है।

(ग) अन्य कारक – गर्भनिरोधक गोलियों का बढ़ता प्रचलन तथा अन्य कई औषधियों का अनावश्यक सेवन भी हमारे बढ़ते रक्तचाप के कारक हैं।

अपरिवर्तनीय कारकों पर भी थोड़ी चर्चा आवश्यक है–

(क) आयु – बढ़ती उम्र के साथ रक्तचाप में वृद्धि महिलाओं और पुरुषों में लगभग समान रूप से होती देखी गयी है।

(ख) आनुवांशिक कारण – ऐसा देखा गया है कि बहुत से आनुवांशिक कारक भी हमारे रक्तचाप पर प्रभाव डालते हैं। वंशानुगत रूप से माता–पिता के साथ ये कारक उनकी संतान में हस्तांतरित हो जाते हैं। उन्हें रोकने का हमारे पास अभी तक कोई उपाय नहीं है।

उच्च रक्तचाप की रोकथाम

अपनी जीवन शैली में परिवर्तन लाकर हम बहुत हद तक उच्च रक्तचाप को नियंत्रित कर सकते हैं। आइए! उस पर थोड़ी चर्चा करें कि यह हम पर क्या प्रभाव डाल सकता है।

(क) नियमित व्यायाम – प्रतिदिन 45 मिनट से 1 घंटे का व्यायाम जैसे – जॉगिंग (Jogging), तैरना, दौड़ना, साइकिल चलाना। ये सब रक्तचाप को 5 से 15 प्रतिशत तक कम कर सकते हैं।

चित्र 5.2 : रस्सी कूदते हुए जॉगिंग करते हुए व्यायाम करता हुआ व्यक्ति

(ख) वजन को कम करना – मोटापा कम करने से रक्तचाप तथा कॉरोनरी हृदय रोग पर भी अच्छा असर पड़ता है।

(ग) योग – योग और ध्यान के द्वारा तनाव को कम करके हम रक्तचाप को बढ़ने से रोक सकते हैं, यहाँ तक कि बहुत हद तक कम भी कर सकते हैं।

(घ) आहार परिवर्तन – अपने आहार में परिवर्तन लाकर हम बहुत हद तक रक्तचाप से बच सकते हैं और कुछ हद तक नियंत्रित भी कर सकते हैं–

I. कम नमक युक्त भोजन करना।

II. संतृप्त वसा का कम से कम सेवन करना।

टिप्पणी

III. शराब के अधिक सेवन से बचना।

IV. कम कैलोरी युक्त आहार लेना ताकि वजन कम हो सके।

(ङ) धूम्रपान पर रोक लगाकर भी इस पर अंकुश लगा सकते हैं।

(च) लोगों को स्वास्थ्य शिक्षा देकर हम उनके रहन–सहन, खान–पान में सुधार ला सकते हैं और इस तरह रक्तचाप को नियंत्रित कर सकते हैं।

पाठगत प्रश्न 5.2

रिक्त स्थान भरिए –

1. उच्च रक्तचाप से तात्पर्य .... में तीव्र रक्त दाब है।
2. उच्च रक्तचाप के जोखिम कारक हैं ...., ..., ...तथा.........................
3. .... तथा .... दो प्रकार के आहारीय परिवर्तनों से उच्च रक्तचाप से बचा जा सकता है।
4. रक्तचाप को .... नामक यंत्र से मापा जाता है।

5.3 पक्षाघात (स्ट्रोक)

पक्षाघात एक विश्वव्यापी समस्या है। बहुत लोग इसके कारण या तो मर जाते हैं या शारीरिक निःशक्तता के शिकार हो जाते हैं। पक्षाघात मस्तिष्कीय रक्तचाप में तीव्र और त्वरित व्यतिक्रम उत्पन्न होने के कारण होता है जिससे मानसिक और शारीरिक दोनों स्तर पर अपंगता की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार पक्षाघात मस्तिष्कीय क्रियाओं में अचानक 24 घंटे या उससे अधिक की अवधि के लिए आया व्यवधान और उससे उत्पन्न लक्षण है। इसके कारण मरीज की मृत्यु भी हो सकती है। इसमें सिर्फ रक्त–प्रवाह में उत्पन्न व्यवधान के अतिरिक्त और कोई दूसरा कारण नहीं मिलता। इसके दो प्रमुख प्रत्यक्ष कारण हैं –

(क) प्रमस्तिष्कीय रक्तस्राव (Cerebral Haemorrhage)

(ख) प्रमस्तिष्कीय रक्तघनास्रण (Cerebral Thrombosis)

संभावित सहायक कारक

(1) उच्च रक्तचाप – उच्च रक्तचाप के मरीजों में ज्यादातर मस्तिष्कीय रक्तस्राव ही कारण बनता है। पर, इसके चलते थ्राम्बोसिस भी होते देखा गया है।

(2) धूम्रपान, शराब, मोटापा, मधुमेह आदि भी इसके सहायक कारक हैं।

(3) गर्भनिरोधक गोलियों के लंबे अंतराल तक प्रयोग से भी पक्षाघात की संभावना बढ़ जाती है।

(4) इसके अलावा बढ़ती उम्र के साथ, पक्षाघात भी अधिक होता हुआ देखा गया है। स्त्रियों की तुलना में पुरुषों में पक्षाघात अधिक होता देखा गया है।

आज के वातावरण और जीवन–शैली में पक्षाघात की संख्या भी अधिक हो गयी है, इसे रोकथाम के उपायों से कम किया जा सकता है।

रोकथाम के उपाय

इसके लिए हमें अपनी जीवन–शैली में सकारात्मक परिवर्तन करना होगा–

(1) उच्च रक्तचाप – उच्च रक्तचाप को औषधियों और ऊपर बताये तरीकों से नियंत्रित करना होगा।

(2) मधुमेह– मधुमेह के रोगियों को भी औषधि तथा जीवन–शैली में परिवर्तन लाकर इसे नियंत्रित रखना होगा क्योंकि मधुमेह के रोगियों में पक्षाघात की संभावना बढ़ जाती है।

(3) धुम्रपान और शराब पर नियंत्रण – ऐसा देखा गया है कि धुम्रपान और शराब का नियमित सेवन करने वाले लोग, पक्षाघात के दोनों प्रकार की चपेट में अक्सर आ जाते हैं। इन्हें नियंत्रित कर हम पक्षाघात की संख्या को भी कम कर सकते हैं।

5.4 मधुमेह (डायबिटीज)

मधुमेह पहले संपन्न वर्ग की बीमारी मानी जाती थी। पर, विकासशील देशों में इसकी बढ़ती संख्या ने पूरी सोच को बदल दिया है। अनुमान है कि विकासशील देशों में (दक्षिण एशिया) इसकी संख्या सन् 2025 तक 8 करोड़ तक पहुँच जायेगी। औद्योगिक विकास तथा विकसित होती सामाजिक आर्थिक व्यवस्था ने मधुमेह की संख्या की बढ़ोत्तरी में अपनी खास भूमिका अदा की है।

मधुमेह का मतलब है खून में ग्लूकोज की अधिक मात्रा। हमारे शरीर के अग्नाशय (पैंक्रियाज) के बीटा लैंगरहैन्स कोशिकाओं से इन्सुलिन नामक हार्मोन स्रावित होता है, जो हमारे शरीर में वसा तथा अमीनो एसिड के उपापचयी क्रियाओं में प्रमुख भूमिका अदा करता है। इन्सुलिन के उत्पादन तथा क्रियाशीलता में विकृति आ जाने से यह स्थिति उत्पन्न होती है।

अनियंत्रित मधुमेह के कारण हमारे शरीर के अनेक अंग बीमार हो जाते हैं–जैसे मस्तिष्कीय रक्तनलिकायें, हृदयगत रक्त नलिका, किडनी, नेत्र, मनोदैहिक विकृतियाँ, हाथ–पैर के रक्त वाहिनियों और स्नायु–तंत्र में विकृति आदि।

(1) डायबिटीज मेलाइटस **(Diabetes Mellitus)**

(a) इन्सुलीन–आश्रित मधुमेह – IDDM या टाइप–I

(b) इन्सुलीन–अनाश्रित मधुमेह – NIDDM या टाइप–II

(c) कुपोषण जनित मधुमेह

(2) खराब ग्लूकोज सहन शीलता **(Bad Glucose Tolerance)**

(3) गर्भावस्था मे होने वाला मधुमेह – हार्मोनजन्य

मधुमेह के कारण

(a) अग्नाशय (पैंक्रियाज) में बीमारी, पैक्रियेटाइटिस, पैंक्रियेटिक ट्यूमर

(b) इन्सुलीन के उत्पादन और स्राव में विकृति

(c) आनुवांशिक कारणों से

(d) ऑटो–इम्युनिटी

(e) विषाणु संक्रमण

मधुमेह को बढ़ावा देने वाले कारक

(1) आयु – उम्र बढ़ने के साथ मधुमेह होने की संभावना भी बढ़ती जाती है।

(2) लिंग – पुरुषों और स्त्रियों में यह समान रूप से होता देखा गया है।

(3) मधुमेह वाले माता–पिता के बच्चों मे इसके होने की संभावना कई गुना बढ़ जाती है।

(4) मोटापा – NIDDM के मरीजों में मोटापा एक प्रमुख कारण है। मोटापा इन्सुलीन के स्राव और क्रिया में अवरोध पैदा करता है।

(5) आराम–तलब जीवन शैली– जो लोग बैठकर सिर्फ मानसिक श्रम करते हैं, व्यायाम या अन्य शारीरिक श्रम नहीं करते हैं, उनमें रक्त–शर्करा का स्तर बढ़ जाता है–नतीजा मधुमेह।

(6) बाल्यावस्था में कुपोषण के शिकार बच्चों में कोशिकाएं विकृत हो जाती हैं, उनसे पर्याप्त इन्सुलीन का स्राव नहीं होता और वे बच्चे कालान्तर में मधुमेह के शिकार हो जाते हैं।

(7) अत्यधिक शराब पीने वाले, मम्प्स, रूबेला आदि वायरस के संक्रमण से या हमारे खाद्य उत्पादों में मौजूद रसायनों के प्रभाव से हमारी कोशिकाओं पर बुरा प्रभाव पड़ता है और ये सब मधुमेह उत्पन्न करने में सहायक होते हैं।

(8) अधिक भोजन करने वाले, तनावपूर्ण जीवन जीने वाले तथा हमेशा उत्तेजक क्रिया कलापों में संलग्न रहने वालों को भी टाइप–2 डायबिटीज का खतरा बढ़ जाता है।

लक्षण और पहचान

डायबिटीज (मधुमेह) के तीन मुख्य लक्षण हैं जो उससे उत्पन्न होने वाली जटिलताओं के कारण प्रकट होते हैं–

(1) बहुत भूख लगना (Polyphagia)

(2) बहुत पेशाब होना (Polyurea)

(3) बहुत प्यास लगना (Polydypsia)

अलग–अलग जटिलताओं के अलग–अलग लक्षण हैं जिनका वर्णन उसके साथ ही किया जाएगा।

ऐसी जाँच जो हमें इलाज में सुविधा प्रदान करती है–

(1) खाली पेट में रक्त–शर्करा 80 से 110 के बीच रहे, इससे अधिक हो जाना मधुमेह का लक्षण है।

(2) खाने के 2 घंटे बाद शर्करा का स्तर 150 से कम होना चाहिए।

(3) HbAlc (ग्लायकोसिलेटेड हिमोग्लोबीन) –यह 6.00 से कम होना चाहिए, इससे अधिक होना दीर्घकाल से शर्करा का स्तर बढ़ा रहने का प्रतीक है। यह बढ़ा रहे तो जोखिम कारक बढ़ा हो सकता है।

मधुमेह की रोकथाम

रोकथाम के लिए जरूरी है कि हम आहार और जीवन शैली में कुछ सकारात्मक परिवर्तन लाएं। आइए! हम एक–एक कर इस पर चर्चा करें।

(1) आहार परिवर्तन

(क) शर्करा तथा कार्बोहाइड्रेट युक्त भोजन में कमी करें।

(ख) संतृप्त वसा के सेवन में कमी लाएं– यह मधुमेहजनन में सहयोगी है।

(ग) हरी पत्तेदार सब्जियों का भरपूर सेवन करें। ये फाइबर, विटामिन और मिनरल युक्त होती हैं, इससे वसा और कार्बोहाइड्रेट की मात्रा कम करने में मदद मिलती है।

(घ) अन्य रेशेदार भोजन जैसे संपूर्ण अनाज (छिलके के साथ), संपूर्ण फली, छिलके वाली दाल आदि का भरपूर सेवन करें।

(ड.) जंक फूड, स्टोर्ड फूड, प्रोसेस्ड फूड, मांसाहारी भोजन आदि में कमी करने से हम डायबीटिज को ज्यादा आसानी से नियंत्रित कर सकते हैं।

(2) विहार परिवर्तन

(क) प्रतिदिन पौन से एक घंटे का शारीरिक श्रम या व्यायाम हमारे रक्त शर्करा स्तर को काफी हद तक नियंत्रित रखने में मदद देता है और शरीर को भी चुस्त–दुरूस्त रखता है।

(ख) योग और ध्यान के सहारे हम मानसिक तनाव को कम करके मधुमेह के साथ उच्च रक्तचाप तथा हृदय रोग पर भी अच्छा प्रभाव डाल़ सकते हैं। मिताहार तथा पर्याप्त शारीरिक श्रम हमें मधुमेह के नियंत्रण में बहुत सहयोग देते हैं।

पाठगत प्रश्न 5.3

1. निम्नलिखित के जोड़े बनाइए –

क. स्ट्रोक	1. रक्त ग्लूकोस स्तर में वृद्धि
ख. मधुमेह	2. वसा, ग्लूकोस तथा एमीनो एसिड मेटाबॉलिज्म को नियंत्रित करता है।
ग. इन्सुलीन	3. ग्लाइकोसिलीकृत हीमोग्लोबीन
घ. मोटापा	4. मधुमेह का महत्वपूर्ण जोखिम कारक
ड़ HbAlc	5. शारीरिक व मानसिक विकलांगता

5.5 मोटापा

आज के समय में मोटापा एक महामारी की तरह पूरे विश्व में फैल रहा है। विश्व स्वास्थ्य संगठन ने तो इसे विश्वव्यापी महामारी घोषित कर दिया है। मोटापे से ग्रस्त व्यक्ति के शरीर में असामान्य रूप से वसा एकत्र होने लगती है। आदर्श भार से 20% अधिक भार को सामान्य, 20-40% अधिक भार को मध्यम दर्जे का तथा उससे अधिक को गंभीर मोटापा माना जाता है।

BMI (बॉडी मास इन्डेक्स) को इसके लिए सूचकांक निर्धारित किया गया है।

$$\text{बी.एम.आई.} = \frac{\text{व्यक्ति विशेष का कुल भार (किलोग्राम में)}}{\text{उस व्यक्ति का कुल शरीर क्षेत्रफल (वर्ग मी. में)}}$$

25 से 29 तक सूचकांक को ओवरवेट, तो 30 से अधिक BMI मोटापे का सूचक होता है।

मोटापे के कारण

(1) **कैलोरी का अंतर्ग्रहण** – यदि हम शरीर की जरूरत से अधिक कैलोरी ग्रहण करते हैं तो वह कैलोरी वसा के रूप में हमारे वसा उतकों में एकत्र हो जाती है।

(2) **वसा का अंतर्ग्रहण** – यदि हमारे आहार में संतृप्त वसा की मात्रा अधिक है तो यह उपापचयी क्रियाओं की बजाय सीधे वसा उतकों में जमा होकर हमारे शरीर के भार और घेरे को बढ़ाता जाता है। इस वसा में विस्तारित होने का गुण है।

(3) **आरामतलब जीवन शैली** – जो लोग आरामतलब जीवन–शैली को अपनाते हैं, शारीरिक परिश्रम नहीं करते, उन्हें मोटापा अनायास आ घेरता है और उसके साथ उच्चरक्तचाप, हृदयाघात और मधुमेह भी।

(4) **तनावयुक्त जीवन** – जो लोग अधिक मानसिक तनाव झेलते हैं तथा उत्साहहीन या कम उत्साही जीवन जीते हैं, जीवन और परिवेश के प्रति नकारात्मक रूख रखते हैं, वे जल्दी मोटापे के शिकार हो जाते हैं।

मोटापे से होने वाली बीमारियाँ–

(1) **टाइप–2 मधुमेह** – यह प्रायः वयस्कों में शुरू होता है। मोटे लोगों में इस तरह का मधुमेह अक्सर होता हुआ देखा गया है। वैसे व्यक्ति जिनके पेट और कमर के आसपास अधिक वसा एकत्र हो जाता है, उनमें मधुमेह अधिक होता है। इस तरह के मोटापे को केन्द्रीय मोटापा (Central Obesity) कहते हैं। व्यक्ति का शरीर बेडौल और सेब की तरह हो जाता है।

(2) **उच्च रक्तचाप** – मोटापे के शिकार वयस्कों में उच्च रक्तचाप की संभावना अधिक रहती है। भार बढ़ने पर पुरुषों की तुलना में महिलाओं में रक्तचाप की वृद्धि अधिक होती हुई देखी गई है। जाँघों में वसा के एकत्रण की तुलना में केन्द्रीय मोटापे में रक्तचाप की वृद्धि अधिक होती हुई देखी गयी है।

(3) कॉलेस्टेरॉल का उच्चस्तर

(4) स्ट्रोक

(5) हृदयाघात (Heart Attack)

(6) हृदय–शैथिल्य (Heart Failure)

(7) कैंसर

(8) पित्त की थैली में पथरी

टिप्पणी

(9) गाउट–गाउटी आर्थ्राइटिस

(10) मासिक स्राव में गड़बड़ी, अतिस्राव या अन्य अनियमितता

(11) प्रजनन में कमी तथा गर्भावस्था में जटिलताएं

(12) मसूड़ों के रोग

ये सभी रोग मोटापे के कारण अधिक तेजी से फलते–फूलते हैं नतीजतन मोटे व्यक्ति इन सभी बीमारियों से जूझते रहते हैं।

निदान (Diagnosis)

मोटे व्यक्ति की पहचान तो उसे देखकर एक सामान्य आदमी भी कर सकता है, पर चिकित्सीय आंकड़ों की सुविधा के लिए BMI मापक का प्रयोग कर सकते हैं।

रोकथाम के उपाय

(1) कम कैलोरी युक्त भोजन ग्रहण करना।

(2) कम वसा युक्त भोजन लेना, खासकर संतृप्त वसा जैसे – घी, मक्खन।

(3) फाइबरयुक्त, पत्तेदार सब्जियाँ, फल, सलाद आदि की भोजन में प्रधानता।

(4) अपने वजन और ऊँचाई के अनुसार डायटीशियन की सहायता से भोजन की एक डायरी बना लेनी है कि कब खाना है? क्या खाना है? कैसे खाना है और कितना खाना है?

(5) एक बार में अधिक खाना नहीं खाना है, खासकर रात्रि में। थोड़ा–थोड़ा किन्तु बार–बार खाना है।

(6) शारीरिक श्रम में वृद्धि करनी है, चाहे व्यायाम के रूप में या अन्य रूप में, प्रतिदिन 45 मिनट से 1 घंटे का शारीरिक श्रम मोटापे को बढ़ने से तो रोकता ही है, हमारे मोटापे को कम भी करता है।

(7) तनाव तथा एकाकीपन भी मोटापे को बढ़ाता है। इससे बचने के लिए सामाजिक क्रियाकलापों तथा अन्य कामों में सक्रियता बढ़ानी चाहिए।

5.6 कैंसर

आज यद्यपि विज्ञान ने कैंसर के उपचार के बहुत से उपाय ढूँढ़ लिये हैं, तथापि आज भी इसका नाम सुनते ही लोग भयभीत हो जाते हैं। कैंसर भी अधिकांश रूप से हमारी जीवन–शैलीगत अनियमितताओं के कारण नये–नये रूपों में हमारे सामने प्रकट हो रहा है।

कैंसर का अर्थ है एक ऐसी बीमारी जिससे हमारी कोशिकाओं की अनियंत्रित और असामान्य रूप से वृद्धि होने लगती है। आंकड़े बताते हैं कि भारत में लगभग 20 से 25 लाख कैंसर के मरीज हैं, जिनमें से आधे की मृत्यु प्रतिवर्ष हो जाती है। अतः यह जरूरी है कि हम इसके बारे में ठीक से जानें और समझें। अभी तक लगभग 150 तरह के कैंसर देखे गये हैं।

भारत में कैंसर की स्थिति

पुरुषों और स्त्रियों में आमतौर पर पाये जाने वाले कैंसर की सूची नीचे दी जा रही है–

क्रम सं.	पुरुष	महिलाएं
1	मुँह	गर्भाशय
2	आमाशय	स्तन
3	फेफड़े	मुँह
4	पैन्क्रियाज	अंडाशय

अध्ययन बताते हैं कि भारत के अन्य शहरों के मुकाबले दिल्ली और मुंबई में पुरुषों में फेफड़े तथा स्त्रियों में स्तन के कैंसर अधिक होते हैं।

कैंसर के कारक

ऐसे तो अनेक कारक हैं जो कैंसर का कारण बनते हैं, उनकी सूची नीचे दी जा रही है –

(1) तंबाकू– धूम्रपान करने या तंबाकू चबाने से तंबाकू में मौजूद हानिकारक तत्व हमारे फेफड़ों, मुँह, गला, आहारनाल में कैंसर पैदा करते हैं।

(2) शराब का सेवन लीवर और आहार नली में कैंसर पैदा कर सकता है।

(3) वैसे आहार जिनमें रंग या कोई और मिलावट की गई हो, और सड़ने से बचाने के लिए रसायन मिले हों, हमारे भीतर कैंसर उत्पन्न कर सकते हैं। उच्च वसा युक्त आहार स्तन कैंसर के लिए जोखिम कारक बनते हैं।

(4) व्यवसाय – बहुत से ऐसे व्यवसाय हैं, जिनमें काम करने वाले मजदूर अक्सर कैंसर के शिकार हो जाते हे जैसे – बेंजीन, आर्सेनिक, कैडमियम, क्रोमियम, एस्बेस्टस फैक्टरी में काम करने वाले मजदूर।

(5) वायरस संक्रमण – शोध बताते हैं कि कई वायरस, कैंसर बनने में अपनी भूमिका निभाते हैं जैसे – EB वायरस, Hepatitis-B और C वायरस।

(6) लंबे समय तक परजीवी संक्रमण, ब्लैडर कैंसर की संभावना को बढ़ाता है।

(7) कई अन्य चीजें जैसे सूर्य की अल्ट्रावायलेट किरणें, रेडियशन, किरणों का लगातार एक्सपोजर, प्रदूषित जल और वायु, कीटनाशक दवाइयाँ–ये सब लंबे अन्तराल में कैंसर पैदा कर सकते हैं।

(8) कई रीति–रिवाज भी कैंसर उत्पन्न करते हैं, जैसे तम्बाकू और पान–चबाना, तीखा मसालेदार भोजन, पेट पर बोरसी (कांगड़ी) बांधकर चलना, ये सब कैंसर बनने में सहायक होते हैं। यह समझें कि हर वैसी चीज जो किसी ऊत्तक विशेष पर लगातार लंबे समय तक उद्दीपन (irritation) पैदा करती है, कैंसर बनने में सहायक है।

कैंसर की चेतावनी के लक्षण

(1) स्तन में कड़ापन महसूस होना

(2) कोई तिल अचानक बड़ा होने लगे

(3) पाचन या आंत्र–क्रियाओं में अचानक परिवर्तन हो जाए

(4) खखार (बलगम) के साथ अक्सर खून आने लगे

(5) मासिक के समय ज्यादा मात्रा में खून आने लगे

(6) बिना स्पष्ट कारण के शरीर का वजन कम होने लगे।

ये सब लक्षण छिपे हुए कैंसर के हो सकते हैं। चिकित्सक के सहारे इन्हें तत्परता से ढूँढ़कर यथाशीघ्र उपचार करने की जरूरत है।

उपचार

यथाशीघ्र रोग की पहचानकर मरीज को चिकित्सा केन्द्र पहुँचा देना ही इसका सर्वोतम उपचार है। इसका उपचार विशेषज्ञ चिकित्सक ही ठीक से कर सकते हैं।

रोकथाम के उपाय

(1) तम्बाकू और शराब का सेवन तुरन्त बंद करें।

(2) जंक फूड तथा संरक्षित (Preserved) फूड का प्रयोग तुरन्त बन्द करें।

(3) ताजा फल और पत्तेदार साग–सब्जियों का अधिक से अधिक सेवन करें।

(4) रेशेदार भोजन, संपूर्ण फलियों वाले अनाज, छिलके वाले दाल आदि का अधिक सेवन करें। ये सब भोजन हमारी दैनिक आहार–तालिका में शामिल हो।

(5) उच्च वसायुक्त आहार न लें।

(6) थोड़ा भी संदेह हो तो तुरन्त योग्य चिकित्सक से संपर्क करें। **शीघ्र निदान और शीघ्र उपचार** कैंसर–नियंत्रण में बहुत सहायक है।

पाठगत प्रश्न 5.4

1. मोटापा (Obesity) क्या है?

   ....

2. मोटापे से संबंधित दो स्वास्थ्य जोखिम बताइए।

   ....

3. 'कैंसर' शब्द से आप क्या समझते हैं ?

....

4. कैंसर के दो लक्षण बताइए।

....

जीवन–शैली संबंधी रोगों के संदर्भ में कुछ महत्वपूर्ण बातें–

(1) जीवन–शैली संबंधी रोगों के शीघ्र पहचान में सहयोगी लक्षण–

(क) मधुमेह –

(1) बहुत भूख लगना – Polyphagia

(2) बहुत पेशाब होना – Polyurea

(3) बहुत प्यास लगना – Polydypsia

(4) वज़न में कमी

(5) घाव या कटे–फटे भाग को ठीक होने में देर होना।

(ख) कोरोनरी हृदय रोग (Coronary Heart disease) –

(1) चलने–फिरने तथा सीढ़ी चढ़ने में सीने में दर्द।

(2) घबराहट और भय।

(3) दर्द के समय बहुत पसीना आना।

(ग) उच्च रक्तचाप –

(1) सरदर्द और चक्कर आना (सर भारी–भारी लगना)।

(2) हृदय गति तीव्र या अनियंत्रित होना (एरिद्मिया)।

(3) काम करते हुए श्वास फूलना।

(घ) पक्षाघात (स्ट्रोक) –

(1) तीव्र सरदर्द और चक्कर।

(2) उल्टी या उल्टी की इच्छा।

(3) शरीर के किसी एक तरफ, बाएं या दाएं कमजोर हो जाना।

टिप्पणी

(ङ) मुँह का कैंसर –

(1) मुँह के घाव का न सूखना।

(2) शरीर के वज़न में कमी।

(च) फेफड़े का कैंसर –

(1) खाँसी के साथ खंखार में रक्त आना।

(2) वज़न में लगातार कमी।

(छ) स्तन कैंसर –

(1) स्तन में गाँठ और उसके साथ दर्द।

(2) दूध के साथ रक्त आना।

(ज) गर्भाशय कैंसर –

(1) योनि से अनियमित रक्तस्राव जो इलाज के बावजूद धीरे–धीरे बढ़ता जा रहा हो।

(2) योनि से अन्य तरह का स्राव (बदबूदार)।

(झ) अमाशय का कैंसर –

(1) अमाशय के ऊपरी भाग में दर्द

(2) उल्टी (रक्तमिश्रित या बिना रक्त के भी)

(3) रक्त की लगातार कमी

(4) पाचन तंत्र में गड़बड़ी

ये सब कुछ आम जीवन–शैली के कारण होने वाली बीमारियों के लक्षण हैं। इनसे होने वाली जटिलताओं के कारण कई भिन्न–भिन्न अन्य लक्षण भी मिल सकते हैं। बेहतर हो इसका निदान कोई योग्य विशेषज्ञ चिकित्सक से कराएँ।

स्वस्थ जीवन–शैली के लिए कुछ आम सुझाव :–

(1) प्रतिदिन प्रातःकाल जल्दी उठें और रात में समय से सोयें।

(2) समय से नित्यकर्म निबटाकर प्रतिदिन कम से कम 30 से 45 मिनट तक व्यायाम करें।

(3) कम कार्बोहाइड्रेट तथा सुपाच्य भोजन करें।

(4) खाने में संपूर्ण अनाज, चोकरयुक्त आटे की रोटी, छिलके वाली दालों का प्रयोग बढ़ाएं, पॉलिश्ड अनाज का प्रयोग न करें।

(5) भोजन में हरी सब्जियों, साग और फल की प्रचुर मात्रा हो।

(6) जंक फूड तथा वसायुक्त पदार्थो का सेवन न करें या कम करें। जैसे–पिज्जा, बर्गर, फ्रेंच–फ्राई, डब्बा का प्रिजरवेटिव युक्त बन्द खाना।

(7) बाजार का कोई आहार नहीं खाएं, खासकर जो खुले में रखा है तथा जहाँ ढ़कने का पर्याप्त प्रबंध नहीं है।

(8) कोका–कोला आदि सॉफ्ट ड्रिंक का सेवन न करें या कम करें। उसकी जगह नींबू–पानी, नारियल–पानी, ताजा लस्सी, छाछ आदि का प्रयोग करें।

(9) तम्बाकू, गुटखा, पान, सुपारी आदि का प्रयोग बिल्कुल बन्द करें।

(10) धूम्रपान और शराब से दूर रहें।

(11) घर और कार्यालय का वातावरण शान्त और सौम्य बनाये रखें।

आपने क्या सीखा

इस पाठ में हमने खराब जीवन–शैली से होने वाली बीमारियों यथा कॉरोनरी हृदय रोग, कैंसर, उच्च रक्तचाप, मधुमेह, मोटापा आदि के लक्षण और रोकथाम के उपायों के बारे में सीखा। जीवन–शैली के सुधार के उपायों के बारे में भी चर्चा की गई। स्वस्थ जीवन–शैली कैसे हासिल हो, उसकी भी चर्चा की गई है। इससे आपको इन रोगों को पहचानने तथा रोकथाम और उपचार में सहूलियत होगी।

पाठान्त प्रश्न

1. जीवनशैली रोगों से आप क्या समझते हैं ? इनमें से किन्हीं दो का विस्तार से वर्णन कीजिए।
2. कॉरोनरी हृदय रोग (CHD) से संबंधित चार जोखिम कारकों का उल्लेख कीजिए।
3. उच्च रक्तचाप की रोकथाम में स्वास्थ्य कार्यकर्ता की भूमिका की चर्चा कीजिए।
4. मधुमेह के चार निवारक उपायों का उल्लेख कीजिए।
5. मोटापे से संबंधित चार स्वास्थ्य जोखिम बताइए।
6. कैंसर के संभावित लक्षणों का उल्लेख कीजिए।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

5.1

1.	सही	2.	गलत	3.	सही
4.	सही	5.	गलत		

टिप्पणी

1. धमनियों।
2. मोटापा, अत्यधिक नमक का सेवन, संतृप्त वसा तथा शराब।
3. – नमक के सेवन को कम करना
   – वसा का कम सेवन
4. स्फिग्मोमैनोमीटर

5.3

क)	5	घ)	4
ख)	1	ड.)	3
ग)	2		

5.4

1. शरीर में वसा की अतिरिक्त विद्यमानता को मोटापा कहते हैं।
2. मोटापे से संबंधित स्वास्थ्य जोखिम है :
   (1) टाइप 2 (वयस्कता में प्रारम्भ) मधुमेह (NIDDM)
   (2) उच्च रक्तचाप
3. कैंसर एक रोग है जिसमें कोशिकाओं का विकास अनियंत्रित तथ अनियमित रूप से होता है।
4. (i) अवर्णित भार में कमी
   (ii) तिल के आकार में परिवर्तन

गतिविधियां

1. जीवनशैली रोगों के संबंध में घरों में सर्वेक्षण करने के लिए एक प्रश्नावली तैयार करें। कम से कम 10 घरों का सर्वेक्षण करके सूचना एकत्र करें।

6

औषधि विज्ञान एवं औषधीय प्रतिक्रियाएँ

विभिन्न बीमारियों के उपचार के लिए अनेकों औषधियों का प्रयोग किया जाता है। ये औषधियाँ अनेक प्रकार की प्रतिक्रियाओं के द्वारा हमारी बीमारियों को दूर करती हैं। जीवाणु, वायरस, फंगस, पैरासाइट, कृमि आदि को नष्ट करने से लेकर रक्तचाप नियंत्रित करने, हृदयाघात को दूर करने, रक्त शर्करा को नियंत्रित करने आदि अनेक ऐसे कार्य और जरूरतें हैं, जिन्हें औषधियों के सहारे दूर करते हैं। आहार–विहार में परिवर्तन के साथ इन औषधियों के सहारे हम बड़ी से बड़ी बीमारियों को नियंत्रित कर सकते हैं।

औषधियों के साथ उनकी सही खुराक का जानना और देना बहुत महत्वपूर्ण है। सही खुराक में वही दवा यदि अमृतस्वरुपा है तो गलत खुराक जानलेवा भी हो सकता है।

कभी–कभी एक ही दवा एक व्यक्ति में फायदेमंद तो दूसरे में गंभीर प्रतिक्रिया (Reaction) या एलर्जी उत्पन्न कर सकती है। इसके अलावा कुछ दवाइयाँ कहीं हमारे शरीर के कष्ट को दूर करती है तो कहीं पर नई बीमारी भी उत्पन्न करती हैं।

इस अध्याय में हम औषधियों, उनके गुणधर्म, उनके पार्श्वप्रभाव, औषधीय प्रतिक्रिया, उनकी खुराक, उनके काम करने के ढ़ंग आदि के बारे में पढ़ेंगे।

टिप्पणी

उद्देश्य

इस पाठ का अध्ययन करने के पश्चात् आप –

(1) विभिन्न दवाइयों, उनकी मात्रा और सही खुराक के बारे में प्रकाश डाल सकेंगे;

(2) विभिन्न दवाइयों की अनुचित मात्रा शरीर के ऊपर क्या प्रभाव डालती है, समझा सकेंगे;

(3) दवा देने के पूर्व तथा देने के बाद अपेक्षित सावधानी रखकर उससे उत्पन्न होनेवाली अवाँछित प्रतिक्रियाओं के घातक प्रभाव से बच सकेंगे;

(5) अवाँछित प्रतिक्रिया का प्राथमिक उपचार करके मरीज को अस्पताल को रैफर कर सकेंगे।

6.1 फार्मेसी क्या है?

हम जो औषधियाँ प्रयोग में लाते हैं, उनके अनेक स्रोत हैं–जैसे कुछ दवाइयाँ खनिज पदार्थों से प्राप्त होती हैं, तो कुछ दवाईयाँ जन्तुओं से भी प्राप्त होती हैं जबकि कुछ पेड़–पौधे व वनस्पतियों से भी प्राप्त होती हैं। एलोपैथी यानी आधुनिक चिकित्सा–प्रणाली में दवाइयों का प्रयोग रासायनिक प्रतिक्रिया में प्रयुक्त होनेवाले सक्रिय घटकों (अवयवों) को पृथक करके उसके शुद्धतम रूप में किया जाता है। फार्मेकोलॉजी या– औषध विज्ञान में हम उन्हीं औषधियों के बारे में पढ़ते हैं। इसमें विभिन्न रोगों में प्रयुक्त होने वाली औषधियों, उन औषधियों का हमारे शरीर के विभिन्न हिस्सों में पड़ने वाले पार्श्व–प्रभाव इत्यादि का अध्ययन किया जाता है। विभिन्न उद्देश्य के लिए अलग–अलग औषधियाँ प्रयुक्त होती हैं– जैसे–बुखार कम करने की दवा, दर्द कम करने की दवा, पोषण में प्रयुक्त दवा, रक्तचाप कम करने की दवा आदि।

अब आप समझ गये होंगे कि फार्मोकोलॉजी (औषधि विज्ञान) वह विज्ञान है जिसमें विभिन्न रोगों में प्रयोग होने वाली दवाइयों तथा शरीर के विभिन्न भागों में उसकी प्रतिक्रिया का अध्ययन किया जाता है।

आइए! अब हम यह जानने का प्रयास करें कि औषधियों को कितने तरह से एवं किन रूपों में रोगियों को दिया जाता है –

(1)	टैबलेट	–	पैरासिटामोल आदि
(2)	कैप्सूल	–	एम्पिसीलिन, एमॉक्सिसिलीन आदि
(3)	सिरप	–	कफ सिरप, टॉनिक
(4)	इन्हेलेशन	–	दमा, सर्दी के लिए प्रयुक्त होने वाले
(5)	इन्जेक्शन	–	बहुत से एन्टीबायोटिक, विटामिन आदि
(6)	ऑयंटमेन्ट	–	सॉफ्रामाइसिन ऑयंटमेन्ट

(7)	ड्रॉप	–	आई ड्रॉप, नेजल ड्रॉप, इयर ड्रॉप
(8)	चिपकाने वाली पट्टी	–	ग्लिसरीन स्ट्रिप
(9)	सपोजिटरी	–	डल्कोलैक्स, ग्लिसरीन सपोजिटरी
(10)	पाउडर	–	फंगस आदि के नियंत्रण के लिए एन्टीफंगल पाउडर
(11)	सस्टेन्ड रिलीज इम्पलांट	–	इन्सुलीन या दर्दनिवारक या हारमोनल इम्पलांट

दवाइयों के डोज और समय के लिए प्रयुक्त संकेत

(1)	OD	–	रोज एक बार
(2)	BD (bid)	–	रोज दो बार
(3)	TD (tid)	–	रोज तीन बार
(4)	QD (qid)	–	रोज चार बार
(5)	hs	–	केवल रात में
(6)	SOS	–	जब जरूरत हो तब

महत्वपूर्ण बातें :

(a) दवाइयों की खुराक (मात्रा) रोगी के भार के अनुसार दी जाती है।

(b) बच्चों को दी जानी वाली मात्रा वयस्कों की मात्रा से बहुत कम होती है।

(c) बहुत सी दवाइयाँ वयस्कों को ही दी जाती हैं– बच्चों को इसे नहीं दिया जाता है।

(d) बच्चों की मात्रा निकालने का सूत्र $= \dfrac{\text{वयस्क की मात्रा} \times \text{बच्चे का भार (कि.ग्रा.)}}{70}$

पर यह फॉर्मूला हमेशा सही नहीं होता है। अतः हर दवा के लिए बच्चों की मात्रा निर्धारित करने का तरीका उस दवा के साथ या तो लिखा रहता है या फिर निर्धारित मात्रा के अनुसार ही दवा बनी बनायी आती है।

दवाइयों के लिए उचित मात्रा कई बातों पर निर्भर है जैसे –

- आयु
- व्यक्ति का भार
- रोग की गंभीरता आदि।

आयु के अनुसार भार एवं लंबाई की तालिका –

	आयु	भार		लम्बाई	
	(वर्ष)	(कि.ग्रा.)	(आई.वी.)	(से.मी.)	ईंच
शिशु	0.0–0.5	6	13	60	24
	05–10	9	20	71	28
बच्चे	1–3	13	29	90	35
	4–6	20	44	112	44
	7–10	28	62	132	52
पुरूष	11–14	45	99	157	62
	15–18	66	145	176	69
	19–22	70	154	177	70
	23–50	70	154	178	70
	51+	70	154	178	70
महिलाएं	11–14	46	101	157	62
	15–18	55	120	163	64
	19–22	55	120	163	64
	19–22	55	120	163	64
	23–50	55	120	163	64
	51+	55	120	163	64

हमारे स्वास्थ्य–कार्यकर्ता को निम्न दवाइयों के बारे में जरूर जानना चाहिए–जो हम अक्सर इलाज में प्रयोग करते हैं

(1) एनाल्जेसिक – पीड़ा को कम करने वाली दवाइयाँ– जैसे पैरासिटामोल, एस्प्रिन आदि।

(2) एन्टीपायरैटिक – ज्वर को कम करने वाली दवाइयाँ– जैसे पैरासिटामोल, निमुसुलाइड आदि।

(3) एन्टीएमीबिक – अमीबा जनित अतिसार में प्रयुक्त होने वाली दवाइयाँ – जैसे मेट्रोनिडाजोल, टिनिडाजोल, सेक्निडाजोल आदि।

(4) एन्टीहेल्मींथिक – कृमिनाशक में प्रयुक्त होने वाली दवाइयाँ– जैसे एल्बेन्डाजोल, पायरेन्टल पामायेट, मेबेन्डाजोल आदि।

(5) एन्टीबायोटिक – जीवाणु (बैक्टिरिया), वायरस आदि के खिलाफ प्रयुक्त होने वाली प्रतिजैविक औषधि जैसे–रिफैम्पीसीन, पेनीसिलीन, एमॉक्सिसीलीन, सिप्रोफ्लोक्सासिन, मिकासिन आदि।

(6) एक्सपेक्टोरेन्ट – खाँसी के वेग को घटाने, श्वासनली को चौड़ा करने में सहायक औषधि – जैसे ब्रोमनहेक्सिन, टरब्युटालीन, क्लोरफेनारामिन आदि।

(7) एन्टीमलेरियल – मलेरिया को दूर करने वाली औषधियों को एन्टीमलेरियल कहते हैं – जैसे – क्लोरोक्विन, प्राइमाक्विन, आर्टिथर आदि।

(8) एन्टी–एलर्जिक – वैसी औषधियाँ जो एलर्जी को दूर करती तथा उससे बचाती हैं जैसे– एविल, सेट्रीजिन, फैक्सोफेनाडिन।

(9) न्यूट्रीशनल–सप्लीमेन्ट – इसमें विटामिन, मिनेरल, प्रोटीन पाउडर, ओ.आर.एस. (ORS) ग्लूकोसामिन, एन्टीऑक्सीडेन्ट आदि आते हैं जो हमारे शरीर के लिए आवश्यक पोषक तत्व उपलब्ध कराते हैं।

(10) एन्टीसेप्टिक – शरीर में संक्रमण से बचाव के लिए जिस औषधि का प्रयोग होता है उसे एन्टीसेप्टिक कहते हैं जैसे– डेटॉल, सेवलॉन, स्पिरीट, बीटाडीन आदि।

(11) डिसइन्फेक्टेन्ट – वस्तुओं को संक्रमणमुक्त करने वाली औषधियों को डिसइन्फेक्टेन्ट कहते हैं जैसे– लाइसॉल, क्रिसॉल, फिनाइल, ग्लुटरैल्डिहाइड, फॉर्मेल्डीहाइड।

(12) ब्रोन्कोडायलेटर – श्वसन नली को चौड़ा करने के लिए सहायक औषधियाँ– जैसे– सालब्युटामोल, टरब्युटालीन, एम्ब्रॉक्सल आदि।

इस तरह के दवाइयों की सूची बहुत लंबी है। इसमें कुछ का ही वर्णन ऊपर किया गया है।

पाठगत प्रश्न 6.1

निम्नलिखित के जोड़े मिलाइए–

	(क)		(ख)
1.	एन्टीसेप्टिक	(i)	फिनाइल
2.	एन्टीमलेरियल	(ii)	एमॉक्सिसीलीन
3.	डिसइन्फेक्टेन्ट	(iii)	पैरासिटामोल
4.	एन्टीबायोटिक	(iv)	डेटॉल
5.	एनाल्जेसिक	(i)	क्लोरोक्विन

6.2 एन्टीसेप्टिक एवं रोगाणुनाशी

एन्टीसेप्टिक वे औषधियाँ हैं जो संपर्क में आनेवाले रोगाणुओं के विकास को रोक देती है। इसका प्रयोग हम त्वचा पर कर सकते है। उदाहरण–सेवलॉन, डेटॉल, बीटाडीन, स्पिरीट आदि।

जबकि, रोगाणुनाशी उन औषधियों को कहते हैं जो संक्रमित वस्तुओं और वातावरण में मौजूद रोगाणुओं को नष्ट कर देती हैं। इसका प्रयोग त्वचा पर नहीं करते हैं–क्योंकि यह त्वचा पर बुरा असर डालती हैं। जैसे क्रिसॉल–इसे हम तपेदिक मरीज के कफ पर तथा हैजा रोगियो के मल पर डालते हैं।

स्टरलाइजेशन

इस प्रक्रिया के द्वारा हम बैक्टीरिया व उसके बीजाणुओं को मारते हैं।

स्पोर्स

प्रतिकूल परिस्थितियों में बैक्टीरिया अपने चारों तरफ एक आवरण बना लेता है–जिसके अंदर वह सुरक्षित रहता है फिर अनुकूल समय आने पर प्रस्फुटित होता है।

सूर्य का प्रकाश भी कीटाणुनाशन में बहुत सहायक है। प्राकृतिक निःसंक्रमण के लिए यह बहुत उपयोगी है पर बैक्टीरिया के स्पोर्स सूर्य की किरणों से नष्ट नहीं होते हैं।

उबालना और भाप से किटाणुनाशन

20 मिनट तक पानी उबालने से उसमें तथा उसमें रखे पदार्थ के बैक्टीरिया नष्ट हो जाते हैं। किन्तु बैक्टीरिया के स्पोर्स नष्ट नहीं होते। प्रेशर कुकर के तले में सेपरेटर रखकर भी हम उपकरणों को कीटाणुरहित बनाते हैं। सेपरेटर इसलिए रखते हैं कि उपकरण ताप के सीधे संपर्क में न आये। अस्पताल के अधिकांश उपकरण, कैंची, सिरिन्ज, चाकू, सूई (निडिल) आदि इसी विधि से स्टेरलाइज किये जाते हैं।

उच्च दबाव में उत्पन्न भाप के द्वारा उपकरणों को गरम करने से बैक्टीरिया और स्पोर्स दोनों मर जाते हैं। 15 पौण्ड के दवाब पर 45 मिनट तक स्टेरलाइजेशन अधिकांश बैक्टीरिया को मार देता है। चूँकि, प्रेशर कूकर में स्थान कम रहता है अतः इसी सिद्धांत पर बने विशेष उपकरण ऑटोक्लेव से स्टेरलाइज़ करते हैं।

बड़ा होने के कारण ऑटोक्लेव उपकरण के साथ तौलिया, गाउन, पट्टी, गौज, कॉटन सब स्टेरलाइज हो जाता है।

पाठगत प्रश्न 6.2

रिक्त स्थानों को भरिए–

(i) .... औषधि का प्रयोग त्वचा पर नहीं किया जाता है।

(ii) स्टरलाइज़ेशन एक प्रक्रिया है जिससे ———————— उसके ———————— को नष्ट किया जा सकता है।

(iii) ———————— औषधि हैजा रोगियों के मल पर डालते हैं।

(iv) 15 पौंड के दबाव पर ———————— मिनट तक स्टरलाइज़ेशन से अधिकांश बैक्टीरिया नष्ट हो जाते हैं।

(v) अस्पताल के अधिकांश उपकरण ———————— विधि से स्टेरलाइज़ किए जाते हैं।

6.3 औषधीय प्रतिक्रिया (Drugs Reaction)

दवाइयाँ प्राणरक्षा के लिए अति महत्वपूर्ण हैं, लेकिन उचित औषधि एवं मात्रा का प्रयोग न किया जाए तो यह उतनी ही खतरनाक सिद्ध होती हैं।

अतः इसके इस्तेमाल से पहले इसकी मात्रा, देने का तरीका, कब नहीं देना है, इसके पार्श्व–प्रभाव एवं शरीर के भीतर इसके उपापचय का पूरा ज्ञान होना बहुत आवश्यक है। इसके अलावा बहुत सी औषधियाँ शरीर के भीतर खतरनाक प्रतिक्रिया भी उत्पन्न करती है–जिसका समय पर समुचित उपचार न हो तो व्यक्ति की जान भी जा सकती है।

अतः दवाइयों का प्रयोग उन्हीं लोगों की देखरेख में किया जाना चाहिए जिनको दवाइयों की कम्पोजिशन, उनकी सही मात्रा, उनके दुष्प्रभाव तथा दुष्प्रभाव को नियंत्रित करने का पूर्ण ज्ञान होता है।

मामूली रोजमर्रा की दवाइयाँ– यथा पैरासीटामोल आदि भी व्यक्ति–विशेष में प्रतिक्रिया उत्पन्न कर सकती हैं। अतः दवाइयाँ हमेशा सक्षम व्यक्ति के हाथों ही दी जानी चाहिए, जिन्हें उनके नियमों और निर्देशों की पूरी जानकारी हो तथा वे उसका अनुपालन भी करा सकते हों अन्यथा यह एक दण्डनीय अपराध है।

आइये! हम होने वाली विभिन्न तरह की प्रतिक्रियाओं के बारे में जाने–

(1) तत्काल उत्पन्न प्रतिक्रिया – (Immediate Reaction)

(2) देर से उत्पन्न या लम्बित प्रतिक्रिया – (Delayed Reaction)

(1) तत्काल उत्पन्न प्रतिक्रिया को एनाफाइलैक्टिक रिएक्शन भी कहते हैं। इसके लक्षण हैं–बेचैनी, साँस लेने में कठिनाई, कंपन, त्वचा ठंडापन, रक्तचाप का कम हो जाना–नब्ज का मंद हो जाना। यदि तुरन्त अस्पताल में सही उपचार नहीं किया जाए तो व्यक्ति के जीवन पर संकट आ सकता है– व्यक्ति मर भी सकता है।

प्राथमिक उपचार के बाद उसे तुरन्त अस्पताल ले जायें! ऐसे तो कोई भी दवा व्यक्ति विशेष में एनाफाइलैक्सिस उत्पन्न कर सकती है, पर ज्यादातर रक्त– ट्रांसफ्यूजन के समय, पेनिसिलिन ग्रुप की दवायें, जायलाकेन ग्रुप की दवायें, ये सब ज्यादा प्रतिक्रिया देती हैं। अतः इनका प्रयोग करने के पूर्व सेन्सिटिविटी टेस्ट अवश्य कर लें।

(2) देर से उत्पन्न या लम्बित प्रतिक्रिया **(Delayed Reaction)** – लम्बित प्रतिक्रिया को भी तीन भागों में बाँटते है–

(क) स्थानीय सामान्य प्रतिक्रिया –इसके अन्तर्गत त्वचा पर लाल चकते (Rash) खुजलाहट और नाक में सुरसुराहट महसूस होती है।

(ख) तंत्रीय प्रतिक्रिया – **(Systemic Reaction)** – यह प्रतिक्रिया जीवन के लिए घातक हो सकती है–इसमें शरीर के विभिन्न तंत्र प्रभावित हो सकते हैं–जैसे–नर्वस सिस्टम (स्नायु तंत्र), श्वसन तंत्र, हृदय–तंत्र, उत्सर्जन तंत्र आदि। एक से अधिक तंत्र भी इससे प्रभावित होते हैं।

(ग) तंत्रीय शारीरिक प्रतिक्रिया–इसमें शरीर के अलग–अलग तंत्र अलग–अलग औषधियों से अलग–अलग तरह से प्रभावित होते हैं। जैसे–

(1) इन्टरोक्विनॉल– रेटिना में एट्रॉफी तथा स्थायी क्षति पहुँचा सकती है और शरीर में स्थायी नेत्रहीनता पैदा हो जाती है।

(2) क्लोरोक्विन– हमारे रक्त को नष्ट करती है और हिमोलाइटिक एनिमिया पैदा कर सकती है। प्राइमाक्विन का भी यही प्रभाव है पर यहक्लोरोक्विन से ज्यादा घातक है।

(3) पैरासिटामोल– सामान्यतया यह बहुत सुरक्षित दवा है पर कभी–कभी बेचैनी एवं शरीर पर लाल चकते पैदा करती है।

(4) निमुसलाइड– 6 वर्ष से कम उम्र के बच्चों को नहीं देते है– पर बहुत जरूरी हो तभी इसका प्रयोग करना चाहिए– यह लीवर (यकृत) तथा गुर्दे पर बुरा असर डालती है।

(5) डिक्लोफेनैक टैबलेट– चित्ती (Urticarea) खुजली और बेचैनी पैदा कर सकती है। आमाशय में एसिड उत्पादन बढ़ा देती है तथा म्यूकोसा को भी उद्दीप्त करती है।

इसके अलावा सल्फा ग्रुप की दवा/पेन्सीलिन ग्रुप के एन्टीबायोटिक, सालब्युटामॉल, थियोफाइलीन आदि दवाइयाँ भी अक्सर प्रतिक्रिया उत्पन्न कर सकती है।

अतः इन्हें देते समय सावधानी बरतें तथा देने के बाद कुछ देर तक निगरानी करें! अक्सर प्रतिक्रिया उत्पन्न करने वाली दवाइयाँ बिना डॉक्टर की सलाह के न दें और उसके बाद भी मरीज में होने वाले परिवर्तन पर नजर रखें। इमरजेन्सी में तुरन्त अस्पताल ले जाने का प्रबन्ध करें।

टिप्पणी

औषधि–प्रतिक्रिया के समय स्वास्थ्य कार्यकर्त्ता की भूमिका–

(1) वयस्क को एविल की 25 मि.ग्राम की गोली तथा बच्चे को 10 मि.ग्राम की गोली तत्काल खिला दें। बहुत छोटे बच्चे में दवा की मात्रा उसके वजन के अनुसार और कम दें।

(2) अपने चिकित्सक को वस्तुस्थिति फोन पर बताकर कुछ अन्य दवाइयाँ उनके परामर्श के अनुसार दें।

(3) मरीज को तत्काल निकटस्थ अस्पताल भेजने का प्रबंध करें।

स्वास्थ्य कार्यकर्त्ता क्या न करें–

(1) गंभीर प्रतिक्रिया उत्पन्न करने वाली कोई भी दवा चिकित्सक के सलाह के अनुसार उनके बताये गये डोज में ही दें! अपने मन से नहीं दें।

(2) डेक्सोना का इन्जेक्शन बिना चिकित्सक के परामर्श के न दें।

(3) मरीज की गंभीरता का तत्काल आकलन करें और उन्हें खुद उपचारित करने की कोशिश न करें।

पाठगत प्रश्न 6.3

निम्नलिखित कथनों के सामने सही (✓) या गलत (✗) लिखिए–

(1) निमुसलाइड 6 वर्ष से कम आयु के बच्चों को नहीं देनी चाहिए। ( )

(2) पैरासिटामोल बहुत सुरक्षित दवा है। ( )

(3) क्लोरोक्विन रेटिना में स्थायी क्षति पहुँचा सकती है। ( )

(4) औषधि प्रतिक्रिया के समय व्यस्क को 25 मि.ग्रा. की एविल की गोली तुरन्त खिला देनी चाहिए। ( )

(5) डेक्सोना का इन्ज़ेक्शन बिना चिकित्सक के परामर्श के दिया जा सकता है। ( )

6.6 स्वास्थ्य कार्यकर्ता के पास निम्नलिखित दवाइयाँ और ड्रेसिंग का सामान अवश्य होना चाहिए–

(1) टैबलेट पैरासिटामोल

(2) ORS–जीवन–रक्षक घोल

(3) सिरप/टैबलेट–को–ट्राइमॉक्साजॉल

टिप्पणी

(4) आयरन और फॉलिक–एसिड टैबलेट

(5) क्लारोक्विन टैबलेट

(6) सल्फासिटामाइड टैबलेट

(7) एविल टैबलेट

(8) गॉज

(9) बैंडेज

(10) कॉटन (रूई)

(11) साबुन

(12) जेन्सन' वॉयलेट (GV Paint)

(13) डिस्पोजिवल प्रसूति किट

(14) थर्मामीटर

(15) कैंची

(16) ब्लड–प्रेशर–मशीन (स्फैग्मोमैनोमीटर)

अपने चिकित्सक के परामर्श से आप इनकी संख्या बढ़ा सकते है।

आपने क्या सीखा

इस पाठ में आपने दवाइयों, उनकी मात्रा तथा शरीर पर उनकी प्रतिक्रिया (Reaction) का अध्ययन किया है। अब आप समझ गये होंगे कि सभी दवाइयां एलर्जिक प्रतिक्रिया उत्पन्न करती है। प्रतिक्रिया स्थानीय, सामान्यीकृत, तंत्रीय हो सकती है। प्रतिक्रिया गंभीर भी हो सकती है, ऐसी स्थिति में रोगी को अस्पताल में रैफर करना अति आवश्यक है।

पाठान्त प्रश्न

1. स्वास्थ्य कार्यकर्ता द्वारा सामान्यतः प्रयोग की जाने वाली दवाइयों की सूची तैयार कीजिए!
2. दवाई प्रतिक्रिया (Reaction) क्या है? प्रतिक्रिया उत्पन्न करने वाली दवाइयों के नाम बताइए!
3. निम्नलिखित का अर्थ बताइए –

   क) एनाल्जैसिक   ग) एक्सपैक्टोरेंट

   ख) एन्टीपाइरैटिक

टिप्पणी

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

6.1

1. (iv)
2. (v)
3. (i)
4. (ii)
5. (iii)

6.2

(i) रोगाणुनाशी
(ii) बैक्टीरिया, बीजाणु
(iii) क्रिसॉल
(iv) 45
(v) ऑटोक्लेव

6.3

1. सही
2. सही
3. गलत
4. सही
5. गलत

7

आपातकालीन स्थितियों का प्रबंधन

अनेक बार ऐसी स्थिति सामने आती है जिसमें तुरन्त सही उपचार उपलब्ध न हो तो व्यक्ति की जान को खतरा हो सकता है या स्थायी अपंगता से ग्रस्त हो सकता है। जैसे–सड़क दुर्घटना, छत या पेड़ पर से गिर जाना, लड़ाई–झगड़े में घायल होना, गोली लगना, साँप काटना, कुत्ता काटना या दवाइयों का रिएक्शन होना आदि। ऐसे समय में यदि उसे तत्काल सही चिकित्सा–उपचार उपलब्ध हो जाए तो व्यक्ति की जान बच सकती है, अपंगता कम हो सकती है और आगे का उपचार भी सरल और कम खर्चीला हो जाता है। उपचार के इसी तरीके को आपातकालीन प्रबंधन या इमरजेंसी मैनेजमेन्ट कहते हैं।

आपातकालीन स्थिति का पहला 15 मिनट और आधा घंटा का समय बहुत महत्वपूर्ण होता है। यदि कोई प्रशिक्षित कार्यकर्ता अपने ज्ञान और कौशल का सही उपयोग करता है तो प्रभावित व्यक्ति की न केवल जान बचती है, बल्कि दूसरे अंगो को क्षतिग्रस्त होने से भी हम बचा सकते हैं।

उद्देश्य

इस पाठ के अध्ययन के पश्चात आपः

- आपातकालीन स्थितियों की जानकारी लोगों को उपलब्ध करा सकेंगे;
- आपातकालीन स्थिति से प्रभावित व्यक्ति की जान बचाने में सहायता कर सकेंगे;
- प्रभावित व्यक्ति के अंगों को क्षतिग्रस्त होने से बचाने में मदद कर सकेंगे;

टिप्पणी

4. चिकित्सीय आपात स्थितियों को समुचित संचालन के तरीके तथा जीवन–रक्षक उपायों का उपयोग कर सकेंगे।

5. चिकित्सीय तथा शल्य–चिकित्सीय स्थितियों को दक्षतापूर्वक निपटाने में सहायक हो सकेंगे।

7.1 आपातकालीन स्थितियाँ

(i) डूबना

तैरना न आने के कारण या किसी अन्य वजह से यदि कोई व्यक्ति पानी में डूब जाता है तो पानी उसकी श्वास नली से होते हुए फेफड़े तक पहुँच जाता है। इससे शरीर में वायु (ऑक्सीजन) की कमी हो जाती है–जिसे हाइपोक्सिया कहते हैं। कितनी देर व्यक्ति हाइपोक्सिया में रहा है इस पर निर्भर है कि वह बचेगा या नहीं। कुछ मिनटों के लिए हुई आक्सीजन की कमी भी जानलेवा हो सकती है। इसलिए जल्दी से जल्दी फेफड़ो में एकत्र पानी को निकालने के बाद कृत्रिम श्वसन के सहारे साँस देने की कोशिश करते हैं। यह प्रक्रिया जितनी जल्दी होगी, रोगी के जीवित होने की संभावना भी उतनी ही अधिक होगी।

उपचार मे स्वास्थ्य कार्यकर्त्ता की भूमिका–

जैसे ही डूबे हुए व्यक्ति को पानी से निकालते हैं, तो सबसे पहले उसके मुँह तथा श्वास नली से पानी को निकालते हैं, चाहे तो रूई आदि के सहारे या चूसक–यंत्र (Suction-machine) के सहारे। उसके बाद मुँह से मुँह में श्वसन –क्रिया आरंभ करते हैं। उसके बाहर निकालने और मुँह से साँस देने में शीघ्रता अपेक्षित है। जब डूबा हुआ पीड़ित व्यक्ति साँस लेने लगे तो उसके बाद उसके शरीर में गये पानी को

चित्र 7.1 (क): कृत्रिम श्वसन

टिप्पणी

निकालने का उपाय करते हैं। साँस देते समय उसके मुँह पर रूमाल रख देते हैं ताकि सूक्ष्मजीव प्रवेश न करने पाए।

कृत्रिम श्वसन के लिए पीड़ित व्यक्ति के मुँह को ऊपर की ओर उठाते हैं जैसा चित्र में दिया गया है– इस तरह उसकी श्वास–नली खुल जाती है और साँस देने में सुविधा होती है–नहीं तो मुँह से दी गई हवा, आमाशय में घुस जायेगी। इसके पश्चात् सिर को उसी अवस्था में रख कर पेट पर दवाब डालते हैं ताकि आमाशय में एकत्र पानी मुँह के रास्ते बाहर निकल आए।

ऑक्सीजन तथा अन्य उपचार के लिए पीड़ित को यथाशीघ्र सुविधासम्पन्न अस्पताल पहुँचाने का उपाय करते हैं। मार्ग में कोई परेशानी न हो इसके लिए यदि उपलब्ध हो तो अम्बू–बैग (Ambu-bag) के सहारे श्वास देते हैं जिससे श्वास देना थोड़ा आसान हो जाता है।

क्या न करें

(1) सिर को आगे की तरफ रखकर उपचार न करें।

(2) व्यक्ति साँस लेने भी लगे तो भी तुरन्त अस्पताल ले जायें, स्वयं उपचार करने की गलती न करें।

(3) बिना मुँह और श्वास–नली साफ किए मुँह से साँस न दें।

चित्र 7.2: एम्बूबैग द्वारा कृत्रिम श्वसन

लू लगना (Heat Stroke/ Sun stroke)

भारत के अधिकांश क्षेत्रों में अधिक गर्मी पड़ती है। कई जगहों का तापमान 41°C-45°C तक पहुँच जाता है जो हमारा शरीर नहीं झेल पाता, खासकर छोटे बच्चे, उम्रदराज वृद्ध लोग एवं शराब तथा अन्य नशे के आदी हो चुके कमजोर लोग। बीमारी से कमजोर हो चुके लोग भी अधिक गर्मी नहीं झेल पाते हैं।

लक्षण

(1) तेज बुखार से शरीर लाल हो जाता है तथा छूने पर गरम लगता है।

(2) पीड़ित व्यक्ति बहुत बेचैन रहता है।

(3) उसे साँस लेने में कठिनाई होती है।

(4) उसका रक्तचाप धीरे–धीरे गिरने लगता है और वह बेहोश भी हो जाता है।

उपचार में स्वास्थ्य कार्यकर्त्ता की भूमिका–

पीड़ित व्यक्ति को धूप से हटाकर छायादार ठंडे स्थान पर रखें। उसके सभी कपड़े उतार दें। शरीर पर ठंडा पानी डालें तथा पंखे से तब तक हवा करें जब तक उसके शरीर का तापमान कम न हो जाए। उसे मुँह से भी ठंडा पानी देते रहें। जीवनरक्षक घोल(ORS)उपलब्ध हो तो उसे भी घोलकर तत्काल दें।

जब व्यक्ति ठीक होने लगे यानी राहत महसूस करने लगे तो उसे तत्काल अस्पताल ले जायें ताकि चिकित्सक उसके कारणों का विश्लेषण कर पूरा इलाज कर सकें।

स्वास्थ्य कार्यकर्त्ता क्या न करें–

(1) उपचार में विलम्ब न करें– उपचार मे देरी पीड़ित व्यक्ति के लिए जानलेवा हो सकती है।

(2) चिकित्सक की सलाह के बिना कोई औषधि न दें।

(iii) जलना

जब शरीर की त्वचा किसी कारण से खासकर शुष्क या आर्द्र ताप, भाप, बिजली के कारण जल जाती है तो उसे हम जलना (Burn) कहते हैं।

- आग से जलना
- भाप से जलना
- गरम पानी, दूध, दाल आदि से जलना
- बिजली से जलना
- अम्ल या क्षार से जलना **(Chemical burn)**
- रेडियोधर्मी पदार्थों से जलना
- गरम औजार से जलना

त्वचा का कितना हिस्सा जला है, उसके अनुसार भी हम जलने के प्रकार को वर्गीकृत करते हैं–

(1) प्रथम डिग्री – जब केवल ऊपरी एपिडर्मिस जलता है–उस पर फफोले नहीं पड़ते। त्वचा लाल हो जाती है।

(2) द्वितीय डिग्री – इसमें एपिडर्मिस तथा डर्मिस दोनों क्षतिग्रस्त होते हैं। इसमें त्वचा पर फफोले बन जाते हैं।

(3) तृतीय डिग्री – इसमें एपिडर्मिस एवं डर्मिस के साथ उसकी भीतरी संरचना यानी –उपत्वकीय ऊतक, उसको आपूरित करने वाली रक्त–धमनियाँ तथा स्नायु, मांस आदि भी जल जाते हैं।

उपचार में स्वास्थ्य कार्यकर्त्ता की भूमिका–

(1) सबसे पहले यह निर्धारित करें कि शरीर का कितना प्रतिशत हिस्सा जला है तथा जलन किस डिग्री का है। इससे उपचार के तरीके का निर्धारण आसान हो जाता है।

(2) जले हिस्से के ऊपर ठंडा पानी तब तक डालते रहें, जब तक व्यक्ति को हो रही जलन कम न हो जाए।

टिप्पणी

(3) फफोलों को न फोड़ें। यदि फफोले फूट गये हों या खुद फूट जाएं तो उस पर सिल्वर–सल्फा डायजिन का मरहम लगाएं। यदि तत्काल यह मरहम उपलब्ध न हो तो उसपर जेंशन–वायलेट लगाएं तथा पट्टी कर दें। पट्टी करने से बाहरी संक्रमण उसे संक्रमित नहीं कर पायेगा।

(4) मरीज को भरपूर मात्रा में पानी, ग्लूकोज और जीवन रक्षक घोल (ORS) पिलाएं तथा उपचार के लिए आगे भेजने की तैयारी करें।

(5) अम्ल या क्षार या अन्य रसायनों से जले त्वचा पर पानी खूब डाले ताकि अम्ल या क्षार पानी के साथ तनु होकर बाहर निकल जाए–फिर घाव पर मरहम लगाकर पट्टी कर दें।

(6) दुर्घटनावश अम्ल या क्षार से यदि आँखों में जलन होने लगती है, ऐसी स्थिति में आँख को ठंडे पानी से तब तक धोएं जब तक जलन कम न हो जाये फिर क्लोरोम्फैनिकॉल, जेन्टामाइसिन या सिफ्रोफ्लॉक्सासिन आई–ड्राप आँख में बारंबार डालें ताकि सेकेन्डरी इन्फेक्शन से बचा जा सके।

(7) मरीज को यथाशीघ्र सुविधासंपन्न अस्पताल में भेजने की व्यवस्था करें।

स्वास्थ्यकर्त्ता क्या न करें

(1) फफोले जीवन और त्वचा के रक्षक हैं–ये जबतक खुद न फूट जाएं इन्हें फोड़ने की कोशिश न करें।

(2) कितना प्रतिशत जला है–इसके आधार पर यह फैसला करते हैं कि कितना सेलाइन देना है अतः चिकित्सक के परामर्श के बिना सेलाइन चढ़ाने की गलती न करें।

(3) जलने के शुरुआत में एन्टीबायोटिक का कोई रोल नहीं है अतः एन्टीबायोटिक न दें।

(iv) साँप काटना (Snake bite)

साँप काटने से प्रतिवर्ष लगभग 20,000 लोग मर जाते हैं। भारत के जंगलों और गाँवों में अनेक प्रकार के साँप की प्रजातियाँ पाई जाती हैं–इसमें जहरीले साँपों की मुख्यतः तीन ही प्रजाति भारत में मिलती हैं– वे हैं– कोबरा (गेंहुअन या नाग), क्रैत तथा वायपर। भारत में लगभग 200 तरह के साँप पाये जाते हैं।

चित्र 7.3: (क) जहरीला सर्प दंश (ख) काटने का निशान (ग) पट्टी बांधने का तरीका

सही समय पर सही उपचार के सहारे हम बहुत से लोगों को बचा सकते हैं। दुर्भाग्य से आज भी गाँवों में उपचार की बजाय झाड़–फूँक, टोटका आदि का ज्यादा प्रचलन है।

उपचार में कार्यकर्त्ता की भूमिका–

(1) जहाँ पर साँप ने काटा है उस हिस्से को तत्काल साबुन और पानी से अच्छी तरह साफ कर लें।

(2) रक्त के द्वारा जहर का फैलाव कम से कम हो, इसके लिए काटे हुए जगह से 2–3 इंच ऊपर एक बैंडेज लगा दें ताकि उसके जहर का रक्त–प्रवाह अवरूद्ध हो जाए।

(3) रक्त–प्रवाह–अवरोधक बन्धन (बैंडेज) को 45 मिनट से अधिक समय तक न बाँधें वरना गैंग्रीन तथा अन्य समस्या पैदा हो सकती है। उसे बीच–बीच में रक्त संचार बनाए रखने के लिए थोड़े समय के लिए खोल दें और फिर बाँध दें।

(4) सर्पविषरोधी औषधि (Anti-Snake-Venom) के लिए पीड़ित को तत्काल अस्पताल लेकर जायें।

(5) काटे हुये हिस्से को साफ करने के बाद आयोडीन–सोल्युशन से भी साफ कर लें।

(6) पीड़ित व्यक्ति को आश्वस्त करें कि वह ठीक हो जायेंगे– उसे चाय, काफी, दूध आदि चीजें–पीने के लिए दें।

स्वास्थ्य कार्यकर्त्ता क्या न करें

(1) रक्तरोधी बैंडेज को 45 मिनट से अधिक बँधा हुआ न छोड़े।

(2) झाड़फूँक, टोना–टोटका को प्रोत्साहित न करें।

(3) प्राथमिक उपचार के अलावा आगे इलाज करने का प्रयास न करें। उसे सीधे जल्दी से जल्दी अस्पताल ले जायें।

(v) बुखार/ज्वर (fever)

सामान्यतया शरीर का तापमान 98.4°F या 37°C रहता है। उससे अधिक तापमान को ज्वर या फीवर कहते हैं। बहुत से बैक्टीरिया, वायरस या परजीवी संक्रमण के बाद व्यक्ति को ज्वर से आक्रान्त होते हुए देखा गया है। तापमान यदि 103°F या अधिक हो जाए तो उसका तत्काल समाधान जरूरी है। वरना बच्चों में दौरे (Convulsions) तथा व्यस्कों में भी कई परेशानियाँ पैदा हो सकती हैं। तापमान जैसे–जैसे ऊपर जाता है– डायरिया तथा मस्तिष्क क्षति की संभावना भी बढ़ती जाती है। 105° F से ऊपर का बुखार व्यक्ति के मृत्यु का कारण भी बन सकता है। इसका तत्काल प्रबंधन बहुत जरूरी है। सामान्यतया जिन कारणों से तेज बुखार हुआ करता है वे हैं–

(1) मलेरिया, श्वासनली का संक्रमण, निमोनिया।

(2) डेंगू, चिकनगुनिया, जापानी इन्सेफ्लाइटिस, कालाजार आदि।

(3) लू लगना (Heat Stroke/Sun stroke)

ज्वर को थर्मामीटर से मापते हैं थर्मामीटर में चिह्न बने होते हैं। इसे जीभ के नीचे या काँख में लगाते हैं। सामान्यतया इसमें 94°F से 110°F तक का चिह्न बना होता है। अब तो डिजीटल थर्मामीटर भी आ गया है–जिससे ज्वर का मापना और आसान हो जाता है।

उपचार में स्वास्थ्य कार्यकर्त्ता की भूमिका–

(1) मरीज के शरीर को ठंडे पानी से लगातार पोछें। मरीज के सभी कपड़े उतारकर तथा पंखे से हवा करके ठंडा करें। माथे पर ठंडे पानी की पट्टी रखें।

(2) ज्वर कम करने के लिए पैरासीटामोल का सिरप, गोलियाँ या इन्जेक्शन दें।

(3) मरीज को तत्काल अस्पताल ले जाएं ताकि उसका सही निदान और उपचार हो सके।

स्वास्थ्य कार्यकर्त्ता क्या न करें

(1) पूर्ण जानकारी के बिना अंदाज से ही मरीज को एन्टीबायोटिक दवाइयाँ न दें। चिकित्सक से सलाह के उपरान्त ही कोई दवा दें।

(2) पैरासिटामोल का इन्जेक्शन भी चिकित्सक की सलाह के बिना न दें।

(vi) दौरे/मिर्गी (Convulsions)

बहुत बार ऐसा होता है कि व्यक्ति बेहोशी या अर्धबेहोशी की अवस्था में अपने हाथ–पैरों में झटकेदार–कंपन करता है। इसे कनवल्शन या दौरा कहते हैं। बहुत सारी बीमारियाँ ऐसी हैं जिनमें ये झटके (Convulsions) एक लक्षण के रूप में प्रकट होते हैं। कभी–कभी दौरे के साथ मुँह से झाग आने लगता है तथा दाँतों से जीभ कट जाती है तो मुँह से खून भी बहने लगता है।

बीमारियाँ जिनमें दौरे पड़ते हैं–

(1) बच्चों में उच्च ज्वर (High Fever) में। राउन्ड वर्म का संक्रमण हो तो भी कभी–कभी बच्चों में झटके आते हैं।

(2) मस्तिष्कीय मलेरिया, इन्सेफेलाइटिस, मेनिन्जाइटिस, दिमागी तपेदिक, ब्रेन–ट्यूमर, एपिलेप्सी आदि में भी ऐसे झटके (Convulsion) आते हैं।

(3) बहुत से मनोवैज्ञानिक कारणों जैसे हिस्टीरिया आदि में भी झटके आते हैं।

(4) गर्भावस्था में उच्च रक्तचाप की स्थिति में भी झटके आते हैं।

(5) मस्तिष्काघात (Head Injury) में भी बहुत लोगों को कनवल्शन एक लक्षण के रूप में प्रकट होता है।

उपचार स्वास्थ्य कार्यकर्त्ता की भूमिका–

(1) दौरे के दौरान मरीज की श्वास–नली साफ रहे, यह ध्यान रखना जरूरी है– नहीं तो उल्टी और झाग, श्वास–नली में पहुँच कर श्वास में अवरोध पैदा करता है और अगर ध्यान न दिया जाय तो जानलेवा भी हो सकता है।

(2) जीभ कटने से बहुत खून बह सकता है और यह भी श्वास–नली में अवरोध पैदा कर सकता है– इस पर तुरन्त ध्यान देना जरूरी है।

(3) यदि दौरे (Convulsions) के साथ कोई और बीमारी भी जुड़ी हो तो उसे तुरन्त अस्पताल भेज दें।

(4) रोगी को प्राथमिक उपचार के बाद चिकित्सक की सलाह और अन्य उपचार के लिए शीघ्र अस्पताल भेज दें।

(vii) पेट दर्द (Abdominal Pain)

पेट दर्द किसी एक कारण से नहीं होता। इसके अनेक कारण हैं। अपच से लेकर पैन्क्रिएटाइटिस जैसी जानलेवा बीमारियाँ इसका कारण हो सकती हैं। अतः हर पेट दर्द को गंभीरता से लेने की जरूरत है। यदि पेट दर्द की दवाइयों से आराम न मिले तो तत्काल चिकित्सक के सहारे सही निदान (Diagnosis) तक पहुँचने की जरूरत है। निदान और उपचार में देर, कभी–कभी जानलेवा भी हो सकता है।

आइए! पेट दर्द के कुछ आम कारणों के बारे में जानें–

पेट दर्द के कारण

(1) अमाशय में गड़बड़ी –गैस्ट्राइटिस, पेप्टिक अल्सर, एसीडिटी।

(2) आंत की गड़बड़ियाँ – कृमि–संक्रमण, एपेन्डिसाइटिस, आंत्रावरोध, हर्निया, अमीबिक संक्रमण आदि।

(3) लीवर और पित्ताशय – पित्ताशय में घाव, हिपेटाइटिस, पित्ताशय या पित्त–नली में पथरी, ट्यूमर आदि।

(4) किडनी या मूत्र–नली में पथरी, संक्रमण, शोथ आदि।

(5) गर्भशाय–तंत्र– अंडाशय में सिस्ट, डिम्बनली में संक्रमण, गर्भ, गर्भाशय में संक्रमण, ट्यूमर आदि।

इसके अलावा भी अनेक कारण हैं जिसके कारण पेट–दर्द होता है इसकी ठीक से पहचान कर शीघ्र उपचार जरूरी है– अन्यथा व्याधि घातक रूप धारण कर सकती है।

कभी–कभी पेट में चोट लगने से, आंत में छिद्र हो जाने से तीव्र उदर शूल होता है। जिसका तुरन्त ऑपरेशन आवश्यक होता है। अन्यथा स्थिति घातक हो सकती है।

लक्षण

(1) पेट में तेज दर्द।

(2) उल्टी (वमन)।

(3) बॉवेल–साउण्ड (Bowel Sound) का सर्वथा अभाव।

(4) पेट फूलकर सख्त हो जाना।

(5) आंत में किसी तरह का कोई प्रचालन (मूवमेन्ट) नहीं मिलता है।

उपचार में स्वास्थ्य कार्यकर्त्ता की भूमिका–

(1) सबसे पहले रोगी को मुँह से कुछ भी देने से मना कर दें।

(2) यथाशीघ्र योग्य चिकित्सक के पास या अस्पताल भेज दें। जहाँ एक्सरे, अल्ट्रासाउण्ड आदि की मदद से बीमारी का सही और शीघ्र निदान हो सके और तदनुसार उपचार किया जा सके।

(3) यह सुनिश्चित करें कि अस्पताल से ठीक होकर लौटने के बाद व्यक्ति, दवा, परहेज, खान–पान का सही पालन कर रहा है।

(viii) शिराघात (Head Injury)

प्रायः दुर्घटना के बाद सिर में चोट लगले के साथ मरीज आता है। यह दुर्घटना चाहे सड़क दुर्घटना के कारण हो, गिरने से हो या कि लड़ाई–झगड़े में लगी हुई चोट हो। मस्तिष्क के अंदर चोट है या बाहरी, इसे हम कई लक्षणों और जाँच–पड़ताल से पता करते हैं–

चित्र 7.4: शिराघात

(1) सिर में तेज पीड़ा तथा चक्कर आना।

(2) उल्टी या वमन की इच्छा।

(3) नाक या कान से रक्त या तरलीय स्राव का आने लगना।

(4) थोड़े समय के लिए बेहोशी।

(5) पूर्ण बेहोशी (लगातार)

(6) एकाग्रता में, फैसला करने में, स्मरण करने में या चलने फिरने में गड़बड़ी।

(7) दौरे पड़ना (Convulsion)

स्वास्थ्य कार्यकर्त्ता की भूमिका–

लक्षण चाहे जो हो, सिर में चोट (शिराघात) एक गंभीर स्थिति है। पीड़ित व्यक्ति को ले जाने, उठाने में सावधानी रखनी है। गरदन में कॉलर लगाकर कम झटके के साथ शीघ्रातिशीघ्र अस्पताल भेजने की व्यवस्था करनी चाहिए।

स्वास्थ्य कार्यकर्त्ता क्या न करें?

(1) शिराघात के रोगी को बहुत सावधानी से गर्दन में कॉलर लगाकर उठाएं। जल्दी अस्पताल पहुँचाने की जल्दी में मस्तिष्क या गरदन को झटका न दें। इससे मरीज की स्थिति और भी बिगड़ सकती है।

(2) मरीज को घर ही में रखकर देखभाल करने की भूल न करें।

पाठगत प्रश्न 7.1

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए –

1 डूबने वाले व्यक्ति को तत्काल ––––––– श्वसन की आवश्यकता होती है।

2 उच्च ज्वर को शरीर पर ––––––––– डालकर नियंत्रित किया जाता है।

3 सिर की चोट की स्थिति में ––––––––––– से कुछ नहीं दिया जाना चाहिए।

4. साँप काटने पर रक्तरोधी बैंडेज को––––––––– मिनट से अधिक बँधा हुआ न छोड़ें।

5. गर्भावस्था में उच्च रक्तचाप की स्थिति में भी ––––––––– आ सकते हैं।

(ix) अस्थिभंग (Fracture)–

जब शरीर की कोई हड्डी दो या दो से अधिक भागों में टूट जाती है जिससे उसकी संरचनात्मक गुणों में व्यवधान उत्पन्न हो जाता है तो उसे अस्थिभंग कहते हैं। उसकी सामान्य संरचना में बदलाव आ जाता है। अगर, पैर की हड्डी टूटी है तो उस पैर के कार्य बाधित हो जाते हैं।

चित्र 7.5: यौगिक (संयुक्त) फ्रैक्चर

अस्थिभंग के प्रकार–

(1) **सामान्य अंस्थिभंग** – इसमें शरीर के किसी भाग की हड्डी दो या दो से अधिक भाग में टूट जाती है, किन्तु बाहरी त्वचा क्षतिग्रस्त नहीं होती। हड्डी भीतर ही भीतर टूट जाती है।

(2) **यौगिक या कंपाउंड फ्रैक्चर** – इस तरह के फ्रैक्चर में हड्डी दो या अधिक भाग में तो टूटती ही है साथ ही साथ आसपास की मांसपेशियों और त्वचा को क्षतिग्रस्त करके बाहरी वातावरण के संपर्क में आ जाती है। इस तरह का फ्रैक्चर खतरनाक होता है, क्योंकि बाहरी वातावरण में मौजूद बैक्टीरिया से संक्रमित होने का खतरा बढ़ जाता है।

(3) **जटिल या कंप्लीकेटेड फ्रैक्चर** – यदि फ्रैक्चर के साथ आसपास के शिरा, धमनी या स्नायुतंत्र भी क्षतिग्रस्त होते हैं तो इसे कंप्लीकेटेड या जटिल फ्रैक्चर कहते हैं।

टिप्पणी

(4) **कम्युटेड फ्रैक्चर** – जब हड्डी अनेक भागों में चूर–चूर हो जाती है तो उसे कम्युटेड फ्रैक्चर कहते हैं।

(5) **डिप्रेस्ड फ्रैक्चर** – जब सिर की हड्डी में चोट लगती है तो कपाल–अस्थि टूटकर नीचे की ओर धंस जाती है तो उसे डिप्रेस्ड फ्रैक्चर कहते हैं।

(6) **ग्रीन स्टिक फ्रैक्चर** – बच्चों की हड्डी मुलायम होती है। यह टूटने पर भी मुलायम बाँस की छड़ी की तरह मुड़कर रह जाती है। इसे ग्रीन स्टिक फ्रैक्चर कहते हैं।

हड्डी टूटने के लक्षण–

(1) टूटी हुई हड्डी के ऊपर और भीतर की संरचना विरूपित हो जाती है– सामान्य बनावट से उसकी बनावट बदल जाती है।

(2) हड्डी टूटने की जगह के आस–पास सूजन बढ़ जाती है।

(3) यदि उसके आसपास की त्वचा भी कट–फट गई हो तो उसे कंपाउंड फ्रैक्चर कहते हैं।

(4) प्रभावित भाग का एक्स–रे कराने से टूटा हुआ भाग तथा उसका विस्थापन स्पष्ट दिखता है।

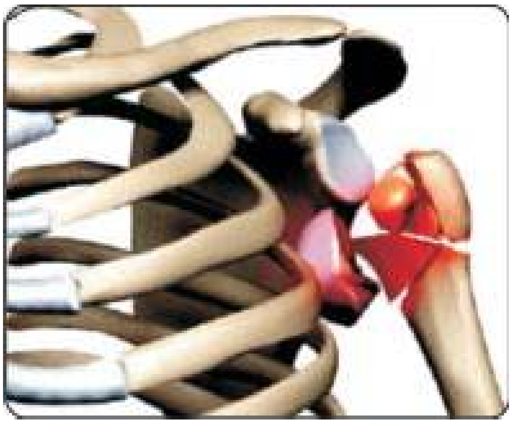

चित्र 7.6: कंधे का विस्थापन

(5) यदि टूटे हुये क्षेत्र के आसपास रक्त–स्राव ज्यादा हो रहा हो तो इसका अर्थ है शिरा या धमनी भी क्षतिग्रस्त हुई है और यदि मोटर और संसरी फंक्शन (गति और संवेदी कार्य) भी बन्द हो तो इसका अर्थ है कि स्नायु–तंत्र भी क्षतिग्रस्त हुआ है।

उपचार में स्वास्थ्य कार्यकर्त्ता की भूमिका–

(1) सामान्य फ्रैक्चर में – प्राथमिक उपचार के रूप में खपच्ची या स्प्लिंट के सहारे उस अंग को सीधा करके बाँध देते हैं ताकि उसका मूवमेन्ट रूक जाए। इससे हड्डी और अधिक विस्थापित नहीं हो पाती एवं दर्द कम हो जाता है। और, आसपास के दूसरे ऊतक और क्षतिग्रस्त

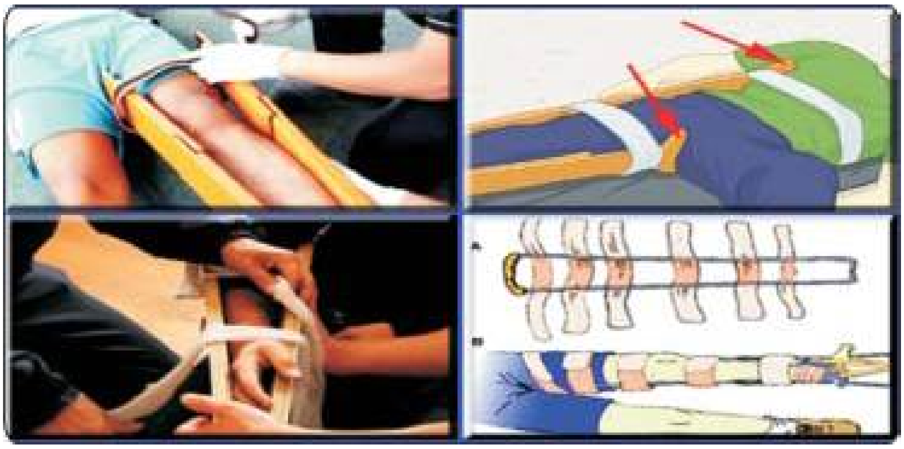

चित्र 7.7: फ्रैक्चर में खपच्ची का प्रयोग

होने से बच जाते हैं। खपच्ची–सपाट लकड़ी के टुकड़े या छड़ी या अन्य चीजों से बनाते है और उसके साथ प्रभावित अंग को बाँध देते हैं।

(2) संयुक्त फ्रैक्चर या कंपाउंड फ्रैक्चर में – सबसे पहले कटे–फटे हिस्से का एन्टीसेप्टिक ड्रेसिंग करते हैं फिर उसके बाद खप्पची या स्प्लिंट के सहारे गतिशून्य करके (Immobilize) करके शीघ्रातिशीघ्र अस्पताल भेजने की तैयारी करते हैं।

(3) जटिल फ्रैक्चर में – यदि तीव्र रक्तस्राव हो रहा हो तो प्रेशर बैंडेज से पहले रक्तस्राव बन्द करते हैं, फिर खपच्ची या स्प्लिंट के सहारे इमोबलाइज करके शीघ्र अस्पताल भेजने की व्यवस्था करते हैं।

(4) अन्य सभी तरह के फ्रैक्चर में एकमात्र उपाय यही है कि उसे यथाशीघ्र सुरक्षित अस्पताल भेज दें, जहाँ एक्सरे आदि जाँच के बाद विशिष्ट उपचार किया जा सके। अस्पताल भेजने में जितनी शीघ्रता हो उतना अच्छा है, क्योंकि समय के साथ अनेक जटिलतायें उत्पन्न होने लगती हैं।

अस्थिभ्रंश (Dislocation)

प्रायः यह स्थिति जोड़ों में उत्पन्न होती है। चोट लगने के कारण जोड़ की हड्डी अपने स्थान से हटकर अलग हो जाती है, जिससे जोड़ का कार्य नहीं हो पाता और जबरन चलाने पर तीव्र पीड़ा होती है।

खपच्ची (Splint) लगाकर मरीज को यथाशीघ्र अस्पताल भेजने की व्यवस्था करनी चाहिए ताकि उसका विशिष्ट उपचार किया जा सके।

पाठगत प्रश्न 7.2

निम्नलिखित के जोड़े मिलाइए–

	(क)		(ख)
1.	यौगिक फ्रैक्चर	(i)	हड्डी का दो या दो से अधिक भाग में टूटना
2.	ग्रीन स्टिक फ्रैक्चर	(ii)	हड्डी टूटने के साथ शिरा, धमनी या स्नायुतंत्र की भी क्षति
3.	सामान्य फ्रैक्चर	(iii)	कपाल अस्थि का टूट कर नीचे की ओर धसना
4.	जटिल फ्रैक्चर	(iv)	हड्डी के टूटने के साथ त्वचा व मांसपेशियों की भी क्षति
5.	डिप्रेस्ड फ्रैक्चर	(v)	हड्डी का अनेक भागों में चूर–चूर होना
6.	कम्युटेड फ्रैक्चर	(vi)	हड्डी टूटने पर भी मुलायम बाँस की छड़ी की तरह मुड़ना

(x) विषपान (Poisioning)

विष वह पदार्थ है जिसके प्रभाव से व्यक्ति की शारीरिक क्रियाओं में अवरोध या विकार उत्पन्न होता है। शरीर की आवश्यक क्रियाओं में अवरोध से व्यक्ति की मृत्यु हो सकती है। विष कई प्रकार के होते हैं और सब अलग–अलग तरीके से शरीर को प्रभावित करते हैं। आमतौर से प्रयोग में आनेवाले विभिन्न विषों की सूची नीचे दी जा रही है–

(1) फॉल्लिडॉल– टिक–20

(2) कैरोसिन या मिट्टी का तेल

(3) डेटॉल

(4) फिनाइल

(5) हार्पिक

(6) कनेर का फल

(7) सल्फ्यूरिक एसिड/हाइड्रोक्लोरिक एसिड

(8) कॉर्बन मोनोक्साइड का अन्तःश्वसन

(9) मच्छर मारने, चूहा मारने की दवा

(10) सभी कीटनाशक (इन्सेक्टीसाइड्स) और पेस्टिसाइड्स

(11) सल्फॉस

(12) नींद की गोलियों की अधिक मात्रा

(13) पोटैशियम सायनाइड आदि।

पहचान और लक्षण

अलग–अलग जहर का शरीर पर अलग–अलग असर होता है–सबका विस्तृत वर्णन यहाँ संभव नहीं है। पर, इन बातों से जहर की पहचान करने में आसानी होती हैं–

(1) मरीज के साथ व्यक्ति या मरीज खुद यदि होश में है तो खाये या खिलाये गये जहर के बारे में बता सकता है कि उसने कौन सा ज़हर खाया/पिया है।

(2) ज्यादातर मरीज– ऑरगेनोफोस्फोरस ग्रुप के जहर जो आमतौर पर इन्सेक्टीसाइड्स या पेस्टीसाइड्स के रूप में, चूहा मारने आदि में प्रयुक्त होते हैं, का प्रयोग करते हैं। इसमें आँखों की पुतलियाँ सिकुड जाती हैं– मुँह से झाग तथा फेफड़ों में अधिक स्राव होते हैं।

(3) सेल्फास, एसिड या क्षारीय विष के सेवन से पेट में लहर–जलन की शिकायत प्रमुख रहती है।

(4) मुँह से या उल्टी से आने वाले पदार्थ की खास गंध, खास विष की पहचान कराने में सहायक है।

(5) उल्टी से निकलने वाले पदार्थ की जाँच से विष–विशेष का पता चलता है।

उपचार में स्वास्थ्य कार्यकर्त्ता की भूमिका–

(1) जहर कोई भी हो, सबसे पहले उसे यथाशीघ्र शरीर से बाहर निकालने का यत्न करते हैं। इसके लिए वमन कराते हैं तथा पेट में पाइप डालकर नमक–पानी के सहारे आमाशय की पूरी तरह सफाई का प्रयास करते हैं। इस वमन को जाँच के लिए भेजते हैं तथा आमाशय को पूरी तरह साफ कर देते हैं। मरीज बेहोश हो तो यथाशीघ्र अस्पताल ले जाना चाहिए ताकि उसका उपचार किया जा सके। आमाशय सफाई का विशेष उपाय भी अस्पताल में ही संभव है। सभी ऑर्गेनोफास्फोरस ग्रुप के विष में यह उपाय जरूरी है।

(2) मिट्टी का तेल यानी कैरोसिन तेल पीने वालों को ब्रोन्कोन्यूमोनिया का खतरा अधिक रहता है। ऐसी स्थिति में बचाव के लिए ऑक्सीजन और एन्टीबायोटिक का प्रयोग करते हैं।

(3) क्षार पदार्थों का सेवन किये हुए मरीज को पानी के साथ थोड़ा सिरका मिलाकर उसे निष्प्रभावित करते हैं और यदि अम्लीय पदार्थ लिया गया है तो पानी के साथ सोडियम बाइकार्बोनेट देते हैं जिससे उसका अम्लीय प्रभाव निष्प्रभावित हो जाता है।

(4) फिनाइल या डेटॉल पीने वाले को पानी की अधिक मात्रा देकर उसे तनु बनाते हैं– जिससे आहार–नाल और आमाशय की क्षति कम से कम हो। प्रायः बच्चे इसके शिकार होते हैं।

प्राथमिक उपचार के बाद जल्द से जल्द मरीज़ को अस्पताल भेजने या पहुँचाने का उपाय करें ताकि मरीज को कम से कम नुकसान के साथ बचाया जा सके।

स्वास्थ्य कार्यकर्त्ता क्या न करें

(1) ज़हर खाये हुये मरीज की स्थिति में सामयिक सुधार हो तो भी उसका इलाज स्वयं न करें। (उसे तत्काल अस्पताल भेजें)।

(2) ज़हर खाए हुए मरीज के इलाज के साथ पुलिस को भी खबर करें! उसे छुपाने की कोशिश न करें।

(3) अस्पताल में और चिकित्सक को किये गये उपचार की पूरी जानकारी दें! कुछ भी छुपाएं नहीं।

(xi) लकवा ग्रस्त रोगी की देखरेख

लकवाग्रस्त (paralysed) रोगी की व्यक्तिगत स्वच्छता बनाए रखने के लिए गहन परिचर्या की आवश्यकता होती हैं। यदि उचित स्वच्छता न रखी गई तो विभिन्न प्रकार की जटिलताएं जन्म ले सकती हैं, जिनके कारण रोगी के ठीक होने में अधिक समय लगता है। आपको यह पता होना चाहिए कि –

1 यदि संस्थागत परिचर्या उपलब्ध न हो तो लकवाग्रस्त रोगियों की देखरेख कैसे की जानी चाहिए।

भारतीय प्राथमिक चिकित्सा परिषद

FIRST AID COUNCIL OF INDIA

Delhi Off. : 95/1, Indraprastha Bhawan, G.T. Road,
Opposite Shahdara Bus Depot, Shahdara, Delhi-110032
www.faci.ind.in | E-mail : info@faci.ind.in